चिखलदरा शिविर

(चिखलदरा शिविर के प्रवचन -- पांच प्रवचनों का संकलन, शायद किसी अन्य शीर्षक से प्रकाशित हुए हों)

प्रवचन-क्रम

पहला प्रवचन

जो दिखाई पड़ जाए, उसका जीवन में प्रवेश हो जाता है। वह भी उतना महत्वपूर्ण नहीं है। उससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण है कि जो जीवन में प्रविष्ट हो, वह आरोपित, जबरदती, चेष्टा और प्रयास से न हो, बल्कि ऐसे ही सहज हो जाए, जैसे वृक्षों में फूल खिलते हैं, या सूखे पत्ते हवाओं में उड़ जाते हैं, या छोटे-छोटे तिनके और लकड़ी के टुकड़े नदी के प्रवाह में बह जाते हैं। उतना ही सहज जीवन में उसका आगमन हो जाए, वह तो तीन दिनों में मैं चर्चा करूंगा, उसे आप समझने और सोचने की दिशा में सहयोगी बनेंगे। अभी आज की रात तो कुछ बहुत थोड़ी सी काल्पनिक बातें मुझे कहीं। लेकिन इसके पहले की मैं यह बातें करूं, यह भी आपसे निवेदन कर दूं। साधारणतया जो लोग भी धर्म और साधना में उत्सुक होते हैं, वे सोचते हैं, कि बहुत बड़ी-बड़ी बात करना महत्वपूर्ण है। मेरी दृष्टि भिन्न है, जीवन बहुत छोटी-छोटी बातों से बनता है, बड़ी बातों से नहीं और जो व्यक्ति भी बहुत बड़ी-बड़ी बातों की महत्ता के संबंध में गंभीर हो उठा है, वह महत्वपूर्ण से वंचित रह जाता है, अक्सर वंचित रह जाता है। उसे यह बात नहीं दिखाई पड़ पाती कि बहुत छोटे-छोटे तथ्यों से मिलकर जीवन बनता है।

परमात्मा और आत्मा और पुनर्जन्म और इस तरह की सारी बातें, धार्मिक लोग ही करते हैं। लेकिन बहुत छोटे-छोटे जीवन के तथ्य हैं, दृष्टियां और हमारी सोचने और जीने के ढंग उनके ख्याल में नहीं होते और तब वही बातें हवा में अटकी रह जाती है और जीवन के पहलू, जिस भूमि पर खड़े हैं, उस भूमि में कोई परिवर्तन नहीं होगा। कुछ छोटी-छोटी थोड़ी सी बातों के संबंध में आज की रात कहना चाहूंगा, अगर उनको थोड़ा ध्यान देंगे, तो आने वाले तीन दिनों में कुछ गहरा काम भी हो सकता है। इसके पहले कि मैं बात शुरू करूं; छोटी सी कहानी कहूं, शायद उस कहानी के आधार पर पूरी चर्चाएं हो जाए।

दो मित्र पृथ्वी के परिक्रमा के लिए निकले। उन्होंने चाहा और आकांक्षा की हम सारी पृथ्वी को घूम डाले और देख डाले और जीवन के विविध रूपों को अनुभव करें और जीवन में जो अनुभव की संपदा है, उसे पकड़ें। लेकिन एक मित्र अंधा था, बड़ी दया की दूसरे मित्र ने कि वह उसका हाथ पकड़ कर उसे सारी पृथ्वी घुमाने के लिए राजी हुआ था। अंधा आदमी अपनी लकड़ी टेक कर और मित्र का सहारा लेकर यात्रा शुरू की, लेकिन थोड़े ही दिनों में अड़चनें आनी शुरू हुई। दूर से मित्र बने रहना एक बात है, और लंबी यात्रा में सहयोगी और साथी होना बिल्कुल दूसरी। बहुत सी कठिनाइयां आनी शुरू हो गई, छोटी-छोटी बातों में उपद्रव और विरोध शुरू हो गया, कटुता आनी शुरू हो गई। पृथ्वी बड़ी थी, परिक्रमा बहुत बड़ी थी। थोड़े ही दिनों में दोनों के बीच मनमुटाव गहरा हो गया। एक रात दोनों एक रेगिस्तान में सोए, बहुत सर्द और ठंडी रात थी। सुबह जैसे ही अंधे मित्र की आंख खुलीं, उसने टटोलकर अपनी लकड़ी ढूंढनी चाही, जिसे वह रात रखकर सो गया था। उसके हाथ में लकड़ी आ भी गई, देखकर वह हैरान हुआ, जो लकड़ी उसके हाथ में आई थी, वह बहुत चिकनी साफ-सुथरी, बहुत सुंदर मालूम हो रही थी। वह हैरान हुआ कि यह लकड़ी कहां से आ गई, उसकी लकड़ी तो बहुत साधारण खुरदुरी थी। उसी लकड़ी से उसने अपने आंखों वाले मित्र को हिलाया और जगाया और कहा कि उठो! सुबह हो गई और पक्षी गीत गाने लगे और मुर्गों ने बांगे दे दी है और अच्छा होगा कि हम जल्दी यात्रा पर निकल जाए, इसके पहले की सूरज चढ़े और धूप बढ़ जाए। आंख वाले मित्र ने आंख खोली, वह घबड़ाकर दूर खड़ा हो गया और उसने अपने अंधे मित्र से कहा कि मित्र तुम जो लकड़ी हाथ में लिए हो, वह लकड़ी नहीं है, कृपा करके उसे जल्दी छोड़ दो। वह रात में सर्दी में ठिठुर गया एक सर्प और तुम उसे पकड़े हुए हो। लेकिन उस अंधे आदमी ने

कहा, अब तो हद हो गई, मेरे पास आंखें नहीं है, यह तो मैं समझता हूं, लेकिन मेरे पास हाथ है। तुम शायद अब यह भी कहने लगे कि तुम्हारे पास हाथ भी नहीं है। मुझे अनुभव हो रहा है कि लकड़ी है, सर्प नहीं है और तुमसे मैं तुम्हारी चालाकी भी समझ गया। शायद यह सुंदर लकड़ी तुम्हें बहुत मन को भा गई होगी और तुम चाहते हो कि मैं इसे छोड़ दूं, तो तुम उठा लो। लेकिन मुझे धोखा देना इतना आसान नहीं है। उसके मित्र ने बार-बार प्रार्थना की कि तुम कृपा करो और इसे छोड़ दो वह सर्प था और लकड़ी नहीं है। लेकिन जितना वह मित्र प्रार्थना करता गया, उतना अंधे का आग्रह बढ़ता चला गया। अंततः बात यहां पहुंच गई कि अंधे आदमी ने कहा कि अब तुम्हारा साथ आगे नहीं बन सकेगा। फिर वे दोनों मित्र अलग हो गए।

आंख वाले ने बहुत दुख से उस मित्र को विदा किया, लेकिन कोई रास्ता नहीं था। थोड़ी दूर चलने पर जो धूप तीखी हो गई, तो सर्प की सर्दी थोड़ी कम हुई, उसमें प्राण वापिस लौटे। और उस अंधे आदमी का जो होना था वह हुआ। उस सर्प ने उसे काटा, और वह अंधा आदमी मरा। यह कहानी मैं किसी विशेष प्रयोजन के कह रहा हूं।

मनुष्य के मन में एक लंबी यात्रा है हर मनुष्य के जीवन में, लंबी परिघमा है, पूरे जन्म की। जन्म से मृत्यु के बीच लंबी यात्रा है, और हर मनुष्य के भीतर दोनों नेत्र मौजूद है, आंख वाला भी और न आंख वाला भी, जो आंख वाली शक्तियां है मनुष्य के भीतर, बहुत कम लोग उन्हें जगा पाते हैं और उन पर... और अधिकांश लोग उन्हें भी पकड़ लेते हैं और उनके भी अनुगान हो जाते हैं। यहां तक भी कि हम अंधी शक्तियां पर साथ होकर आंख वाली शक्तियों का साथ भी छोड़ देने को तैयार हो जाते हैं। तब फिर जीवन में बहुत भटकने, अंधापन, दुख और पीड़ा शुरू होती है। और वह पूरा जीवन, जीवन रखकर मृत्यु की ही एक लंबी प्रक्रिया मात्र हो जाती है। फिर हम मरते हैं रोज मरते जाते हैं, और एक दिन मौत आती है और समाप्त हो जाते हैं।

लेकिन जीवन के अर्थ को और आनंद को नहीं जान पाते, जीवन के अर्थ और आनंद को तो वही जान सकता है, जो स्वयं के भीतर आंखवाली शक्तियों का सहारा पकड़ लें और जो स्वयं के भीतर अंधी शक्तियों का सहारा पकड़ता है, वह जीवन से भटक जाता है और अंधकार में खो जाता है। अंधापन, अंधकार में ले जा सकता है, आंखें प्रकाश में और प्रकाश के अतिरिक्त न जीवन का अर्थ है कोई और न जीवन में आनंद है कोई। और प्रकाश के बिना जीवन भटक जाता है, कौन सी शक्तियां हमारे भीतर अंधी है, उनकी मैं बात करूंगा। कौन सी शक्तियां हमारे भीतर आंख वाली है, उनकी मैं बात करूंगा। उन तत्वों की ही बात करूंगा, जो अंधी शक्तियों को प्रबल करते हैं और उनकी भी जो निर्मल करते हैं और आंख वाली शक्तियों को जगाते हैं और चैतन्य करते हैं।

यदि आपके जीवन में दुख, चिंता और पीड़ा हो, यदि आपने जीवन की कोई थिरक और संगीत और आनंद अनुभव किया, तो एक बात बहुत ही स्पष्ट रूप से समझ लो, जाने-अनजाने में आपने जीवन की अंधी शक्तियों की भी बल दिया होगा, अन्यथा यह नहीं हो सकता था, अगर राते पर हम चलें, और पैर बाजमार के ढेलों पर जाते हो, और बार-बार किसी से टकराहट हो जाती हो और चोट लग जाती है, तो हम समझते है, लेकिन जीवन में यह बोध होना कि लोग बार-बार उन्हीं-उन्हीं घटनाओं को...

कल जो क्रोध किया था, वही क्रोध आज भी किया है, आज जो क्रोध किया है कल वही क्रोध फिर भी होगा। क्रोध के बाद पछताएंगे भी, दुखी भी होंगे, निर्णय भी करेंगे न करने का, लेकिन फिर घड़ी दो घड़ी बाद वही भूल सामने आ जाएगी, वही... वही आदमी, वही पैर और फिर वही गड्ढे में गिरना हो जाएगा। जीवन निरंतर कुछ थोड़ी सी भूलों को ही दोहराते रहना जीवन भर, यह निरंतर उन्हीं भूलों को दोहराना है, जिनके लिए हमें पचता है, दुखी होना, पीड़ित हुए, कष्ट उठाया, निर्णय किया नहीं करने का, फिर उन्हीं को दोहराते हैं,

किस बात की सूचना होगी, इस बात की भीतर आंख या तो बंद है, या तो हमने जीवन में जो भी दृष्टि पकड़ी है, वह अत्यंत अंधकारपूर्ण और अंधी है। उन्हीं भूलों को इसके अतिरिक्त दोहराने का कोई भी कारण नहीं है। और फिर जो कुछ हम जीवन में चाहते हैं, वही-वही उपलब्ध नहीं हो पाता। हर मनुष्य आनंदता का होकर शांति चाहता होगा, एक संगीतपूर्ण नेतृत्व चाहता होगा, खून की तरह सुर्ख एक आत्मा चाहता होगा, लेकिन यह हो नहीं पाता और एक जोश हम करते हैं, वह सब ठीक हमें, जो हम चाहते हैं, उसके विरोध में ले जाता है।

किस बात की सूचना मिलती होगी, एक ही बात की सूचना मिलती होगी। आकांक्षाएं तो हमारी ठीक है, लेकिन आंखें हमारी अंधी है, और आंखें अंधी होंगी। तो यह स्मरण रखिए, खुद की आंखें अंधी होंगी, तो कोई भी दुनिया में किसी दूसरे की आंख आपके सामने नहीं पड़ सकती। कृष्ण की यकायक, या बुद्ध की या महावीर की या किसी की आंख आपके काम नहीं पड़ेगी। और आपकी आंख अंधी हो, तो आपके हाथ में सूरज भी लाकर रख दिया जाए तो भी प्रकाश नहीं घट सकेगा, उसमें कोई अर्थ नहीं होगा।

एक अंधा आदमी, एक मित्र के घर रात विदा ले रहा था। उसके मित्र ने कहा, अंधेरी रात है, सन्नाटा है, अमावस है, रातें सुनसान है, लोगों के घर बंद है, अच्छा होगा कि तुम हाथ में एक दीया लिए जाओ। उस अंधे ने कहा, कि आप बड़ी पागलपन की बातें करते हैं, मैं दीया भी ले जाऊं, उसका क्या अर्थ? मेरी आंखें तो नहीं है, तो मेरे हाथ में प्रकाश भी होगा तो मैं क्या करूंगा। फिर भी मित्र बहुत आग्रह किया, उसके आग्रह को मान लेकर वह अंधा आदमी एक कंदील को लेकर रास्ते पर निकला। लेकिन वह कोई दस कदम ही गया होगा कि कोई दूसरा आदमी आकर उससे टकरा गया, तो उस अंधे आदमी ने कहा, मेरे मित्र! मुझे तो लालटेन नहीं दिखाई पड़ती, लेकिन तुम्हें तो दिखाई पड़ती होगी। क्या मैं किसी दूसरे अंधे आदमी से मुलाकात कर रहा हूं। उस दूसरे आदमी ने कहा, नहीं भाई, मुझे तो दिखाई पड़ता है, लेकिन तुम्हारी कंदील की बाती बुझ गई। तुम बुझी हुई कंदील लिए हुए हो, इसलिए कैसे दिखाई पड़ता, तो अंधे आदमी को तो यह भी पता नहीं चल सकता कि कंदील बुझी हुई है। दुनिया भर के साथ बुझी हुई कंदीलों की भांति हमारे हाथों में है। इससे कोई अर्थ नहीं हैः कोई कुरान को लिए हुए है; कोई गीता को; कोई बाइबिल को; तीनों टकरा जाते हैं रातों पर। तीनों की कंदीलें बुझ गई है। लेकिन कंदीलें बुझी है या जली है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। जब तक कि खुद के पास आंख न हो, आंख के बिना प्रकाश का कोई भी अर्थ नहीं है। तो चाहे हम कितने ही प्रकाशवान लोगों को पूजें, औरों के वचनों को आदर दें। कोई उससे, कोई उससे जुड़कर नेत्रत्व होने वाला नहीं है, कोई मंगल होने वाला नहीं है। मंगल तो तब होगा, जब आंख खुली हो और मैं स्मरण दिला रहा हूं आपको कि आंख खुली हो, तो अंधकार मिट गया, तो हो सकता है और आंख बंद हो, तो प्रकाश में भी कोई रास्ता नहीं है।

मैं फिर दोहराता हूं, आंख बंद हो, तो प्रकाश में भी कोई रास्ता नहीं है और आंख खुली हो, तो अंधकार में भी रास्ता मिट जाता हूं। जीवन में जो हमारे इतनी चिंताएं, इतना संताप, इतनी एंगसायटी, इतनी अशांति है। क्या कभी सोचा है कि यह क्यों, क्या कभी विचारा कि यह कैसे पैदा हो गई। यह आसमान से नहीं बरसती है, इसे हम पैदा करते हैं, जिस ढंग से हम रोज जीते हैं, उससे हम पैदा करते है, हमारे जीने का ढंग गलत है, सोचने का ढंग गलत है, देखने की दृष्टि भी मंद है, हाथ में जीवन में कोई प्रकाश नहीं है। जो भी हम करते हैं, वह गलत ले जाता है, जो भी हम बनाते हैं, वह गलत हो जाता है, जिस भांति भी हम चलते हैं, वही रास्ता भटका देता है। इन सारे तथ्यों को देखने को एक बात ख्याल में आ जानी चाहिए और वह यह कि हमने अपने जीवन में आंखों वाली शक्तियों को विकसित करने में संकोच किया होगा और अंधी शक्तियों को सहारा दिया होगा। कोई भी तरह की शक्तियां है, श्रद्धा अंधी शक्ति है, विश्वास अंधी शक्ति है, विचार, विवेक, आंख वाली शक्तियां है।

लेकिन हमने श्रद्धा को, विश्वास को, इनको बल दिया है; विवेक को, विचार को, मूर्च्छा अंधी शक्ति है और हमने हर तरह से मूर्च्छा खोजी है, हमने तरह-तरह से बेहोश होने के उपाय किए है। न केवल हमने शराब और अफीम और गांजा और अब नई दुनिया में नरसकंड़ु और एल. एस डी. और इस तरह की चीजें खोजी है जिनसे हम मूर्च्छित हो जाए। बल्कि हमने भजन, कीर्तन, ढोल, नाम-जप, मालाएं और न जाने मालूम ऐसी मानसिक तरकीबें खोजी है, जिनसे मन तंद्रा में चला जाए और सो जाए। हमने मन को जगाने और चैतन्य करने के उपाय नहीं खोजें, हमने मन को सुनाने के तंद्रा में ले जाने के, नींद में ले जाने के, मूर्च्छित होने के उपाय खोजे हैं, मूर्च्छित ही मूर्च्छा और नींद से एक तरह की शांति मिलती है, लेकिन वह शांति उसी तरह की है, जिस तरह की मुद्रा में होने की है, जीवंत वह शांति नहीं है, जो मूर्च्छा से आती हो, जीवंत शांति तो वह है जो परम-जागरण से उत्पन्न होती हो। उस सबकी मैं बात करूंगा कि हमने किस भांति मूर्च्छा को आंखें बंद करने को बल दिया है, सहारा दिया है और छिन लिया है। और उसकी मैं बात करूंगा कि कैसे हम उससे मुक्त हो सकेंगे और जीवन शक्तियों को विवेक की और चैतन्य की शक्तियों को जगा सकेंगे। उन दोनों की मैं तीन तरह की चर्चा करूंगा। इसके पहले कि वे तीन दिन की चर्चाएं वे आपके सामने हो, मैं सारी बातें आपसे कहूं। उन तीन दिनों की बातें कहूं, सम्यक रूप से समझने, विचार करने, उस तरफ आंख उठाने के लिए कुछ छोटी-छोटी बातें आपसे अपेक्षित होंगी। पहली अपेक्षा तो यह होगी कि हम तीन दिनों में जो पीछे आप करते आए हैं, सोचते रहे है, विचार करते रहे हैं, उससे थोड़ा सा दूर हटकर अगर बातों को सुनने की कोशिश करेंगे तो शायद कुछ हो सके। उससे थोड़ा तटस्थ होकर अगर सोचेंगे तो कुछ हो सकता है, आमतौर से हम उसके भिन्न हो जाते हैं, जो हमारे लिए बैठा हुआ है। एक फकीर के पास एक नया युवक भिक्षा लेने गया, उस युवक ने जाकर उस फकीर के पैर पड़े मैं भिक्षित होने आया हूं, तो उस फकीर ने पूछा तुम किस जगह से आते हो। उसने कहा, मैं पेकिंग से आता हूं। उस फकीर ने पूछा कि पेकिंग में चाहो से क्या भाव, वह युवक हंसा और उसने कहा क्षमा करें, पेकिंग को मैं पीछे छोड़ आया, उसके चावल को भी, उसके भाव को भी और जिस रास्ते से मैं गुजर जाता हूं, वह मैं भी मिट गया हो जाता है और जिस पुरतो से मैं गुजर जाता हूं, उसको मैं तोड़ देता हूं। मुझे कुछ पता नहीं कि कैसे चावल कि क्या भाव है। उस फकीर ने कहा, तब ठीक है, तब मैं तुम्हें दीक्षा देने को राजी हूं, अगर तुम बता दे कि पेटी में चावल के क्या भाव है? तो मेरे दरवाजे बंद हो जाते हैं और मैं तुम्हें विदा कर देता। क्योंकि जो आदमी पेकिंग में चला आया है और अब भी वहां के भाव साथ में ले आया है। वह आदमी सत्य की खोज के लिए शांत नहीं हो सकता। तो इन तीन दिनों में प्रार्थना करूंगा कि पेकिंग में चावल के क्या भाव है, इसको छोड़ देना। पेकिंग हो या अमरावती हो या कुछ और हो, वहां क्या चावल के भाव है, अगर वह तीन दिन याद रहें तो बहुत कुछ काम नहीं हो सकता। और जो सही नहीं है, यह स्मरण हो कि जो भी जाता है, उसका कोई भार चित्त पर नहीं होना चाहिए। यह स्मरण मात्र भीतर से विदा कर देता है, अभी रात जब आप सोएं तो स्मरणपूर्वक यह ख्याल लेकर पहुंच गए, जो बीत गया, वह बीत गया और

इन तीन दिनों में भीतर में कोई बार-बार मन पर नहीं लौटने नहीं दूंगा। इन तीन दिनों में जो सामने होगा उसका जीऊंगा और जो बीत गया उसको छोड़ दूंगा। अगर इस विचारपूर्वक स्मरण के साथ आप सोएं, सुबह आप और तरह से उठेंगे, जैसा कि आप रोज उठते रहे होंगे, उससे बिल्कुल भिन्न उठेंगे। क्योंकि एक मन का बहुत अद्‌भुत नियम है, हम जिस बात को लेकर सो जाते हैं, ठीक उसी बात पर सुबह जागना होता है। उससे भिन्न बात पर कोई कभी नहीं जागता, हर रात जिस चिंता को लेकर आप सो गए, उसी चिंता पर आप वापिस जाग गए हैं। रात में ही चिंता आपके मतिशक के द्वार पर खड़ी प्रतीक्षा करेगी, जब आप जागेंगे वह हाजिर हो

जाएगी। रात्रि का अंतिम विचार सुबह का प्रथम विचार होता है। और आज रात्रि का अंतिम विचार यह हो कि मैं जो पीछे है उसे छोड़ता हूं, कम से कम तीन दिन के लिए, जो सतत वर्तमान है, उसमें जीऊंगा, अतीत को बीच में नहीं लाऊंगा। जो व्यक्ति अतीत को बीच में नहीं लाता चित्त के, उसका चित्त बहुत निर्मन और शांत हो जाता है। क्योंकि अशांति सब अतीत है आती है, तो वर्तमान में कोई अशांति नहीं होती। इस तत्व को समझकर और विचार करेंगे, तो समझ में आएगा कि मैं कुछ थोड़े से सुझाव आपको दे रहा हूं। वर्तमान में वह जो प्रज्वलित अंकित है, उसमें कोई अशांति नहीं होती, सब अशांति अतीत से संबंधित होती है या, या भविष्य से संबंधित होती है। वर्तमान में कभी कोई अशांत नहीं होता, आप खुद ही अपनी अशांति को देख रहे हैं, समझ रहे हैं, या तो वह बीती हुई होगी या आने वाली होगी। ठीक क्षण से मौजूद कोई अशांति नहीं होती, अभी हम यहां बैठे है, अगर हमारा चित्त इसी क्षण में मौजूद हो जाए, थोड़ी सी अशांति है। अगर हम इसी क्षण में जाग जाए, कौन सी अशांति है, अगर किसी जादू से आपका सिर अतीत पहुंच लिया जाए, तो कौन सी अशांति है।

जीवन क्षण में कोई अशांति नहीं हो सकती, पिछला भाग अतीत का भाग चित्त को अशांति देता है और आने वाले दिन कल्पना और योजना चित्त को अशांति देते हैं। इन तीन दिनों में तुम समझ लीजिए न तो कोई अतीत है और न कोई प्रतिष्ठा, तीन दिन बस, यह तीन दिन के क्षण है, जो सामने क्षण होता है, वही है। इन तीन दिनों में इस भांति जीकर देखिए, एक बिल्कुल नई दृष्टि जीवन के प्रति खुल जा सकती है। और एक बार यह ख्याल में आ जाए, कि जीवन पर जो भार है, जो टेंशन है, जो तनाव है वह अतीत और भविष्य का है। तो मनुष्य को एक बिल्कुल नया द्वार मिल जाता है, खटखटाने का और तब फिर वह रोज घड़ी दो घड़ी को सारे अतीत और सारे भविष्य से मुक्त हो सकता है। और ख्याल रखिए न तो अतीत की कोई सत्ता है, सिवाय स्मृति के और न भविष्य की कोई सत्ता है, सिवाय कल्पना के, जो है वह वर्तमान है। लेकिन किसी भी दिन परमात्मा को या सत्य को जानना होगा, तो वर्तमान के सिवाय और कोई द्वार नहीं है। अतीत है नहीं, जा चुका है; भविष्य है नहीं, अतीत आया नहीं; जो है एगसिसटैंअल, जिसकी सत्ता है, वह है वर्तमान। इसी क्षण में सामने मौजूद क्षण है वही, इस मौजूद क्षण में अगर मैं पूरी तरह मौजूद हो सकूं, तो शायद सत्ता में मेरा प्रवेश हो जाए, तो शायद जो सामने दरख्त खड़ा है, ऊपर तारे हैं, आकाश है, चारों तरफ लोग है, इन सबके प्राणों से मेरा संबंध हो जाए। उसी संबंध में मैं जानूंगा। उसको भी जो मिले भीतर है, और उसको भी जो मेरे बाहर है। इन तीनों दिनों में अगर मैं थोड़ा सा भी समझपूर्वक जीने की कोशिश की, तो क्षण-क्षण में जीने की कोशिश करेंगे, यह मेरा पहला निवेदन है।

जब भोजन कर रहे हो, तो सिर्फ भोजन करें- भोजन के पहले की बात भूल जाए और बाद में भोजन करें और सारा चित्त और सारे प्राण भोजन करने में ही तल्लीन हो जाए। वे यहां-वहां डूबते वे न हो, अभी तो यह होता है कि हम जब भोजन करते हैं, तब चित्त कहीं और होता हैः घर में होता है; दुकान में होता है; जब दुकान में होते हैं, तब वह भोजन करता होता है, जब बाजार में होते हैं, तब चित्त घर में होता है, जब चित्त में होते हैं, तब बाजार में... बाजार में होता है। मतलब यह कि जहां हम होते हैं, वहां हम नहीं होते, तो जीवन में एक विशंखलता और एक खंडित और यह खंडित स्थिति पूरी खतरनाक है कि जब हम सोते हैं, तब चित्त दिन में जो उसने किया है, उसका स्मरण करता है, सपने देखता है, जब वह दिन में काम करते हैं, तो रात जो सपने अधूरे हो गए तो चित्त उन सपनों को पूरा करता है। चित्त पूरे वक्त अनुपस्थित है, अबसरट है, जहां हम है। तो हमारा जीवन से संबंध कैसे होगा? जब हम किसी को प्रेम कर रहे हैं, तब चित्त हमारा कहीं और है, तो जीवन में प्रेम कैसे होगा और इसीलिए हम जीवन भर अनुभव करते हैं कि हम प्रेम चाहते हैं कि करें और हम चाहते हैं कि

कोई हमें प्रेम दें, लेकिन न तो हम प्रेम कर पाते है और न कोई हमें प्रेम दे पाता है। प्रेम की जरूरी है कि वर्तमान में हो, यदि हम प्रेम करते है तब चित्त कहीं और होता है। और जहां चित्त प्रेम करते वक्त होता है, जब हम वहां हो, तो चित्त वहां होगा, जहां उसे प्रेम करते वक्त होना चाहिए था। ऐसे जीवन में सारी चीज टूट गई है, हम कहीं है, चित्त कहीं है, जब हम प्रार्थना करते हैं, तब चित्त कहीं और है, जब हम व्यवसाय करते हैं, तब चित्त कहीं और है। हम किसी काम में भी ठीक-ठीक मौजूद नहीं है। इन तीन दिनों में एक छोटा सा प्रयोग करेंगे, कि जो हम काम कर रहे हैं, उसमें पूरी तरह मौजूद हो जाए, अभी रात को यहां से जाकर सोए तो पूरी तरह सोए, पूरी तरह सोने का मतलब यह है कि सोते वक्त पूरी भांति सोए कि सारा काम समाप्त हुआ। अब सिवाय सोने के और कोई भी काम नहीं है। अब मैं अपने पूरे कामों से सोने जा रहा हूं और मेरे पूरे काम सिर्फ सोने भर से काम को करना और कोई भी काम नहीं। उसी भांति सोए, सुबह स्नान करें, जिस भांति स्नान करें कि स्नान करते वक्त आपका पूरा व्यक्तित्व स्नान कर रहा है, आपका चित्त कहीं और नहीं भागा जा रहा है। थोड़े ही दिन इस मग्नपूर्वक अगर हम चित्त के साथ सजगता बरते, तो बहुत कठिन नहीं है कि एक दिन वह घड़ी आ जाए कि हम जो काम कर रहे हो, उसमें हम पूरी तरह मौजूद हो जाए, बुहारी लगा रहे हो तो पूरी तरह मौजूद हो जाए और अगर बुहारी लगाते हुए भी कोई पूरी तरह मौजूद हो जाए तो उसे बुहारी लगाने में वही आनंद उपलब्ध होगा, जो किसी बड़े से बड़े जोगी को ध्यान करने में उपलब्ध हुआ है। कोई फर्क नहीं रह जाएगा, ध्यान का एक ही अर्थ है- कि हम जो कर रहे हैं, उसमें हमारा चित्त पूरी तरह मौजूद है, पूरी तरह लीन है, उससे बाहर नहीं है। कोई भी छोटा काम अभी यहां से उठकर आप कमरे की तरफ जाएंगे, तो चलेंगे रास्ते भर, तो इस भांति चलें कि चलने के सिवाय और कोई क्रिया आपके चित्त में नहीं हो रही। बस सिर्फ चल रहे हैं, चलना ही रह जाए और आप मिट जाए, अगर चलना ही रह जाए और आप मिट जाए तो आपके कमरे तक जो सौ कदम उठाए गए हैं, वह सौ कदम परमात्मा के निकट ले जाएंगे और उन सौ कदमों में ही आपको पता चलेगा कि चित्त तो अपूर्व रूप से शांत हो गया है। इधर हम तीन दिनों में सतत इस बात की फिक्र करेंगे, जो भी काम कर रहे हो, उसे इतनी पूर्णता से करें, इतने पूरे, टोटल, इतने समग्र रूप से उसमें डूब जाएं, तो उसके बाहर कुछ भी न रह जाए, आप वही हो जाएं।

एक दफा ऐसा हुआ कि बुद्ध ने एक बादशाह को अपने राज्य की एक मोहर बनाने दी। और मोहर पर उसके किसी सलाहकार ने कहा कि एक बोलता हुआ मुर्गा उस मोहर पर खोदा जाए। उसे बात जच गई, उसने सारे राज्य के चित्रकारों को खबर दी कि बोलते हुए मुर्गे का चित्र बनाए। राज्य में एक बूढ़ा चित्रकार था, उसे भी बुलाया, लेकिन उसने कहा कि मैं इतना बूढ़ा हो गया हूं कि अब मैं नहीं बना सकूंगा। तो राजा ने कहा कि तुम बनाते तो हो, चित्र तो बनाते हो, यह क्यों नहीं बना सकोगे कि कोई और बना सकें तो बेहतर। बहुत से चित्रकार मुर्गों के चित्र बनाकर लाए, नमूनें के लिए, लेकिन उस बूढ़े चित्रकार ने कहा कि सत्य जो है वह कुछ भी नहीं। आखिर राजा परेशान हो गया, उसने कहा तुम खुद बनाते नहीं दूसरों को बनाने देते नहीं। फिर हम क्या करें, उसने कहा कि मैं बनाऊं कि मेरा पक्का नहीं है, क्योंकि कम से कम तीन वर्ष लग जाएंगे। तो राजा ने कहा, तीन वर्ष! एक मुर्गे के चित्र बनाने के तो उसने चित्र बनाना तो दो क्षण में हो जाएगा, लेकिन मुर्गा बनने में तीन वर्ष लग जाएगा। तुम पागल हुए हो, मुर्गा तुमसे बनने को कह कौन रहा है। उसने कहा, जब तक मैं मुर्गे को भीतर से न जानूं कि वह कैसा है? और जब वह बांग देता है तो उसके प्राणों में क्या होता है? जब तक यह मैं न जान लूं, जब यह फुरणा मेरे प्राणों में न हो जाए, तब तक मैं कैसे मुर्गे को बोलता हुआ बना सकूंगा, तीन वर्ष तक, क्योंकि मैं बूढ़ा आदमी हूं, जिस बात में बिना सकता बीच में मर भी सकता हूं। तीन वर्ष राज्य की तरफ से

मेरी व्यवस्था करनी पड़ेगी भोजन की। क्योंकि उस वक्त मैं कुछ भी नहीं करूंगा। राजा ने कहा कि ठीक हम व्यवस्था करेंगे, तीन वर्ष की व्यवस्था की गई। वह बूढ़ा कलाकार जंगलों में चला गया, जहां जंगली मुर्गे रहते थे। दो तीन महीने बाद राजा ने आदमी अपने देखने भेजे कि वह आदमी पागल तो नहीं है, क्योंकि मुर्गा बनाने के लिए तीन साल बहुत होते हैं। और एक निशनाक कलाकार है, जीवन भर उसकी प्रसिद्धि रही है, उसके हाथ में और कुछ जादू है। तुम जाकर देखो वह पागल क्या कर रहा है? वह मित्र देखने गए, देख कर हैरान हो गए! वह बूढ़ा तो मुर्गों के बीच छिपा हुआ बैठा है, आस-पास मुर्गे बांग दे रहे हैं। उन्होंने तो उसे देखा, लेकिन उस बूढ़े ने उन्हें नहीं देखा।

और तीन महीने बाद गए देखा तो वह तो मुर्गों के साथ दौड़ रहा है चारों हाथ-पैर पर। वह बिल्कुल पागल मालूम होता है, यह क्या कर रहा है? तीन वर्ष पूरे हुए, राजा ने खबर भेजी, वह आदमी वापस दरबार में आया, राजा ने कहा चित्र बनाकर लाए हो, उसने जोर से जैसे मुर्गा आवाज देता है, वैसी आवाज की। राजा ने कहा, हम यह नहीं चाहते हैं, हमें चित्र चाहिए। तो मुर्गे की आवाज से क्या है, इससे क्या होता है। उस बूढ़े ने कहा, चित्र तो बना देना, अब एक क्षण भर का काम है। सामान बुला लें, मैं यही बना दूंगा। लेकिन तीन वर्ष... मैं मुर्गे के साथ एक होने की कोशिश किया, वह बात हो गई। उसने चित्र बनाया, जो कहा जाता है। मनुष्य जाति के पूरे इतिहास में किसी भी पशु या पक्षी का ऐसा चित्र कभी नहीं बनाया। वह चित्र अद्भुत है! उसने राजा से कहा कि अभी इस चित्र की परीक्षा कर लो, उसने कहा कि इसकी क्या परीक्षा है। हम कैसे जानें कि यह चित्र इतना अद्भुत बना हो। उसने कहा चित्र को रख दो, और असली मुर्गों को ले आओ। अगर असली मुर्गा देखकर भाग जाए, तो तुम समझ लेना कि चित्र बना है। असली मुगग् लाए, वे भी मुगग् भाग गए। मुर्गा बाहर से झांक कर देखें उस चित्र को और वापिस लौट गए। वह जो मुर्गा था, तो लगे कि वह पूरी बांग देकर खड़ा हुआ था। उस चित्रकार ने कहा, आदमी या मुर्गा भी पहचान लेगा कि मुर्गा है। यह जो उसने राजा ने पूछा कि कैसे यह तुमने बनाया। उसने कहा, तीन वर्ष तक मैं मुर्गे के साथ एक होने की कोशिश किया, मैं अपने को भूल गया और मुर्गा होता चला गया। धीरे-धीरे, धीरे-धीरे ऐसे क्षण आए, जब मुझे यह स्मरण भी नहीं रहा कि मैं हूं। एक ही बात की स्मरण रही, मुर्गा है। और उन्हीं क्षणों में मैंने मुर्गा की आत्मा को जाना।

जीवन में चौबीस घंटे जो हम कर रहे हैं, उसके साथ इतनी आत्मा विलीनता, इतना आत्मसात हो जाना जरूरी है कि हम मिट जाए और वही रह जाए जो हम कर रहे हैं। चाहे वह काम कितना ही छोटा क्यों न हो, बड़ा क्यों न हो, जो भी काम हो, उसमें हम डूब सकते हैं। यह डूबना ही इन तीन दिनों में छोटा सा प्रयोग करेंगे और मैं कहूं चौबीस घंटे जो भी आप कर रहे हैं, उसमें उसका ध्यान रखें। इन तीन दिनों में ही एक बुनियादी फर्क अनुभव होगा। एक बात ख्याल में आएगी।

आज रात सोने से ही शुरू कर दे, वह अभी दूर है, जब यहां से उठकर जाए, तभी शुरू कर दें। वह भी थोड़ा दूर है, अभी मुझे सुन रहे हैं, सुनने में ही शुरू कर दें। सुनते वक्त सिर्फ सुनने की क्रिया रह जाए, आप इसे सिर्फ सुन रहे हैं और कुछ भी नहीं कर रहे हैं। मात्र सुन रहे हैं, कान ही कान रह गए है और आप नहीं है। जैसे आप सिर्फ कान ही है जो सुन रहे हैं। आंख ही है, जो सिर्फ देख रही हैं। अगर सुनने की क्रिया को भी इतनी शांति से और इतनी एकाग्रता से सुने तो कुछ और सुनाई पड़ेगा। तब शायद वही सुनाई पड़ जाए जो मैं आपसे कह रहा हूं। लेकिन अगले इतनी लीनता में ही सुनते वक्त, आप वह नहीं सुनेंगे, जो मैं कह रहा हूं। आप वही सुनेंगे, जो आप सुनना चाहते हैं, सुन सकते हैं, पहले से सुने ही है, पहले से सोचे हुए है। तब आप वही सुनेंगे, तब फिर वही सुन पाएंगे, जो मैं आपसे कह रहा हूं। तो इन्हीं से शुरू कर दें और इन तीन दिनों एक छोटे सूत्र पर काम

करें कि जो भी काम कर रहे हैंः उठ रहे हैं; बैठ रहे हैं; सो रहे हैं; उसमें पूरी तरह लीन हो जाए। तो यह बचे जाओ, तुम जाओ। यह तो पहला सूत्र- हां तुम एकदम से ही चले जाओ।

दूसरी बातः अगर इस प्रत्येक कर्म में आत्मलीनता की बात पर थोड़ा ध्यान किया। तो चित्त बहुत गहरे शांति को अपने-आप उपलब्ध होता है, उसमें कोई बहुत विशेषता प्रयास नहीं करना पड़ता। दूसरी बात- चित्त इसलिए अशांत है, कि हम कुछ होना चाहते हैं, कुछ बनना चाहते हैं, कोई दौड़ है हमारे भीतर, कोई कंडीशनर, कोई महत्वाकांक्षा, कोई धनी होना चाहता है, कोई बड़े पद पर होना चाहता है, कोई बड़ा त्याग करना चाहता है, कोई बड़ा साधु होना चाहता है, कोई मोक्ष जानना चाहता है, कोई समाधि उपलब्ध करना चाहता है, कोई सत्य पाना चाहता है, लेकिन कोई तुम्हारी दौड़ है बड़ी गहरी। उस गहरी दौड़ की वजह से सारा चित्त अशांत और उगलता चलता जाता है। मैं यह निवेदन करूं, जिस व्यक्ति को सच में, सच में ही जीवन के साथ आत्मलीन होना हो, सच में ही जीवन के साथ एकात्मता आती हो, उसे एक बात ख्याल में रखनी चाहिए, उसे अपने न को छोड़ने को स्वीकार कर लेना चाहिए। उसे कुछ होने की दौड़ से नहीं, बल्कि नाकुछ होने के केंद्र को स्वीकार कर लेना चाहिए।

जो व्यक्ति भी अपने नोबोडी होने को स्वीकार कर लेता है, न कुछ होने को, उसके जीवन को अद्‌भुत बातें होनी शुरू हो जाती है और मैं जो-जो होना चाहता था, वह मनाया उसमें होना शुरू हो जाता है। दो बातें है, एक तो जैसे एक आदमी पानी में तैरता है, हाथ-पैर फेंकता है और एक दूसरा आदमी है जो पानी में बहता है, हाथ-पैर फेंकता नहीं। पानी की धारा से अपने को छोड़ देता है और बाहर जाता है, इन तीन दिनों में तैरने की कोशिश न करें, बहने की कोशिश करें। कोई ऐसी बहुत सचेत चेष्टा न करें कि यह करना है, वह करना है, यह होना है, वह होना है, बल्कि ऐसे जैसे तीन दिन आएंगे और गुजर जाएंगे और हमें चुपचाप बहे जाना है। यह अद्‌भुत बात है कि जो व्यक्ति बहने के अर्थ को समझ लेता है, उसके चित्त से साथ तनाव भी दूर हो जाता है, जो करने की कोशिश करता है, तैरने की, उसका चित्त बहुत तनाव से बहुत अशांति से भर जाता है। और जो आसानी से भर जाता है, वह कभी सत्य को अनुभव नहीं कर सकता और न जीवन के आनंद को उपलब्ध हो सकता है। जीवन के आनंद की अनुभूति तो अत्यंत सरल चित्त में हो सकती है और सरल चित्त का पहला लक्षण हैः बहता हुआ चित्त, तैरता हुआ नहीं। इन तीन दिनों के लिए कह रहा हूं फिलहाल अभी तो, सिर्फ तीन दिनों में कुछ अनुभव हो तो, वह तो अपने हाथ में है। क्योंकि जीवन की अपने आप पूरे जीवन की रूह ही बन जाती है। अभी तो तीन दिन की ही कुल बात है, इसलिए बहुत चिंता में न पड़े कि वह हम बहने लगे तो फिर जिंदगी का क्या होगा और अगर हमने कुछ भी होने की फिक्र छोड़ दी तो फिर जिंदगी का क्या होगा। इस चिंता में न पड़ें, केवल तीन दिन की ही बात कर रहा हूं, इसके आगे कोई बात नहीं कर रहा हूं। तीन दिन कुछ प्रयोग करके देखें, उसमें से कुछ अगर सार्थक होगा, वह अपने आप बच जाएगा, आपको बचाने के लिए मैं नहीं कहूंगा उससे। अगर कुछ होगा, तो वह अपने आप आपको पकड़ लेगा। आप उसे पकड़े यह मैं निवेदन नहीं करूंगा। अभी तो तीन के इस छोटी सी तीन दिन की घड़ियों पर एक-आधी बात कर रहा हूं। तो तीन दिन थोड़े बहने की कोशिश करें, यह जो आमतौर से धर्म में न उत्सुक होते, वह बहुत ज्यादा सीरियसनेस पकड़ लेते, बहुत गंभीर, वह समझते हैं कि हम बहुत भारी गंभीर काम करने जा रहे हैं। नहीं, धर्म के सत्य को जानने में केवल वे ही लोग सफल हो सकते हैं, जो बच्चों जैसी गैर-गंभीर हो, नानसीरियस हो, जैसे बच्चे। गंभीर चित्त तनाव से भर जाता है, मैं आपसे निवेदन करूंगा, यहां गंभीरता को धारण नहीं कर लेंगे, ज्यादा उचित होगा, प्रसन्न होंगे। गंभीर और उदास होकर नहीं बैठ जाएंगे, जो कोई भी है, परमात्मा के साथ गंभीरता और उदासी को जोड़ लेती है, उसको

हमको परमात्मा तो नहीं मिलता, उसको उनके जीवन का सारा आनंद भी नष्ट हो जाता है। तो प्रसन्न रहेंगे, हंसेंगे, ऐसे ही समझेंगे जैसे घूमने चले आ रहे हैं, यहां कोई बहुत बड़ी साधना, कोई बहुत बड़ी परमात्मा की खोज, कोई बड़ा योग साधने आए हैं, तो बहुत गंभीर होकर, नहीं उस तरह से चीजें नहीं पकड़ लेंगे। उस तरह से चित्त शूद्र होता है, उदास होता है, उस तरह के चित्त की जो भी सरलता है, वह सब नष्ट हो जाती है। साधु हो, संन्यासी सरल नहीं रह जाते, जिंदगी को इतनी गंभीरता से पकड़ते हैं, ठीक-ठीक व्यक्ति वही सरल हो सकता है, जो जिंदगी को एक खेल की भांति पकड़ता हो, एक गंभीर घटना की बात नहीं है, एक नाटक की बात थी, एक खेल की बात थी।

तीन फकीर हुए है चीन में, अद्‌भुत फकीर थे, उनके बाबत, उन तीनों का कोई नाम पता नहीं है। उनका जो पता है अभी नहीं, तीन लाफिंग झेन ऋषि उनको कहा जाता था, तीन हंसते हुए फकीर, वे जिस गांव में जाते, उनके पहले ही उस गांव में खबर पहुंच जाती कि वे तीनों पागल आ रहे हैं। उधर तो भाष्ण करते थे, क्योंकि भाष्ण कैसे भी हो, कुछ न कुछ गंभीर कर लिए ही आता है। न वे कुछ समझाते थे, वे चौराहों पर खड़े होकर हंसना शुरू कर देते थे। एक हंसता था और दूसरा हंसता था और तीसरा और फिर वे तीनों हंसते थे और भीड़ संघामक हो जाती, आस-पास लोग सुनते और वे भी हंसते और सारा गांव हंसने लगता, जिस गांव में वे दो-चार दिन टिक जाते, वह सारा गांव हंसने लगता। जिस गांव से वे गुजर जाते, वह गांव कहता कि बरसों का भार, वे तीन आदमी, तीन दिन रुक गए गांव में आकर बरसों का भार चला गया। तो मैं भी कहूंगा कि इस, इस सीधे उपघम, गंभीर उपघम नहीं समझ लेना आप। गंभीरता रुग्ण चित्त का लक्षण हैः सरलता से हंसते हुए और एक नाटक की भांति जीवन को लेने में जो समर्थ हो जाता है, उसे जीवन के बहुत से रहय खुल जाते हैं। तो यह निवेदन करूंगा कि तीन दिन ऐसी सरलता से जीएंगे जैसे हम यहां प्रकृति के सौंदर्य को देखने इकट्ठे हुए हो, कुछ मित्र इकट्ठे हुए हो, कुछ गपशप करेंगे, कुछ हंसेंगे, मौत से तीन दिन बहे, इस भांति को अपने कोढीला छोड़ देंगे। आघामक, एग्रैसिव माइंड नहीं होना चाहिए और यह साधक जितने होते हैं तथाकथित, वह सब एग्रैसिव होते हैं आघामक होते हैं, एकदम से आघमण करते हैं चीजों को पाने के लिए, जबकि सच्चाई यह है कि सत्य जैसी चीज आघमण करके नहीं पाई जा सकती।

एक महिला मेरे पास आती थी, वह संकृति की बहुत बड़ी पंडित है, उन्होंने मुझसे कहा कि मुझे ईश्वर को पाना है। मैंने कहा कि कुछ ध्यान करें, तो शायद कुछ इस दिशा में गति होगी। उन्होंने एक दिन ध्यान किया, लौटते में मुझसे बोली, लेकिन अभी मुझे कुछ अनुभव नहीं हुआ। मैंने कहा, कल और ईश्वर को एकाध मौका और दे दें। आप तो जल्दी में है, ईश्वर तो बड़ा सुत है, उसे जल्दी में मालूम नहीं होता, सालों साल ऐसे ही गुजरते चले जाते हैं, उधर को जल्दी नहीं है, लाखों साल, करोड़ों साल ऐसे गुजर गए है जैसे कोई वहां जल्दी नहीं मालूम होती, तो आप तो जल्दी में है, जल्दी में एक मौका और दें। कल और... कल आएं, बड़ी गंभीर थी, भारी गंभीर थी, गीता उन्हें कंठथ थी, बातें करती तो वह उपनिषद आते, गीता आती, वेद आते, बहुत गंभीर थी। फिर आई, फिर लौटकर उनसे बोली कि क्षमा करिए, अभी तक मुझे कोई ईश्वर का अनुभव नहीं हो पा रहा है। मैंने उनको कहा, होगा भी नहीं कभी।

एक बूढ़ा संन्यासी, अपने एक युवा संन्यासी के साथ नाव से उतरा। नाव से उतरकर उसने उस मांझी से पूछा, नाव वाले से पूछा कि जो पास का गांव है, क्या मैं सूरज डूबने के पहले वहां पहुंच जाऊंगा। सूरज डूबने को था और उस गांव का नियम था, सूरज डूबते ही उस गांव के दरवाजे बंद हो जाते थे किले के, फिर कोई प्रवेश नहीं कर सकता था। फिर रात भर मुझे बाहर रुकना पड़ेगा, क्या मैं पहुंच जाऊंगा सूरज डूबने के पहले।

उस मांझी ने कहा कि जरूर पहुंच जाएंगे, लेकिन एक बात ख्याल रखना, अगर धीरे-धीरे गए तो पहुंच जाएंगे और अगर जल्दी गए तो मुश्किल है। उस आदमी ने संन्यासी ने कहा, यह पागल मालूम होता है, क्योंकि जल्दी जाना तो पहुंचूंगा, समझ की बात होती है। वह कहता है, धीरे समझ की बातों में मत पड़ो, उसने युवा साथी को कहा कि भागो! सूरज डूब न जाए और रात रुक गए तो रात जंगल में, जंगल जानवर और बाहर दीवाल पर पड़े रहना पड़ेगा। वे दोनों भागे, लेकिन थोड़ी ही दूर जाकर, सूरज नीचे उतरने लगा। अंधेरा जंगल में घिरने लगा, वह और तेजी से भागें और वह बूढ़ा संन्यासी पत्थर से चोट खाकर गिर पड़ा। उसके पैर लहूलुहान हो गए, पीछे से वह मांझी भी अपनी नाव बांधकर अपनी परवान वगैरह लेकर लाता था। उसने कहा कि देखते हो, मैंने कहा था, धीरे गए तो पहुंच जाओगे। जल्दी जल्दबाज में कभी पहुंचते हैं, और तब उस संन्यासी को दिखाई पड़ा, ठीक कहा था, वह आदमी पागल नहीं है। बड़े अनुभव से उसने यह बात कही, मैं भी आपसे कहता हूं, परमात्मा के द्वार केवल उसी के लिए खुलते हैं, जो इतने धीरे जाता है, इतने धीरे कि उसके धीरज का कोई अंत नहीं होता। और जो जल्दी करता है, उसके लिए तो द्वार बंद हो जाते हैं। द्वार इसीलिए बंद हो जाते हैं, कि जल्दी जाने वाला मन अशांत मन है, धीरे से और अनंत धैर्य से जाने वाला मन शांत मन है। द्वार इसलिए बंद नहीं हो जाते कि परमात्मा बंद कर देता है उनको। हम बंद कर लेते हैं, वह जो अधैर्य है वह अशांत है, वह जो गंभीरता है, वह अशांत है। वह जिंदगी पर जो आघमण है, वह अशांति है। कोई आघमण नहीं, अग्रैसिव नहीं, रिसैपटिव, आघामक नहीं, ग्रहणशील। जैसे सुबह हम अपना दरवाजा खोलते हैं, हम सूरज का हमला नहीं करते और रसी बांधकर उसको घर में नहीं लाते, सिर्फ द्वार खोलकर बैठ जाते हैं। फिर सूरज डूबता है, उसकी रोशनी घर में पड़ जाती है, ऐसे ही अपने चित्त के द्वार को खुला छोड़ दें, और फिर प्रतीक्षा करें। सूरज उठेगा और घर रोशनी से भर जाएगा। आघमण किया जा सकता है, केवल मन के द्वार खोले जा सकते हैं। ग्रहणशील हुआ जा सकता है और ग्रहणशील होने के लिए तीन बातें आज की रात मैं आपसे कहता हूं।

पहली बात- प्रति क्षण में जीने की कोशिश करें सहजता से। दूसरी बात- अति गंभीरता से जीवन को न लें, बड़ी सरलता से लेते थे और लेते हो, वैसा ही चित्त को लें। और तीसरी बात- कोई अधैर्य, कोई जल्दी न करें। जितनी जल्दी करेंगे, उतनी देर हो जाती है। और जब जितनी देर से खड़ा वह होता है, उतनी ही जल्दी हो जाता है। एक और कहानी से मैं चर्चा को पूरा करूं, फिर तीन दिन की बात करेंगे। उस कहानी को अपने साथ ही लेकर सो जाएं। बिल्कुल छोटी कहानी है, लेकिन सत्य उसमें बहुत है।

एक संन्यासी वर्षों से, जन्मों से प्रार्थना पूजा में लगा था, ऊब गया और घबरा गया और बेचैन हो गया। क्योंकि पूरे वक्त जब वह प्रार्थना कर रहा था, तब दृष्टि तो प्राप्ति पर लगी हुई थी और जिस दिन उनकी प्रार्थना असफल हो गई, उसी दिन दुख और मनोचिंता व्याप्त होती चली गई। एक दिन उसने देखा कि नाव वहां से निकलते वक्त, बूढ़े संन्यासी ने कहा कि सुनते हैं, मैंने सुना है कि निरंतर भगवान की तरफ आप जाते हैं, कभी उनसे पूछें कि मेरी मुक्ति को और कितनी देर, मेरे पीछे जिन्होंने शुरू किया था, वे आगे निकल गए और मैं वहीं की वहीं पड़ा हुआ हूं, यह कैसा अन्याय है। और जन्म-जन्म हो गए उनकी प्रार्थना करते अब तक फल नहीं मिला। आखिर कब मुझ पर कृपा होगी, नाविक ने कहा, जरूर पूछ लूंगा। बगल में ही उसी दिन उसी दरख्त के पीछे, बरगद का बड़ा दरख्त था। एक युवक फकीर अपना एकतारा लेकर नाचता था। नाविक ने मजाक में उससे पूछा कि मित्र तुम्हें भी तो काफी देर हो गई, तुम भी तो सुबह से साधे हुए हो, अब सांझ होने को आ गई। तुम्हें भी पूछना है परमात्मा से, तुम्हारे लिए भी पूछ दूंगा। वह खूब हंसने लगा, और उसने कहा, कृपा करें, मेरा नाम वहां मत उठाना। इस योग्य मेरा नाम नहीं है, और कृपा करना, कुछ पूछना मत। क्योंकि जो पूछता है, वह

सौदा करता है। और यह कहता है, कब तक मिलेगा? उसे करने में कोई आनंद नहीं है, मिलने में आनंद है। मैं तो जो गीत गा रहा हूं, मुझे सब मिला जा रहा है और मैं जो नाच रहा हूं, मैंने उसमें पा लिया। तुम कुछ पूछते वक्त मेरा नाम मत उठाना, मेरी बात मत उठाना। लेकिन नाविक कुछ दिनों बाद लौटें, और उन्होंने उस बूढ़े फकीर को कहा, कि मैंने पूछा था, उन्होंने कहा, तीन जन्म और लग जाएंगे। उस फकीर ने अपनी माला नीचे पटक दी और भगवान की जो मूर्ति रखी थी, लात मारी उसे, और कहा, हद हो गई अन्याय की, इसीलिए तो नास्तिक ठीक कहते हैं कि ऐसा भगवान में कुछ शक की ही बात है। मैं नहीं मानता था पहले सब बातें, बहुत हद हो गई। इतने दिन हो गए, अभी तीन जन्म और लगेंगे और नाविक ने उस फकीर से कहा, जो नाच रहा था, उसी दरख्त के पीछे कि मित्र! अब तुमको बताने से मुझे और भी डर लगता है क्योंकि जिसने तीन जन्म की बात ही सुनकर लात मार दी और माला फेंक दी। तुम पता नहीं क्या करोगे? नाविक तुम्हारी पूछ ही लिया था, लेकिन कि तुमने मना किया था। लेकिन उत्सुकतावश मैं नहीं रुक सका, मैंने पूछा तो परमात्मा ने कहा, वह युवक जिस वृक्ष के नीचे नाचता है, उसमें जितने पत्ते हैं, उतने ही जन्म लग जाएंगे। वह युवक और तेजी से नाचने लगा, उसके एकतारे पर और भी गीत मधुर हो उठा और उसकी आंखें ज्योति की चमक उठे और उसने भगवान को धन्यवाद दिया कि तेरा धन्यवाद। जमीन पर कितने वृक्ष है और उन वृक्षों पर कितने पत्ते हैं, तेरी कृपा अनंत है कि एक ही वृक्ष के पत्तों के बराबर जन्मों में मेरी मुक्ति हो जाएगी। मैं कहां इस योग्य लेकिन जरूर तेरी कृपा होगी बड़ी, इसलिए तुझने मुझपर जो कभी भी पात्र नहीं था, योग्य नहीं था तूने इतनी दया की और कथा यह है कि वह यह कहते ही उसी क्षण मुक्त हो गया, हो ही जाएगा। ऐसा चित्त जो इतनी सरलता से, इतनी कृतज्ञता से, इतनी धन्यता से, इतनी अपनी अपात्रता से और परमात्मा की इतनी अनुकंपा के बोध से भरा हो और जिसमें इतनी धैर्यता हो कि वह कह सके कि जमीन पर कितने वृक्ष और कितने पत्ते और इस छोटे से वृक्ष में पत्ते ही कितने है, इतने ही जन्मों में मुक्त हो जाऊंगा। यह तो मैंने गलती हो गई न, यह तो बड़ी शीघ्रता हो गई।

जिसकी इतनी पेशेंस है, इतना धैर्य है, वह तो उसी क्षण, उसी क्षण मुक्त हो जाएगा। क्योंकि ऐसे चित्त को रोकने का कोई भी कारण नहीं रह गया, ऐसे चित्त के द्वार बंद होने की कोई वजह नहीं रह गई। यह तो उनका अंत नहीं है, अधैर्य से नहीं कुछ होता है इस दिशा में। अनंत धैर्य और प्रतीक्षा में और उनकी वह न नहीं हो सकती जो जीवन को बड़ी सरलता से खेल की तरह लेकर, गंभीरता से नहीं हंसते हुए ले, मौन, शांति, प्रेम और धैर्य में जो जीवन को व्यंग्य में, जीवन के प्रति अपन सब, हृदय से, अनायास से खोल देता है। यह तीन छोटी-सी बातें कही, इन तीन पर थोड़ा ख्याल करेंगे, विचार करेंगे और फिर आने वाले तीन दिनों में इस भूमिका को लेकर मन की भूमिका को लेकर सुनेंगे, तो शायद कोई बात आपके काम की हो सकें और शायद कोई बात आपके मार्ग पर प्रकाश बन सकें। लेकिन निर्भर करता है आप पर, मुझ पर नहीं, तो आपकी चित्त की भूमिका और दया की, उसकी दृष्टि और उसकी विराटता और उसकी सरलता पर, सब कुछ निर्भर करता है। तो पहले दिन तो परमात्मा से यही प्रार्थना करूंगा कि वह आपके चित्त को ऐसी भूमिका दें, क्योंकि बीज कुछ भयंकर सत्य है, ऐसा भूमि तैयार न हो, और अगर भूमि तैयार हो, तो बीज अंकुरित हो सकता है। और उनमें कुछ आ सकता है, उनमें कुछ पैदा हो सकता है, कोई फूल लग सकते हैं। यह प्रार्थना करूंगा इस पहले दिन की पहली सभा में।

परमात्मा आपके हृदय को ऐसी सरलता, शांति और मौन दें कि वह भूमि बन सके और उसमें कोई भी बीज जाए, तो अंकुरित हो सकें और फलित भी हो सकें। मेरी इन बातों को इतने थके हुए, इतनी यात्रा के बाद, इतने प्रेम से सुना है, उसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

दूसरा प्रवचन

सबसे पहले एक प्रश्न पूछा हैः और उससे संबंधित एक-दो प्रश्न और भी पूछें हैं। पूछा है मन चंचल है। और बिना अभ्यास और वैराग्य के वह कैसे स्थिर होगा। यह बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न है और जिस ध्यान की साधना के लिए हम यहां इकट्ठे हुए हैं, उस साधना को समझने में भी सहयोगी होगा। इसलिए मैं थोड़ी सूक्ष्मता से इस संबंध में बात करना चाहूंगा।

पहली बात तो यह कि हजारों वर्ष से मनुष्य को समझाया गया है कि मन चंचल है और मन की चंचलता बहुत बुरी बात है। मैं आपको निवेदन करना चाहता हूं, मन निश्चित ही चंचल है, लेकिन मन की चंचलता बुरी बात नहीं है। मन की चंचलता उसके जीवंत होने का प्रमाण है। जहां जीवन है वहां गति है, जहां जीवन नहीं है जड़ता है, वहां कोई गति नहीं है। मन की चंचलता आपके जीवित होने का लक्षण है जड़ होने का नहीं। मन की इस चंचलता से बचा जा सकता अगर हम किसी भांति जड़ हो जाएं। और बहुत रास्ते हैं मन को जड़ कर लेने के। जिन बातों को हम समझते हैं- साधनाएं, उनमे से अधिकांश मन को जड़ करने के उपाय है। जैसे किसी भी एक शब्द की, नाम की, निरंतर पुनरुक्ति, रिपीटीशन, मन को जड़ता की तरफ ले जाता है। निश्चित ही उसकी चंचलता क्षीण हो जाती है, लेकिन चंचलता क्षीण हो जाना ही, न तो कुछ पाने जैसी बात है, न कुछ पहुंचने जैसी स्थिति है। गहरी नींद में भी मन की चंचलता शांत हो जाती है, गहरी मूर्च्छा में भी शांत हो जाती है, बहुत गहरे नशे में भी शांत हो जाती है। और इसीलिए दुनिया के बहुत से साधु साधु और संन्यासियों के संप्रदाय नशा करने लगे हों, तो उसमें कुछ संबंध हैं। मन की चंचलता से ऊब कर नशे का प्रयोग शुरू हुआ। हिंदस्ुतान में भी साधुओं के बहुत से पंथ; गांजे, अफीम और दूसरे नशों का उपयोग करते हैं। क्योंकि गहरे नशे में मन की चंचलता रुक जाती है, गहरी मूर्च्छा में रुक जाती है, निद्रा में रुक जाती है, चंचलता रोक लेना ही कोई अर्थ की बात नहीं है, चंचलता रुक जाना ही कोई बड़ी गहरी खोज नहीं है और चंचलता को रोकने के जितने अभ्यास है, वे सब मनुष्य की बुद्धिमत्ता को, उसकी विजडम को, उसकी इंटैलिजेंस को, उसकी समझ, उसकी अंडरटैंडिंग को, सबको क्षीण करते हैं, कम करते हैं। जड़ मतिशक मेधावी नहीं रह जाता। तो क्या मैं यह कहूं कि चंचलता बहुत शुभ है, निश्चित ही चंचलता शुभ है, बहुत शुभ है। लेकिन चंचल तो विक्षिप्त का मन भी होता है, पागल का मन भी होता है। विक्षिप्त चंचलता शुभ नहीं है, पागल चंचलता शुभ नहीं है। चंचलता तो जीवन का लक्षण है, जहां गति है, वहां-वहां चंचलता होगी, लेकिन विक्षिप्त चंचलता।

जैसे एक नदी समुद्र की तरफ जाती है, जीवित नदी समुद्र की तरफ बहेगी, गतिमान होगी। लेकिन कोई नदी अगर पागल हो जाए, अभी तक कोई नदी पागल हुई नहीं। आदमियों को छोड़कर और कोई पागल होता ही नहीं। कोई नदी अगर पागल हो जाए, तो भी गति करेगी, कभी पूरब जाएगी, कभी दक्षिण जाएगी, कभी पश्चिम जाएगी, कभी उत्तर जाएगी और भटकेगी, अपने ही विरोधी रातों पर भटकेगी। सब तरह दौड़ेगी, धूपेगी लेकिन सागर तक नहीं पहुंच पाएगी। तब उस गति को हम पागल गति कहेंगे, गति बुरी नहीं है, पागल गति बुरी है। आप यहां तक आए, बिना गति के आप यहां तक नहीं आते, लेकिन गति अगर आपकी पागल होती, तो आप पहले कहीं जाते थोड़ी दूर, फिर कहीं दूर जाते थोड़ी दूर, फिर लौट आते, फिर इस कोने से उस कोने तक जाते, फिर वापिस हो जाते और भटकते एक पागल की तरह। तब आप कहीं पहुंच नहीं सकते थे, वह मन जो

पागल की भांति भटकता है, घातक है, लेकिन स्वयं गति घातक नहीं है, जिस मन में गति ही नहीं है, वह मन तो जड़ हो गया। इस बात को थोड़ा ठीक से समझ लेना जरूरी है। मैं गति और चंचलता के विरोध में नहीं हूं।

मैं जड़ता के पक्ष में नहीं हूं, और हम दो ही तरह की बातें जानते हैं अभी, या तो विक्षिप्त मन की गति जानते हैं और या फिर राम-राम जपने वाले या माला फेरने वाले आदमी की जड़ता जानते हैं, इन दो के अतिरिक्त हम कोई तीसरी चीज नहीं जानते। चाहिए ऐसा चित्त जो गतिमान हो, लेकिन विक्षिप्त न हो, पागल न हो, ऐसा चित्त कैसे पैदा हो, उसकी मैं बात करूं। उसके पहले यह भी निवेदन करूं, कि मन की चंचलता के प्रति अत्यधिक विरोध का जो भाव है, वह योग्य नहीं है और न अनुग्रहपूर्ण है और न कृतज्ञतापूर्ण है। अगर मन गतिवान न हो और चंचल न हो, तो हम मन को न मालूम किस कूड़े-करकट पर उलझा दें और वही जीवन समाप्त हो जाए। लेकिन मन बड़ा साथी है, वह हर जगह से ऊबा देता है और आगे के लिए गतिवान कर देता है।

एक आदमी धन इकट्ठा करता है, कितना ही धन इकट्ठा कर लें, मन उसका राजी नहीं होता, इंकार कर देता है, इतने से कुछ भी न होगा। मन कहता है और लाओ, वह और धन ले आए, मन फिर कहेगा और लाओ, मन कितने ही धन पर तृप्त नहीं होता। कितना ही यश मिल जाए, मन तृप्त नहीं होता, कितनी ही शक्ति मिल जाए, मन तृप्त नहीं होता, यह मन की अतृप्ति बड़ी अद्‌भुत है अगर यह अतृप्ति न हो तो दुनिया कभी कोई आदमी आध्यात्मिक नहीं हो सकता है। अगर बुद्ध का मन तृप्त हो जाता है उस धन से जो उनके घर में उपलब्ध था और उस संपत्ति से और उस राज्य से जो उन्हें मिला था तो फिर बुद्ध के जीवन में आध्यात्मिक क्रांति नहीं होती। लेकिन मन अतृप्त था और चंचल था, उन महलों से वह तृप्त न हुआ और वह मन आगे भागने लगा। इसलिए एक क्षण आया कि मन की अतृप्ति क्रांति बन गई, वह जो डिसकंटेंट है मन की, वह जो मन का असंतोष है, वही तो क्रांति बनता है, नहीं तो क्रांति कैसे होगी जीवन में। अगर मन चंचल न हो तो धन से तृप्त हो जाएगा, भोग से तृप्त हो जाएगा, वासना से तृप्त हो जाएगा।

इजिप्त में एक फकीर था, इजिप्त का बादशाह उससे कभी-कभी मिलने जाता था। एक बार वह बादशाह मिलने गया। फकीर के द्वार पर ही उसकी पत्नी बैठी थी, उस बादशाह ने कहा कि मैं फकीर को मिलने आया हूं। वह कहां है। उसकी पत्नी ने कहा, आप बैठे! दो क्षण विश्राम करें, पीछे जब बगीचे में वह काम करता है, मैं उसे बुला लाऊं, लेकिन वह बादशाह बैठा नहीं। वह खेत की मेड़ पर टहलने लगा, उसकी पत्नी ने फिर भी कहा कि आप बैठ जाएं। उसने कहा, तुम बुला लाओ मैं टहलता हूं। पत्नी ने सोचा शायद खेत की मेड़ पर बैठना उसे शोभायुक्त न मालूम होता है, उसे भीतर बुलाया, चटाई बिछाई और कहा कि आप यहां बैठ जाए। लेकिन वह आकर ढलान में टहलने लगा, उसने कहा, तुम बुला लाओ मैं टहलता हूं। वह पत्नी गई, उसने अपने पति को बुलाया और मार्ग में उससे कहा, कि यह बादशाह तो बड़ा पागल मालूम होता है। मैंने उसे बहुत आग्रह किया, बैठ जाने का, लेकिन वह बैठा नहीं।

उस फकीर ने कहा, उसके योग्य, उसके बैठने योग्य थान हमारे पास नहीं, इसलिए वह टहलता है। उसके बैठने योग्य थान हमारे पास नहीं है इसलिए वह टहलता है, नहीं तो वह जरूर बैठ जाता। मैंने उसे बहुत बार बैठे हुए भी देखा है। यह कहानी मैं इसलिए कह रहा हूं कि हमारा मन जो इतना चंचल है, वह इसलिए कि हम मन के बैठने योग्य थान आज तक नहीं दे सके। अगर हम मन के बैठने योग्य थान दे दें, वह तो तत्क्षण बैठ जाएगा। उसकी सारी चंचलता विलीन हो जाएगी। परमात्मा के पूर्व मन कहीं भी नहीं बैठ सकता है, वही उसके बैठने का थान है। इसलिए मन की आप पर बड़ी कृपा है कि वह चंचल है। और हर कहीं नहीं बैठ जाता है। वह परमात्मा के पहले कहीं भी बैठेगा नहीं, यह उसकी कृपा है और जिस दिन वह बैठेगा उस दिन ही इस कृपा को

आप समझ पाएंगे कि मन मुझे यहां तक ले आया। अगर मन कहीं बैठ जाता तो मैं परमात्मा तक आने में असमर्थ था। मन ले जाएगा हर जगह अतृप्त कर देगा, कहीं रुकेगा नहीं, हर जगह चंचल हो जाएगा, उस क्षण तक चंचल होता रहेगा, जब तक कि परम विश्राम का क्षण न आ जाए, जब तक कि वह बिंदु न आ जाए, जहां मन बैठ सकता है। जिस जगह मन बैठ जाए, बिना जड़ हुए जीवित गतिमान मन, जिस जगह जाकर विश्राम को उपलब्ध हो जाए, जान लेना परमात्मा निकट आ गया।

तो मैं यह नहीं कहता हूं कि मन थिर हो जाए, तो परमात्मा मिल जाएगा, मैं यह कह रहा हूं कि परमात्मा मिल जाए तो मन एकदम थिर हो जाएगा। वह थिरता फिर जाता नहीं होगी, वह थिरता बड़ी जीवंत होगी, बड़ी जागरूक होगी, लेकिन हम करते हैं उलटा हम मन को जड़ करना चाहते हैं, मन के जड़ करने से परमात्मा नहीं मिलेगा केवल गहरी नींद आ जाएगी, केवल मूर्च्छा हो जाएगी, केवल तंद्रा हो जाएगी, केवल मन जड़ हो जाएगा। तो जिसको हम अभ्यास कहते हैं, वह सब अभ्यास करीब-करीब इसी भांति का है जिससे मन जड़ होता है। मैं जो कह रहा हूं, वह अभ्यास नहीं है। अगर ठीक से समझें तो वह अनघयास है। मन ने अब तक जो अभ्यास किए हैं उन सबको छोड़ देना है, कोई नया अभ्यास नहीं करना है, क्योंकि मन जो भी अभ्यास करता है, मन ही तो करेगा न अभ्यास और मन का कोई भी अभ्यास मन के ऊपर ले जाने में मार्ग नहीं बन सकता। वह मन से बड़ा नहीं हो सकता, आप ही अभ्यास करेंगे न, तो आपके चित्त की जो दशा है, उस दशा से ऊपर आप कभी नहीं जा सकेंगे, अभ्यास कौन करेगा आप ही करेंगे, आप का ही मन करेगा। इसलिए मैं कहता हूं, अभ्यास से कभी आप ऊपर नहीं जा सकेंगे, मन का सारा अभ्यास छोड़ दें, शांत हो जाए, अभ्यास भी एक अशांति है। शांत हो जाए जैसे कुछ भी नहीं कर रहे हैं, न करने की स्थिति में हो जाएं, धीरे-धीरे जैसे-जैसे न करने की स्थिति गहरी होगी, आप पाएंगे कि मन विलीन होता जा रहा है। जैसे-जैसे मन शांत और विलीन होगा, वैसे-वैसे आप पाएंगे कि दूसरे लोक में चेतना उठ रही है और जाग रही है। लेकिन आप कहेंगे यह भी तो अभ्यास ही हुआ। हम शांत होकर बैठे, चित्त को विश्राम में ले जाए यह भी अभ्यास, यह भी एक प्रैक्टिस हुई, नहीं मैं आपसे निवेदन करूंगा, यह अभ्यास नहीं है। जैसे अगर मैं यह मुट्ठी बांधे हूं और कोई मेरे पास आए और मैं उससे पूछूं कि इस मुट्ठी को मैं कैसे खोलूं। तो वह मुझसे क्या कहेगा, वह कहेगा खोलने के लिए कुछ भी करने की जरूरत नहीं है, बांधने के लिए जो कुछ कर रहे हैं कृपा कर उतना ही न करें, मुट्ठी तो खुल जाएगी। मुट्ठी का खुलना तो अपने आप हो जाएगा, हम उसे बांधने के लिए जो कर रहे हैं वह भर न करें, तो मुट्ठी का खुलना अभ्यास नहीं है, बांधने के लिए हम जो अभ्यास कर रहे हैं, उसके छोड़ते ही मुट्ठी खुल जाएगी। जैसे एक वृक्ष की शाखा को हम खींच कर पकड़ लें। और किसी से पूछें कि अब इसे इसकी जगह वापिस लौटाने के लिए क्या करें, तो वह क्या कहेगा, वह कहेगा आप कुछ भी न करें, वापिस लौटाने के लिए कृपया इसे रोक रखने के लिए जो कर रहे हैं, वह भर न करें। शाखा अपने आप वापिस लौट जाएगी, हम मन के साथ जो कर रहे हैं निरंतर, क्या कर रहे हैं हम मन के साथ, हम कुछ काम कर रहे हैं मन के साथ, अगर हम वह न करें, मन अपने आप शांत हो जाएगा, मन अपने आप शांत हो जाएगा। जैसे सुबह मैंने आपसे कहा, कि हम मन के साथ निरंतर प्रतिरोध की एक साधना कर रहे हैं रेसिटेंस की साधना कर रहे हैं। हम चौबीस घंटे मन से प्रतिरोधी बने हुए है। किसी न किसी स्थिति के प्रति हमारा प्रतिरोध इतना ज्यादा है कि जीवन भर हम लड़ रहे हैं, मन हमारा चौबीस घंटे लड़ रहा है। कभी भी गैर-लड़ाई की स्थिति में हमारा मन नहीं, यह लड़ाई मन को तनाव से भर देती है, बेचैनी से भर देती है, दुख असफलता से भर देती है और तब, तब मन में इतना ज्यादा रुग्ण, फीवरिश, इतना बुखार की स्थिति हो जाती है कि फिर हम शांति की खोज करते हैं, गुरुओं के पास जाते हैं और उनसे पूछते हैं शांत कैसे

हो जाएं। वह हमसे कहते हैं, राम-राम जपो, ओम-ओम जपो या माला फेरो या मंदिर जाओ या यह पढ़ो या वह पढ़ो या यह मंत्र या वह जाप, वे हमें यह बताते हैं, हम वह जाप शुरू कर देते हैं, बिना इस बात को जाने हुए कि यह जाप कौन कर रहा है वही फीवरिश माइंड, वही अशांत, परेशान मन वही बीमार रुग्ण मन जाप फेर रहा है। बीमार मन, रुग्ण मन जाप फेरेगा तो जाप से क्या फल आने वाला है यह सब खुद भी उसी बीमारी के हिस्से के भीतर यह बात सारी चलेगी। इससे कोई परिवर्तन होने वाला नहीं है, इससे कोई परिवर्तन कभी नहीं हुआ है।

मैं आपसे कहूंगा कि बजाय इसके कि आप शांति की खोज में जाएं, उचित है कि आप समझें कि अशांति क्यों है। मेरे पास तो रोज निरंतर लोग आते हैं, वह यह कहते हैं कि हमें शांत होना है। मैं उनसे पूछता हूं कि इसकी फिक्र छोड़ दें, अशांत व्यक्ति कभी शांत नहीं हो सकता। वह बड़े हैरान हो जाते हैं कि अगर अशांत व्यक्ति शांत नहीं हो सकता है तो क्या हम बिल्कुल निराश हो जाए, मैं उनसे कहता हूं नहीं, अशांत व्यक्ति शांत नहीं हो सकता, लेकिन अशांत व्यक्ति अगर अशांति के मूल कारणों से समझ लें, तो अशांति से मुक्त हो सकता है। और जब अशांति से मुक्त हो जाएगा तो जो चीज शेष रह जाएगी, उसका नाम शांति है। अशांत मन शांत नहीं हो सकता, हां अशांति से मुक्त हो सकता है। अशांति से मुक्त हो जाए तो शांति तो हमारा वभाव है। हम तो उसमें खड़े हो जाएंगे, तो बजाय इसके कि हम शांति खोजें और उसके लिए कोई अभ्यास करें, मेरी दृष्टि यह है कि हम समझें कि हम अशांत क्यों हैं। और अगर हम समझ लें, कि अशांत क्यों हैं? तो जिस चीज को हम समझ लेंगे कि वह हमें अशांति दे रही है उसे छोड़ने के लिए कुछ भी नहीं करना पड़ेगा, क्योंकि जो चीज हमें अशांति दे रही हो वह समझ में ही आ जाए तो छूट जाएगी। आपको समझ में आ जाएगी, जहर रखा हुआ है आप नहीं पीते हैं, आपको समझ में आ जाता है कि यहां दीवाल है यहां दरवाजा है, तो आप दरवाजे से निकलते हैं, दीवाल से नहीं निकलते, क्यों? अभ्यास करते हैं बहुत दीवाल से न निकलने का, कि दरवाजे से निकलने का कोई अभ्यास करते हैं, नहीं, बस जान लेते हैं कि यह दरवाजा है और यह दीवाल फिर दीवाल से आप नहीं निकलते हैं, जिस दिन आपको पष्ट दिखाई पड़ जाए कि अशांति कहां-कहां हैं चित्त में। कौन-कौन से कारणों से उस दिन कोई अभ्यास नहीं करना होता, अंडरटैंडिंग समझ मात्र। जीवन में एक क्रांति ला देती है, आप और ढंग से चलना शुरू हो जाते हैं।

एक दक्षिण में फकीर हुआ। उसके आश्रम में एक युवक बहुत-बहुत बकवादी, बहुत ताअकक और विवादी था, जैसे आमतौर से धार्मिक लोग होते हैं, धार्मिक लोग आमतौर से विवादी होते हैं। और जो जितना बड़ा विवादी होता है, हम कहते हैं वह उतना ही बड़ा महअष है। जो जितना खंडन करें, तर्क करें, विवाद करें कहते हैं उतना ही बड़ा ज्ञानी है। वह युवक भी बड़ा ज्ञानी था, वह सुबह से सांझ तक सिवाय खंडन-मंडन के उसे कोई काम ही नहीं था। यह शात्र ठीक है और वह शात्र गलत है और यह धर्म ठीक है और वह धर्म गलत है निरंतर। एक दिन यात्रा करता हुआ एक संन्यासी मेहमान हुआ उस आश्रम में। उस युवक ने उससे भी बहुत विवाद किया। उसे बहुत पराजित भी किया, विवाद का सुख ही और क्या है सिवाय इसके कि हम किसी को पराजित करें और जहां पराजित करने वाला व्यक्ति मौजूद है, वहां फर्क नहीं पड़ता कि पराजय तर्क कि द्वारा लाई गई है या तलवार के द्वारा, हिंसा मौजूद है। वह एक तरह के लोग हैं, पुराने दिनों में गुरु निकलते थे गांव-गांव खोजते थे दुश्मनों को लड़ने जाते थे उनसे, उनको विवाद में हराने जाते थे। यह सब अहंकार की चेष्टाएं हैं इनका ज्ञान से कोई संबंध नहीं है। वह आते ही उस संन्यासी से जूझ गया और उस संन्यासी को उसने शाम तक बहुत परेशान कर दिया उसके सारे तर्क खंडित कर दिए। सांझ हारा हुआ वह संन्यासी चला गया, वह युवक बहुत

गौरव से अपने मित्रों की तरफ देखा उसके गुरु ने उससे कहा कि देख मैंने तुझे कभी नहीं कहा लेकिन तीन वर्ष से निरंतर तू यहां है और सुबह से सांझ तक विवाद करता है, तर्क करता है, आज मैं तुझसे यह कहता हूं कि कभी मौन भी होकर देखेगा या नहीं। और मैं तुझसे यह निवेदन करता हूं कि इतने दिन तूने तर्क किया और विवाद किया, क्या तुझे मिला, अगर कुछ मिला हो तो मुझे भी बता, मैं भी विवाद करूं, मैं भी तर्क करूं। अगर न मिला हो, तो मौन होकर देख, कब से तू मौन होगा। उस युवक ने क्या किया आपको पता है? उसने आंख बंद की, दो क्षण वह मौन बैठा, और उसने अपने गुरु को कहा, मैं यह अंतिम शब्द बोल रहा हूं कि आगे अब कभी नहीं बोलूंगा। वह अंतिम दिन था, फिर जीवन भर वह नहीं बोला। लोगों ने आकर उसके गुरु को कहा, कि यह युवक तो बिल्कुल पागल मालूम होता है, पहले तो बहुत विवाद करता था और अब बिल्कुल चुप हो गया। उसके गुरु ने कहा, इस जैसे लोग मुश्किल से पाए जाते हैं, इतनी स्पष्ट समझ मुश्किल से होती है। इसे अभ्यास की भी जरूरत न पड़ेगी, इसे चीज दिखाई पड़ी और हो गई। इसने सुना, समझा, दो क्षण आंख बंद करके मौन हुआ, उसे बात दिखाई पड़ गई कि तर्क में जो शांति नहीं थी, वह दो क्षण के मौन में थी। तर्क गया और विलीन हो गया। कोई अभ्यास थोड़े ही करना पड़ता है छोड़ने के लिए।

ज्ञान खुद क्रांति बन जाता है। अभ्यास तो वहां करना होता है, जहां ज्ञान नहीं होता, वहां अभ्यास करना होता है। अभ्यास अज्ञानी का लक्षण हैः जब हम किसी चीज की कोशिश कर-कर के करते हैं, तो वह झूठी हो जाती है। एक आदमी कहता है कि मैं शराब छोड़ने का अभ्यास कर रहा हूं, उसका क्या मतलब? उसका मतलब है कि उसे यह दर्शन नहीं हुए थे कि शराब जीवन के लिए घातक हैं, इसलिए अभ्यास कर रहा है। एक आदमी कहता है कि मैं यह काम करने का अभ्यास कर रहा हूं, वह काम छोड़ने का अभ्यास कर रहा हूं, इसका अर्थ क्या है? अगर दिखाई पड़े तो दर्शन ही क्रांति हो जाती है, परिवर्तन हो जाता है। मेरा आग्रह है कि चीजों को समझना चाहिए, अभ्यास करने की फिक्र नहीं करनी चाहिए। समझ से जो आता है, वह सहज परिवर्तन है, अभ्यास से जो आता है, वह जबरदस्ती लाया हुआ परिवर्तन है और जबरदस्ती लाए हुए परिवर्तन के पीछे विरोधी चित्त निरंतर मौजूद रहता है। वह कहीं खोता नहीं, वह कहीं जाता नहीं। अगर मैं जबरदती साध कर अभ्यास करके, ब्रह्मचर्य को पा लूं भीतर सैक्स मौजूद रहेगा, जा नहीं सकता। इसलिए जिनको हम ब्रह्मचर्य कहते हैं, उनकी दृष्टि और मन में जितनी सेक्सुअलिटी होती है, जितनी कामुकता होती है, उतनी सामान्य जन के मन में नहीं होती, हो भी नहीं सकती। अभ्यास कर करके, ऊपर से ब्रह्मचर्य को थोप लेते हैं, भीतर का काम, भीतर की वासना कहां जाएगी, वह भीतर बैठी रहती है, फिर वह नए-नए रूपों से निकलती है। उसके बड़े अजीब-अजीब रूप है, जिनकी हमें पहचान भी नहीं है। क्या आपको पता है कि जिन लोगों ने वर्ग में निरंतर युवा रहने वाली अप्सराओं की कल्पना की है, ये कौन लोग होंगे। ये वही लोग होंगे, जिनको हम जमीन पर ब्रह्मचर्य की तरह जानते हैं। इन्होंने वर्ग में निरंतर युवा रहने वाली अप्सराओं की कल्पना कर ली हैं। इन्होंने वर्ग में सारे सुख-भोग और सारी वासनाओं की तृप्ति का इंतजाम कर लिया है। ये यहां क्या कर रहे हैं, वहां पाने के लिए और जिस चीज का त्याग कर रहे हैं, उसी को बड़े रूप में पाने का वहां इंतजाम कर रहे हैं। बहुत हैरानी की बात है, बहुत आश्चर्य की बात है कैसे लोग है। ऐसे धर्म-ग्रंथ है जिनमें यह लिखा है कि वर्ग में शराब के चश्मे बहते हैं, झरने बहते हैं, वहीं धर्म-ग्रंथ यहां कहते हैं कि शराब पीना पाप है, वही कहते हैं कि जो यहां शराब छोड़ेगा उसे ऐसा वर्ग मिलेगा, जहां झरने बह रहे हैं शराब के, और वहां कोई चुल्लुओं से पीने का सवाल नहीं है, वहां तो नहाइए-धोइए शराब में कूदीए, पीए और जो भी करना हो। बड़ी हैरानी की बात है। जरूर जिसने

जबरदती शराब पर संयम बांध लिया होगा, उसी के मन में यह कल्पना उठी होगी, वर्ग में शराब के चश्मे बहाने की और तो किसके मन में उठेगी।

जिन लोगों ने जबरदस्ती स्त्रियों से अपने को दूर कर लिया होगा, उन्हीं ने वर्ग में अप्सराओं के नृत्य कल्पित किए होंगे, नहीं तो कौन करेगा, करेगा कौन? यह दमित, सप्रैसड माइंड, दमन किए हुए लोग, इस तरह की कल्पनाएं करेंगे, यह हैरानी की बात नहीं है। और जिन लोगों ने इस तरह का ब्रह्मचर्य साधा है, उन सारे लोगों ने अपने ग्रंथों में, अपने शास्त्रों में स्त्रियों के अंग-अंग का वर्णन भी किया है, ऐसा रसपूर्ण वर्णन किया है कि हैरानी होती है कि कैसे लोग है, इनके दिमाग में जरूर कोई रुग्णता है, कोई खराबी है, त्रियों को नरक का द्वार कह रहे हैं, तो मैं कई दफे हैरान हुआ, मुझे तो ऐसा लगने लगा कि स्त्रियां तो अब तक नरक गई ही नहीं होंगी, क्योंकि पुरुष तो कोई नरक जाने का द्वार है नहीं, स्त्रियां द्वार है, तो उनसे पुरुष तो नरक चले गए होंगे, लेकिन स्त्रियां कहां गई होंगी, स्त्रियां तो नरक जा ही नहीं सकती, वे तो द्वार है। उनके लिए तो कोई द्वार नहीं है, वे सब वर्ग में होंगी, मोक्ष में होंगी पता नहीं कहां होंगी। अगर स्त्रियों ने ग्रंथ लिखे होते, तो वे लिखती, पुरुष नरक का द्वार हैं। लेकिन चूंकि पुरुषों ने लिखे हैं, इसलिए स्त्रियां नरक का द्वार है, और उन पुरुषों ने लिखे हैं, जिन्होंने जोर-जबरदस्ती से अपने कोस्त्री से रोका होगा और दूर रखा होगा। नहीं तो जिस व्यक्ति के चित्त से काम विलीन हो जाए, सैक्स विलीन हो जाए, उसे तोस्त्री और पुरुष में फर्क और फासला भी नहीं रह जाना चाहिए।

बुद्ध एक पहाड़ी के किनारे ध्यान करते थे। वैशाली से कुछ युवक एक वेश्या को लेकर वन में विहार करने को आए होंगे। जब वे खा पी रहे थे और शराब पी रहे होंगे, तब वह वेश्या मौका पाकर उनके हाथ से निकल भागी। वे युवक उसका पीछा करते हुए खोजने निकले, उस जंगल में कोई न दिखा एक झाड़ के नीचे बुद्ध दिखाई पड़ें। तो उन्होंने उन्हें हिलाया और कहा महानुभाव आंखें खोलिए। क्या कोई स्त्री यहां से जाती हुई दिखाई पड़ी। बुद्ध ने कहा, क्षमा करे! कोई दस वर्ष हुए तब से स्त्रियां दिखाई पड़नी संभव नहीं रही। उन्होंने कहा, पागल हो गए। उन्होंने कहा, मैं सत्य कहता हूं। दिखाई पड़ते हैं लोग आते-जाते हुए, लेकिन जिस भांति पहले स्त्रियां पृथक दिखाई पड़ती थी, वैसा अब दिखाई नहीं पड़ता। वह जोस्त्री के पृथक होने का बोध था, वह भीतर काम के कारण था, भीतर सैक्स के कारण था।

मैं सुनता था, एक व्यक्ति यूरोप से वापिस लौटा। उसकी पत्नी उसे एयरपोर्ट पर लेने गई थी। वह नीचे उतरा, वह जो परिचारिकाएं हवाई जहाज पर थी, उसमें से एक परिचारिका ने उसे हाथ मिलाया और विदा दी। उसने अपनी पत्नी को कहा, कि यह परिचारिका बहुत अद्‌भुत है और बहुत सेवा-कुशल है। कुछ नाम बताया कि यह इसका नाम है, उसकी पत्नी ने पूछा आप इसका नाम कैसे जान सकें। उसने कहा, पीछे अंदर तख्ती लगी हुई है, जिसमें सभी परिचारिकाओं, चालकों सबके नाम लिखे हुए हैं और उसने कहा, कृपा करके बताइए चालक का नाम क्या है? वह पति जरा मुश्किल में पड़ गया, जब एक पुरुष किसी तख्ती को पढ़ता है तो सिर्फ स्त्रियों के नाम उसे ख्याल रह जाते, पुरुषों के नाम ख्याल नहीं रह जाते। जिन पत्रिकाओं पर लिखा रहता है, ओनली फार मैन, उनको सिर्फ स्त्रियां पढ़ती है। जिन पर लिखा रहता है सिर्फ पुरुषों के लिए, उनको सिर्फ स्त्रियां पढ़ती है। जिन पत्रिकाओं पर लिखा रहता है सिर्फ स्त्रियों के लिए उनको स्त्रियां नहीं पढ़ती, सिर्फ पुरुष पढ़ते हैं। यह बहुत स्वाभाविक है। यह आश्चर्यजनक नहीं है। हमारे चित्त में जो, जो विरोधी सैक्स के प्रति आकर्षण हैं, वह निरंतर काम करता है, उसी से हमें चीजें अलग दिखाई पड़ती है।

बुद्ध ने कहा, क्षमा करें! इधर दस वर्षों से जब तक कि मैं कोशिश करके ही पहचानने का ख्याल न करूं, तब तक स्त्री और पुरुष को अलग-अलग देख पाना अचानक नहीं हो जाता है। कोई निकला तो जरूर है यहां से

लेकिन स्त्री थी या पुरुष यह कहना कठिन है। जिन लोगों के चित्त से काम और सैक्स विसर्जित हो जाएगा, उनके मन में स्त्रियों के प्रति गालियां नहीं हो सकती है। अगर वे स्त्रियां है तो उनके मन में पुरुषों के प्रति निंदा का, कंडमनेशन का भाव नहीं हो सकता है। अगर यह भाव मौजूद है तो जानना चाहिए, भीतर काम मौजूद है ऊपर से ब्रह्मचर्य को थोप लिया गया है, अभ्यास कर लिया गया। अभ्यास बड़ी खतरनाक बात है, खतरनाक इसलिए कि भीतर कोई क्रांति नहीं होती और ऊपर से हम बिल्कुल बदले हुए दिखाई पड़ने लगते हैं।

मैं एक जगह था, एक बड़ी साध्वी से बातें करता था। बड़ी इसलिए कि उनके बहुत अनुयायी हैं। और तो बड़े-छोटे का कोई पता चलता नहीं दुनिया में, जिसके जितने अनुयायी होते हैं, वह उतना बड़ा हो जाता है। जैसे जिसके पास जितने ज्यादा रुपये होते हैं, उतना बड़ा आदमी हो जाता है, जिस साधु के पास जितनी भीड़ होती है, उतना बड़ा साधु हो जाता है। वह बड़ी साध्वी है, बहुत भीड़-भाड़ उनके आस-पास है। और भीड़-भाड़ देखकर भीड़-भाड़ बढ़ती जाती है। जैसे रुपया रुपये को खींचते हैं, वैसे भीड़ भीड़ को खींचती हैं, तर्क होता है चीजों का अपना। आपके पास बहुत रुपये हैं, रुपये अपने आप चले आते हैं, आपके पास बहुत भीड़ हैं, और भीड़ चली आती हैं। क्योंकि भीड़ सोचती है कि इतनी भीड़ है तो आदमी जरूर बड़ा होगा। तर्क हमारे मन का ऐसा काम करता है, तो बड़ी भीड़ उनके पास है, उन्होंने मुझे भी कहा कि मुझसे मिलना चाहते हैं, मिलना हुआ। जैसे अभी यहां हवाएं चल रही हैं, ऐसी खूब तेज हवाएं थी समुद्र के किनारे, जहां मैं उनसे मिला। तो मेरा चादर उड़कर उनको छूता था, मेरा चादर छूता था तो उनको ऐसा धक्का लगता था, जैसे बिजली का शॉक लग जाए। वह आत्मा परमात्मा की मुझसे बात कर रही थी और कह रही थी कि हम तो शरीर नहीं है हम तो परमात्मा है, आत्मा है, ब्रह्म है, फलां-ढिकां हैं। और मेरा चादर उनको छूता था हवा में, तो उनके प्राण कंप जाते थे, डर के मारे वह हट भी नहीं सकती थी, क्योंकि मैं पूछूंगा कि आप हटी क्यों? मुझसे कह भी नहीं सकती थी कि आपका चादर छू रहा है, तो बड़ा पाप हो रहा है। मगर उनके एक शिष्य ने मेरे कान में कहा कि क्षमा करिए! शायद आपको पता नहीं पुरुष का चादर साध्वी नहीं छू सकती हैं। तो मैंने उनसे पूछा आप भी सहमत है, यह जो मेरे कान में कह रहे हैं। हां, उन्होंने कहा कि यह तो पुरुष का चादर हमें नहीं छूना चाहिए, वअजत है। तो मैंने कहा, मैं बहुत हैरान हूं। मेरे ओढ़ने से चादर भी पुरुष हो गया, आपके ओढ़ने से स्त्री हो जाता है चादर भी। और बातें कर रही है आत्मा-परमात्मा की, बातें आप कर रही है कि हम शरीर नहीं है, शरीर तो मिट्टी है, चादर भी मिट्टी नहीं है आपको, चादर भी पुरुष हैं और शरीर को मिट्टी होने की बात कर रही है। तो मैंने उनको कहा कि यह चादर इसलिए पुरुष हो गया, भीतर जो दबा हुआ काम है, भीतर जो सेक्सुअलिटी है दबी हुई, वह सेक्सुअलिटी इस चादर के छूने से भी चौंकती हैं, जगती है, घबराहट पैदा करती है। यह जो हमारा चित्त है, जितनी चीजों को दबा लेता है और अभ्यास कर लेता है, उतनी कठिनाई में पड़ जाता है। तब मैं आपसे निवेदन करूंगा, अभ्यास के लिए मेरा आग्रह नहीं है। मेरा आग्रह है बहुत सहज जीवन परिवर्तन के लिए, कोशिश करके लाए हुए परिवर्तन का कोई भी मूल्य नहीं है। मूल्य है उस परिवर्तन का जो ज्ञान से आता है। मूल्य है उस परिवर्तन का जो भीतर से आता है और विकसित होता है। मूल्य है उस परिवर्तन का जो अनायास और सहज आपके जीवन को घेर लेता है, आलोक से मंडित कर देता है, उस परिवर्तन का कोई भी मूल्य नहीं है, जिसको खींच-खींच कर, व्यवस्था कर-कर के, आप अपने चारों तरफ खड़ा कर लेते हैं। आपके द्वारा लाए गए परिवर्तन कोई भी अर्थ नहीं रखता, उस परिवर्तन का अर्थ है जो आपके अभ्यास से नहीं आता, बल्कि आपके ज्ञान की छाया की भांति विकसित होता है। तो मैं आपको कहूं, विवेक ही परिवर्तन है, ज्ञान ही परिवर्तन है और ज्ञान कोई अभ्यास नहीं। ज्ञान कोई अभ्यास नहीं, ज्ञान है सतत जागरण, ज्ञान है चेतना का शांत होना और विकसित होना। उसकी मैं

कल बात करूंगा कि विवेक कैसे जाग्रत हो, और ज्ञान कैसे फलित हो। अभी तो इतना कहूंगा, इस प्रश्न के संबंध में और कि ऐसे अभ्यास से आया हुआ वैराग्य, चाहे कोई भी शास्त्र उसका समर्थन करते हों और चाहे कोई भी धर्म-ग्रंथ उसके पक्ष में खड़े हो, उनसे मुझे प्रयोजन नहीं। जो मुझे दिखाई पड़ता है, वह मैं आपसे कह रहा हूं और उसे स्पष्ट निशपक्ष भाव से आप सोचेंगे, यह भी आशा करता हूं। अभ्यास से आया हुआ वैराग्य झूठा है, जो वैराग्य सहज जीवन के जीने से विकसित होता है, वही सच्चा है। वैसे वैराग्य में न तो कुछ छोड़ना है, न किसी से भागना, चीजें अपने आप छूटती है और बदलाहट होती चली जाती है। जैसे सूखे पत्ते वृक्ष से गिर जाते हैं, न वृक्ष को पता चलता, न पत्तों को, वैसे ही जिसके जीवन में ज्ञान की परिपक्वता आती है, उसके जीवन में कुछ चीजें छूटती चली जाती है और बदलती चली जाती है। एक छोटी सी कहानी कहूं, उससे मेरी बात समझ में आ सकें।

एक लकड़हारा और उसकी पत्नी जंगल से वापिस लौटते थे। लकड़हारा साधारण जन नहीं था। अभ्यासी था और बहुत अर्थों में उसने वैराग्य को साधा था। उसने सब तरह के धन-संपत्ति से वैराग्य ले लिया था। घर की सब संपत्ति बांट दी थी, अकंचन हो गया था। घर में एक पैसा भी नहीं रखता था, रोज सुबह लकड़ियां काट लेता, बेच देता, जो बचता खा पी लेता और जो बच जाता सांझ को सूरज डूबने के पहले उसको बांट देता। रात वह परम-दरिद्र होकर सो जाता। सुबह फिर लकड़ियां काटनी, फिर बांट लेना, फिर सो जाना, लेकिन कुछ दिन पानी गिरा था और पांच-सात दिन वह लकड़ियां नहीं काट सका था। तो पांच-सात दिन भूखे ही गुजारने पड़े थे उसकी पत्नी उसको दोनों को। आज पांच-सात दिन के बाद वह लकड़ियां काटकर जंगल से वापिस हो रहा था। आगे खुद था, पीछे पत्नी थी, पांच दिन का भूखा थका-बूढ़ा आदमी सिर पर लकड़ियों का बोझ। लेकिन बगल में उसने देखा कि किसी राहगीर किसी घोड़े के सवार की, बगल में घोड़े के टापुओं के निशान है और पास में ही बड़ी थैली पड़ी है। कुछ मोहरें बाहर पड़ी है सोने की, कुछ थैली के भीतर है, थैली खुल गई है। उसके मन को हुआ कि मैंने तो निरंतर अभ्यास से अनासक्ति को साध लिया, धन के प्रति मेरी कोई आसक्ति नहीं है, लेकिन मेरी पत्नी का मन डोल सकता है। उसका इतना अभ्यास नहीं है, उसका इतना वैराग्य नहीं है। स्त्री ही ठहरी, पुरुष के मन में सदा ऐसा लगता है कि स्त्री को भी कहीं वैराग्य हो सकता है। आपको पता है मुश्किल से कोई धर्म हो, जोस्त्री को वर्ग जाने का हक देता हो। कोई धर्म नहीं देता, धर्म कहते हैं कि स्त्री जब तक पुरुष की पर्याय में नहीं आएगी, तब तक मोक्ष उसका हो ही नहीं सकता। वह जगह-जगह स्त्रियां पूछती है कि हम पुरुष के पर्याय में कैसे आए, इसका रास्ता बताइए, क्योंकि जब तक पुरुष न हो जाए वे अगले किसी जन्म में, तब तक मोक्ष में नहीं जा सकते। यह तो फिर भी बड़ी दया है चीन जैसे मुल्क में तोस्त्री के भीतर आत्मा भी नहीं मानी जाती रही। स्त्री की हत्या कर देते आज तक तीस साल पहले तक चीन में मुकदमा नहीं चल सकता था। क्योंकि स्त्री में कोई आत्मा ही नहीं है। स्त्री तो संपदा है पुरुष की, ऐसे तो हम भी कहते हैं स्त्री संपत्ति, मूढ़ता तो हमारी भी वही है। स्त्री को हम भी संपत्ति ही मानते हैं। अभी भी हमारे में वही भाव है, मालिक है हम, इसलिए पुरुष के नाम से स्त्री जानी जाती है, स्त्री के नाम से पुरुष नहीं जाना जाता। हमारी पकड़ ऐसी रही है, उसने सोचा, स्त्री है इसकी बुद्धि में कहां आ सकता है वैराग्य वगैरह, अभ्यास भी इसका गहरा नहीं है। कहीं इसका मन न डोल जाए, उसने उस थैली को बगल के गड्ढे में सरका कर मिट्टी से ढक दिया। लेकिन वह ढक भी नहीं पाया था कि उसकी स्त्री पीछे आ गई और उसने पूछा क्या करते हैं?

तो उसका यह भी अभ्यास था कि झूठ नहीं बोलना है, सत्य ही बोलना है। तब बड़ी मुश्किल में पड़ गया, दुविधा में, अगर झूठ बोले तो पाप हो जाए, और सत्य बोले तो कहीं स्त्री का मन न डोल जाए। फिर भी मजबूरी में भगवान का नाम लेते-लेते उसने सत्य बोला और उसने कहा कि ऐसी-ऐसी बात हुई, यहां सोने की मुद्राएं

पड़ी थी। मेरा वैराग्य तो दृढ़ है तेरा संदिग्ध है। यह सोचकर की कि भूख-प्यास में घबराहट में कहीं तेरा मन न डोल जाए, मन है चंचल, डोल सकता है। तो व्यर्थ ही तेरे मन को पाप लगे, काली मां लगे, इसलिए मैंने मोहरों को हटाकर गड्ढे में डालकर मिट्टी से ढक दिया है। उसकी स्त्री बहुत जोर-जोर से हंसने लगी। उसके पति ने पूछा इतने जोर से क्यों हंसती हो, बात क्या हो गई इसमें हंसने की। उसने कहा, बात तो बड़ी हो गई। मैं तो सोचती थी कि तुम्हारे मन से सोने का मोल चला गया, लेकिन अभी गया नहीं। तुम्हें सोना दिखाई पड़ता है, तुम्हें वर्ण दिखाई पड़ता है। और मैं दुखी भी मन बहुत हो रही हूं क्योंकि तुम मिट्टी पर मिट्टी को डाल रहे हो और सोच रहे हो कि बड़ा काम कर रहे हो। इस स्त्री का कोई अभ्यास नहीं था, इस स्त्री को कुछ दिखाई पड़ा था। सोने का मिट्टी होना दिखाई पड़ा था, बात खत्म हो गई थी, अभ्यास का कोई सवाल न था। पति को दिखाई तो सोना ही पड़ता था, अभ्यास कर करके कि सब सोना बेकार है, कामिनी-कांचन सब व्यर्थ है। ऐसा दोहरा-दोहरा के मन को समझा-समझाकर बांध-बांध कर संयम कर-करके उन्होंने किसी भांति सोने से अपने को दूर रख लिया था। सोना तो खूब दिखाई पड़ेगा ऐसी स्थिति में, आमतौर से और ज्यादा दिखाई पड़ेगा। आमतौर से ज्यादा दिखाई पड़ेगा, जिसने इस तरह अपने को दूर-दूर बांधा है सोने से, सोना उसे पागल करने लगेगा, सोने के प्रति उसका आकर्षण बहुत तीव्र हो जाएगा, घनीभूत हो जाएगा। वह जहां भी देखेगा, वही उसे सोना दिखाई पड़ेगा। जरा सा भी सोना होगा, उसके प्राण डांवाडोल होने लगेंगे, क्योंकि उसने बांधा है, जबरदस्ती रोका है। जबरदती से रोकने से रुग्ण चाह पैदा होती है, अनासक्ति नहीं। रुग्ण चाह आसक्ति से भी ज्यादा घातक है।

लेकिन चीजें दिखाई पड़े, अनुभव में आए, तो फिर एक परिवर्तन होता है, जो बिना अभ्यास के होता है। मैं नहीं कहता हूं कि कोई अभ्यास करें, मैं कहता हूं विवेक को जगाए, मन को शांति की तरफ ले जाए और देखे चीजों को, जीवन को, आपको खुद दिखाई पड़ने लगेगा कि जीवन में एक सपने की भांति है कोई इसका अभ्यास नहीं करना पड़ेगा और ऐसा बैठ कर रोज दोहराना नहीं पड़ेगा कि जगत मिथ्या है और ब्रह्म सत्य है, ऐसा दोहराना नहीं पड़ेगा। ऐसा घर में रोज-रोज अभ्यास नहीं करना पड़ेगा कि जगत तो मिथ्या है और ब्रह्म सत्य है। जो ऐसा दोहरा-दोहरा कर याद करता हो कि जगत मिथ्या हो और ब्रह्म सत्य उसको दिखाई नहीं पड़ रहा है, नहीं तो दोहराता क्यों? दोहराता वही है जिसे दिखाई नहीं पड़ता, जिसे दिखाई पड़ रहा हो वह क्यों दोहराएगा। दिखाई पड़ना पर्याप्त है और उससे क्रांति हो जाती है। मैं चाहूंगा कि देखना शुरू करें अभ्यास नहीं, लेकिन हजारों साल की शिक्षाएं हैं लीक से बंधी हुई और वे हमसे कहती है अभ्यास करों नहीं तो वैराग्य पैदा ही नहीं होगा। राग में पड़े रहोगे तो कैसे वैराग्य पैदा होगा। इसलिए वैराग्य का अभ्यास करो, राग से हटो, वैराग्य का अभ्यास करो। मैं कहता हूं, नहीं। राग से अगर भागे, और वैराग्य पैदा किया, उस वैराग्य के भीतर भी राग मौजूद रहेगा। वह कहीं जा नहीं सकता है। फिर मैं आपसे क्या कहता हूं, मैं कहता हूं, जहां आप हों, वहीं आंखें खोलकर जीओ। राग में भी आंख खोलकर जीओ, आंखें खोलकर जीने से अगर राग व्यर्थ है तो दिखाई पड़ने लगेगा, वैराग्य लाना नहीं पड़ेगा। राग की व्यर्थता दिखाई पड़ी कि राग झड़ने लगेगा, जैसे पके पत्ते गिरने लगते हैं और जहां हो आप, वहीं एक दिन आप पाओगे, वैराग्य आ गया है। वैराग्य आता है, लाया नहीं जाता, वह कंटीवेट नहीं किया जाता है। संन्यास आता है, लाया नहीं जा सकता है। और आता कैसे है? जहां देखने की दृष्टि निर्मल हो जाती है वहां अपने आप चला आता है। जैसे बैलगाड़ी चलती है। तो पीछे चक्के के निशान बन जाते हैं। वैसे ही जहां भी ज्ञान जीवन में जगता है, वहीं अपने आप पीछे वैराग्य के निशान बनते चले आते हैं। वैराग्य ज्ञान की छाया है, अभ्यास का फल नहीं। और जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है वह ज्ञान से फलित होता है, अभ्यास से फलित नहीं होता।

अभ्यास से कोई एक्टिंग कर सकता है, अभिनेता बन सकता है, पाखंड पैदा कर सकता है। लेकिन वस्तुतः जीवन-क्रांति उससे न कभी पैदा हुई है और न हो सकती है। तो इस संबंध यह मुझे निवेदन करना। इस संबंध में और भी कुछ बातें शायद होंगी, तो वह आप पूछेंगे तो इन दो दिनों में उनकी भी चर्चा हो सकती है। और भी कुछ प्रश्न है थोड़े से, एकाध दो प्रश्न की और मैं बात करूंगा। फिर हम ध्यान के लिए बैठेंगे, जो प्रश्न बच जाएंगे, उनकी मैं कल बात करूंगा।

पूछा है- हम ऐसा क्यों मानते हैं कि परमात्मा की प्राप्ति ही मानो जीवन का ध्येय हैं। क्या यह नहीं हो सकता है कि मानो जीवन का कोई ध्येय न हो, प्रयोजन ही न हो?

इन दोनों बातों में जिसने पूछा है, उसे विरोध दिखाई पड़ता होगा। उसने पूछा है कि क्या मानो जीवन का ध्येय परमात्मा को पाना है? या कि मानो जीवन का कोई ध्येय ही नहीं। उसे दिखाई पड़ता होगा कि इन दोनों में विरोध हैं। मैं आपसे कहूं इन दोनों में विरोध नहीं हैं। परमात्मा को पा लेने पर ही ज्ञात होता है कि जीवन का कोई ध्येय नहीं, उसके पहले तो ज्ञात हो ही नहीं सकता। ऐसी चित्त की स्थिति को पा लेना, जहां कोई ध्येय न हो, कोई ध्येय शेष न रह जाए, वही तो परम ध्येय हैं। जीवन की ऐसी स्थिति को पा लेना, जहां फिर कोई और ध्येय न रह जाए, यही तो परम ध्येय हैं। परमात्मा को पाने का और कोई अर्थ ही नहीं, और कोई अर्थ नहीं। आमतौर से हम जीवन में कुछ न कुछ पाने को ध्येय मानते हैं, कोई धन पाने को, कोई यश पाने को, कोई कुछ और, कोई कुछ और। लेकिन कितना ही धन पाए, फिर भी ध्येय आगे शेष रह जाता है, समाप्त नहीं होता। और धन चाहिए, कितना ही यश पाए, फिर भी ध्येय शेष रह जाता और यश चाहिए। कुछ भी पाते जाए, ध्येय आगे फिर बच रहता है। इसलिए यह कोई भी ध्येय अंतिम ध्येय नहीं हो सकते, क्योंकि इनके बाद ध्येय समाप्त नहीं होता, फिर बच रहता।

सिकंदर हिंदुतान की तरफ आया, उसे ख्याल था सारी दुनिया जीत लेंगे। राते में सुबह जिस डायोजनीज की मैंने बात की, उसे उसका मिलना हुआ। तो डायोजनीज ने उससे पूछा, कि अगर तुम सारी दुनिया जीत लोगे, तो फिर क्या करोगे? उसने कहा, यह प्रश्न तो मेरे ख्याल में नहीं आया। तुम पूछते हो तो मैं बहुत डर गया, क्योंकि सच में ही फिर इसके आगे तो कुछ बचते नहीं, दूसरी दुनिया भी नहीं जिसको मैं जीतूं। अगर मैंने पूरी दुनिया जीत ली, तो मैं बड़ी मुश्किल में पड़ जाऊंगा। फिर मैं क्या करूंगा? यह तो मैंने सोचा नहीं। क्योंकि और आगे कोई दूसरी दुनिया नहीं जिसको मैं फिर जीतने जाऊं। फिर भी डायोजनीज ने कहा, फिर क्या करोगे आखिर। कुछ तो सोचो, उसने कहा फिर मैं विश्राम करूंगा, फिर मैं जीतना छोड़ दूंगा, फिर मैं परम शांति से विश्राम करूंगा।

डायोजनीज खूब हंसने लगा, और उसने कहा फिर तुम पागल हो, अगर विश्राम ही करना है तो मैं विश्राम कर ही रहा हूं। इतनी दौड़-धूप क्यों करते हो, आओ मेरे पास लेट जाओ, इस छोटे से जगह में, झोपड़े में, दो के लायक काफी जगह है। अगर विश्राम ही करना है अंत में और सब खोजो, सब जीत छोड़ देनी है तो इतनी दौड़-धूप क्यों? आ जाओ और अभी शुरू कर दो, इतना समय क्यों खोते हो। सिकंदर ने कहा, बात तो तुम बड़ी ठीक कहते हो। लेकिन बड़ा मुश्किल है, मैं तो आधी यात्रा पर निकल चुका, आधे से लौटना तो ठीक नहीं।

उस डायोजनीज ने कहा, तुम बिल्कुल पागल हो, अब तक दुनिया में पूरी यात्रा किसी ने की ही नहीं। सभी आधे पर ही लौट जाना पड़ता है। क्योंकि जो जहां तक पहुंच जाता है यात्रा, उसके आगे भी बहुत शेष रह जाती हैं।

दो तरह के ध्येय है जीवन मेंः एक जो कभी पूरे नहीं होते, क्योंकि उनको पूरा भी कर लो तो नए ध्येय पैदा हो जाते हैं। और एक ऐसा ध्येय भी है जीवन में, जो पूरा हो जाए तो सभी ध्येय समाप्त हो जाते हैं, उसके आगे फिर करने को कुछ शेष नहीं रह जाता। उस ध्येय का नाम ही तो परमात्मा है, परमात्मा से कोई मतलब थोड़े ही, धनुष-बाण लिए हुए रामचंद्रजी खड़े हैं तो परमात्मा है; कि मुरली बजाते कृष्ण खड़े हैं तो परमात्मा है; कि सूली पर लटके क्राइट खड़े हैं तो परमात्मा है। नहीं परमात्मा का अर्थ है, जीवन में ऐसी परम विश्रांति की अवथा को पा लेना, जिसके बाद पाने को फिर कुछ शेष न रह जाए। परमात्मा जीवन की ऐसी आनंद अनुभूति है जिसके बाद फिर पाने की कोई आकांक्षा शेष नहीं जाती। तो वे पूछते हैं कि यह भी तो हो सकता है कि जीवन का कोई ध्येय न हो, यह सच है, वस्तुतः जीवन का कोई ध्येय नहीं। और जब तक हम ध्येय के पीछे दौड़ते हैं तभी तक हम जीवन से वंचित रहते हैं, जीवन को नहीं उपलब्ध कर पाते। लेकिन इस भांति भी जीवन जीया जा सकता है कि उसमें फिर कोई ध्येय, कोई आकांक्षा और कोई वासना, कोई डिसायर और कोई एंबीशन न रह जाए, इस भांति भी जीवन जीया जा सकता है। उस तरह के जीवन को जीने का ढंग ही परमात्मा का मार्ग है और उस तरह के स्थिति को पा लेना ही परमात्मा को पा लेना है, इन दोनों बातों में विरोध नहीं है। जो पूछा है, पूछने वाले को ख्याल होगा विरोध है। इन दोनों बातों में विरोध नहीं, ये दोनों बातें एक ही है।

जब भी कोई व्यक्ति इतना शांत हो जाएगा कि उसके जीवन में कोई कामना और वासना नहीं रह जाती। फिर वह जीता है ऐसे जैसे हवाएं बहती हैं, जीता है ऐसे जैसे नदियां बहती हैं, जीता है ऐसे जैसे वृक्षों में फूल खिलते हैं, जीता है ऐसे जैसे आकाश में बादल घूमते हैं। जिस दिन मनुष्य ऐसा जीना लगता है कि उसके जीवन में कोई कामना और वासना के सूत्र नहीं रह जाते खींचने वाले। आनंद में और शांति में दो तरह के जीवन के जीने के ढंग हैः एक जीवन का ढंग है, जिसमें वासना आगे से खींचती है तो हम चलते हैं। जैसे कोई आदमी किसी को बांधकर खींच रहा हो, वैसे ही वासना हमें खींचती है। हम सब इसी तरह चलते हैं, कोई हमें खींच रहा है आगे से, कोई कामना खींच रही है। किसी को मिनिस्टर बनना है, किसी को गवर्नर बनना है या किसी को राष्ट्रपति बनना है तो खींच रही है एक वासना उसे। आगे से कोई कामना खींचे जा रही है, वह बंधे हुए बैल की तरह खींचा जा रहा है उसकी तरफ। एक तो इस तरह का जीवन है, वासना से खींचा गया जीवन। एक इस तरह का जीवन है, वासना से खींचा गया नहीं, आनंद से झरा हुआ जीवन। एक छोटी घटना कहूं, उससे भेद समझ में आए।

तानसेन का नाम तो सुना ही है। अकबर बहुत-बहुत प्रभावित था तानसेन से। उसके संगीत से, उसकी कला से, अद्‌भुत थी उसकी क्षमता और प्रतिभा। एक दिन अकबर ने तानसेन को पूछा कि मित्र! बहुत बार एक प्रश्न मन में उठता है, लेकिन पूछता नहीं, संकोच से रह जाता हूं, लेकिन आज पूछूंगा कोई है भी नहीं, तुम अकेले हो। और रात किसी राग को सुनाकर तानसेन वापिस लौटता था, सीढ़ियों पर अकबर ने उसे रोक लिया और कहा, यह पूछना है कल्पना में भी यह बात नहीं बैठती कि तुमसे बेहतर भी कोई बजा सकता होगा, या गा सकता होगा। लेकिन यह बात मन में ख्याल में आती है, तुम्हारा कोई गुरु भी होगा, किसी से तुमने सीखा भी होगा, तो शायद वह तुमसे बेहतर बजाता हो शायद। तुम्हारे गुरु जीवित है, अगर जीवित हों तो मैं उनको भी देखना और सुनना चाहूंगा। तानसेन ने कहा गुरु तो जीवित है लेकिन सुनना उन्हें बहुत कठिन है। क्योंकि वे किसी कारण से बजाते और गाते नहीं, अकारण गाते और बजाते हैं। उनसे कोई कहे कि गाओ और बजाओ, तो वे हंसने लगते हैं। वे कहते हैं मैं जानता ही कहां? कोई प्रलोभन उन्हें बजाने को राजी नहीं कर सकता। तो किसी के कहने से वे कभी गाते-बजाते नहीं, कभी मौज में होते हैं तो नाचते हैं गाते हैं बजाते हैं। अकारण है उनका

बजाना, बिना किसी ध्येय के और बिना किसी लक्ष्य के, तो उन्हें तो सुनना बहुत दूभर, बहुत मुश्किल बात है। कभी रात तीन बजाते हैं, कभी दो बजे, आप कहां सुनने जाएंगे, कैसे सुनने जाएंगे।

अकबर ने कहा, लेकिन कुछ भी हो, मैं सुनना चाहूंगा। तुम्हारी बात सुनकर भी सुनने का मोह और भी तीव्र हो गया। तानसेन पता लगाया, ज्ञात हुआ कि उन दिनों वह कोई तीन बजे सुबह उठकर यमुना के किनारे रहते थे। हरिदास नाम के एक साधु थे। वे कोई तीन बजे, सुबह कुछ गाते हैं, कुछ बजाते हैं। रात दो बजे से तानसेन और अकबर झोपड़े के बाहर छिप कर बैठ गए। कभी किसी बादशाह ने चोरी से किसी का संगीत सुना नहीं होगा, इसके पहले और न इसके बाद। कोई तीन बजे हरिदास ने गीत गाना शुरू किया, अपने तंबूरे पर धुन निकालनी शुरू की। वे गाते रहे और इधर अकबर रोता रहा, फिर गीत बंद हुआ। तो भी अकबर बैठा रहा, तानसेन ने हिलाया और कहा, गीत बंद हो गया अब हम लौट चलें और कहीं पकड़ न लिए जाए इस चोरी करते हुए। अकबर चौंका, जैसे किसी ने नींद तोड़ दी हो, उसने अपने आंख आंसू पोंछें और तानसेन के साथ वापिस लौटा। राते भर चुप रहा बोला नहीं, महल में प्रवेश करते वक्त उसने तानसेन से कहा, मैं सोचता था तुम्हारा कोई मुकाबला नहीं। अब मैं सोचता हूं गुरु के सामने तो तुम कुछ भी नहीं हो। इतना फर्क क्यों हैं, इतना भेद क्यों हैं। तानसेन ने कहा, बात बहुत साफ है। मैं इसलिए बजाता हूं कि कुछ मिलेगा बजाने से, कुछ पा लूंगा बजाने से। मैं बजाता हूं क्योंकि कोई कामना है जो पूरी होगी। बजाना मेरे सामने परिपूर्ण कृत्य नहीं है, टोटल एक्ट, परिपूर्ण कृत्य नहीं, बजाना है मेरे सामने साधन, पाना है कुछ और। पाने पर नजर टिकी रहती है, बजाता हूं, बजाना एक काम हो जाता है। नजर टिकी रहती है पाने पर, इसलिए बजाने में वह सौंदर्य और आनंद नहीं हो सकता है। मेरे गुरु बजाते हैं इसलिए नहीं कि उन्हें कुछ पाना है, बल्कि इसलिए कि उन्होंने कुछ पा लिया है। इस फर्क को मैं फिर से दोहराता हूं, मेरे गुरु बजाते हैं इसलिए नहीं कि उन्हें कुछ पाना है। बल्कि इसलिए कि उन्होंने कुछ पा लिया है। और जो पा लिया है वह बंटना चाहता है, फैलना चाहता है, वह जो आनंद उन्हें उपलब्ध हुआ है, वह बिखरना चाहता है और बंट जाना चाहता है और हवाओं पर सवारी करना चाहता है और दूर-दूर छिटक जाना चाहता है। आनंद पहले हैं, संगीत उससे निकलता है, मेरी तरफ संगीत पहले हैं, आनंद उससे निकलेगा।

दो तरह के लोग हैः वासनाओं से खींचे जाते हुए लोग, उनका जीवन किसी लक्ष्य, किसी इच्छा, किसी महत्वाकांक्षा से प्रेरित होगा। ऐसे जीवन में न शांति हो सकती है, न आनंद हो सकता है। ऐसा जीवन बोझ का जीवन होगा। एक दूसरी तरह का चित्त भी हैः जो किसी बहुत गहरे आनंद को उपलब्ध हुआ है। अब भी जीता है, अब भी श्वास लेता है, चलता है, उठता है, बैठता है, लेकिन अब उसके सारे कृत्य, उस आनंद को बांटने का कृत्य हो जाता है। अब उसे कुछ पाना नहीं है, अब तो उससे कुछ बंटना है, और बिखर जाना है। ऐसा जीवन परमात्मा को उपलब्ध जीवन है। ऐसे जीवन में कोई लक्ष्य नहीं अब, वस्तुतः जीवन में कोई लक्ष्य नहीं है। लेकिन जब तक जीवन में बहुत लक्ष्य है, यह लक्ष्य है धन का, वह लक्ष्य है यश का, वह लक्ष्य है पद का। जब तक बहुत लक्ष्य है, तब तक इन सारे लक्ष्यों से जीवन पीड़ित और दुखी होगा। जब हम कहते हैं परमात्मा को पाना है, तो ऐसा मत समझ लेना कि परमात्मा को पाना भी एक लक्ष्य है। नहीं, परमात्मा को पाने का यह अर्थ है कि सारे लक्ष्यों से मुक्त हो जाना। इस बात को समझ लें, परमात्मा को पाना कोई लक्ष्य नहीं है। जैसे धन को पाना एक लक्ष्य है, और यश को पाना एक लक्ष्य है, ऐसा परमात्मा को पाना एक लक्ष्य नहीं है। लेकिन तथाकथित साधु और संन्यासी परमात्मा को इसी तरह के लक्ष्य बनाए हुए हैं। वह सोचता है परमात्मा को पाना है। लेकिन जो चित्त पाने की इच्छा से भरा है, वह चित्त कभी परमात्मा को पा नहीं सकेगा। परमात्मा को पाता

तो वह चित्त है, जिसके पाने की सारी इच्छा विसर्जित हो गई है। जो न पाने की स्थिति में राजी हो गया और तृप्त हो गया। वह उसी क्षण परमात्मा को पा लेता है।

कल रात मैंने जो कहानी कही थी, उसे आप स्मरण करना। पाने की इच्छा से भरा हुआ चित्त कभी नहीं पा सकता। लेकिन जिसकी पाने की कोई कामना नहीं रह गई, वह पा लेता है। परमात्मा को पाना यह केवल शाब्दिक भूल है, परमात्मा कोई वासना नहीं है हमारी कि हम उसे पा ले। हां, परमात्मा को पा लिया जाता है, उस समय जब चित्त निर्वासना में, डिसायरलेसनेस में मौजूद हो जाता है। कैसे चित्त निर्वासना में, न कुछ पाने की स्थिति में आ सकता है। जिसको मैं ध्यान कह रहा हूं, उसी विधि से, उसी ध्यान के बोध से निरंतर चित्त की वासना क्षीण होती चली जाती है और एक घड़ी आती है कि आपको लगता है कुछ भी पाने को नहीं है। न कुछ पाने की प्रेरणा है, न कुछ पाने की कामना है, चित्त शांत है, मौन है। कुछ भी पाने की कोई पीड़ा और कोई तनाव चित्त को घेर नहीं रहा है। जिस क्षण भी एक क्षण को भी चित्त इस स्थिति में पहुंचेगा, उसी क्षण आप पाएंगे कि परमात्मा का सान्निध्य उपलब्ध हो गया, उसी क्षण आप पाएंगे मेरे और उसके बीच की सारी दीवाल गिर गई। मैं वही हो गया, उस दिशा में जाने के लिए निरंतर निरंतर बोध को जगाने की, विवेक को विकसित करने की और ध्यान को गहरा से गहरा ले जाने की जरूरत है। और कुछ प्रश्न है, उनकी मैं कल आपसे बात करूंगा। अब हम रात्रि के ध्यान के लिए बैठेंगे। ध्यान में कोई फर्क नहीं है।

सबसे पहले तो बहुत आराम से बैठकर शरीर कोढीला छोड़ दें। उसमें कोई कोई तनाव शरीर के किसी अंग पर न हो, और इस बिल्कुल फिक्र न करें उसे बिल्कुल ढीला छोड़ दें। कोई अंग तना हुआ न हो, दूसरी बात आंख को बहुत धीरे से बंद हो जाने दे, बंद करे नहीं बंद हो जाने दे। धीरे-धीरे से पलक कोझपक जाने दे और बड़े हल्के मन से बैठे कोई गंभीरता नहीं, कोई बड़ा काम नहीं करने जा रहे हैं। एक मौज में दो दस क्षण बिताने जा रहे हैं, चुपचाप मौन में। कोई अपेक्षा न रखें कि कोई बड़ी शांति मिल जाएगी, कोई बहुत आनंद मिल जाए। कोई अपेक्षा न रखें। सब अपेक्षा छोड़ दें। बिल्कुल हलके हो जाएं, मन से सारा भार अलग कर ले। और ख्याल कर ले आंख बंद करने के बाद मस्तिश्क पर कोई तनाव न हो, चेहरा खींचा न हो, बिल्कुल ढीला छोड़ दें। माथे पर कोई बल न रह जाए, बिल्कुल ढीला छोड़ दे। ख्याल करे, जब आप छोटे छोटे बच्चे रहे होंगे, वैसे ही हलके-फुलके होकर बैठ जाए, ठीक है, ढीला छोड़ दे शरीर को, आंख बंद हो जाने दे। बिल्कुल हलके-फुलके हो जाएं, अपने को बिल्कुल मिटा दें, आप है ही नहीं। अब सुने, चारों तरफ आवाजें होंगी, झिगुंर बोल रहे हैं, रात का सन्नाटा बोलेगा, उसे शांति से सुने, बिना किसी प्रतिरोध के। आप साक्षी मात्र है, इस शांत रात्रि में झिगुंर बोलती हुई रात्रि में आप साक्षी मात्र है। बस सुन रहे हैं, कुछ कर नहीं रहे हैं। सुनते-सुनते ही मन मौन होता जाएगा, सुनते-सुनते ही मन शांत होता जाएगा, सुनते ही सुनते भीतर एक सन्नाटा छाने लगेगा और ऐसा लगेगा बाहर की सन्नाटे से भरी रात भीतर भी घुस गई। आप उसी में डूब गए, सुने।

दस मिनट के लिए बिल्कुल अपने को छोड़ दें और देखें क्या होता है। आपको कुछ भी नहीं करना है, कुछ होता जाएगा। धीरे-धीरे मन शांत होता जाएगा, मौन होता जाएगा, फिर तो एक बड़ा शून्य हो जाएगा, आप उसमें डूब जाएंगे, आपको पता भी नहीं रहेगा कि आप है। बस यह सन्नाटा रह जाएगा, सुने, शांत बिना किसी तनाव के, बिना किसी विरोध के, चारों तरफ गूंजती हुई रात को सुने। सुनते-सुनते ही मन मौन होता जाता है, मन मौन हो रहा है, मन शांत हो रहा है, हो जाने दे, बिल्कुल छोड़ दे। आप है ही नहीं, छोड़ दे, अपने को बिल्कुल छोड़ दे, सारी पकड़ छोड़ दे। मन शांत हो रहा है, स्वयं की श्वास सुनाई पड़ने लगेगी, सब सुनाई पड़ने लगेगा और भीतर ऐसी चुप्पी आती जाएगी।

मन मौन होता जाएगा, मन मौन होता जाएगा, मन शांत होता जाएगा, मन शांत हो जाएगा। मन बिल्कुल मौन हो जाएं, छोड़ दें, बिल्कुल छोड़ दें, बिल्कुल छोड़ दे, मन डूबता जाएगा, मौन होता जाएगा, छोड़ दे, छोड़ दे, बिल्कुल छोड़ दे, सारी पकड़ छोड़ दे, होने दे जो होता है। देखे मन शांत हो गया, मन कैसा शांत हो गया, मन कैसा शांत हो गया। इसी शांति में डूबते चले जाए, इसी शांति में मिटते चले जाए, इसी शांति में खो जाए। मन शांत हुआ है, हवाएं रह गई है, रात रह गई, सर्द रात रह गई और आप मिट गए, आप अब नहीं है, रात है हवाएं हैं, आवाजें है, आप अब नहीं है, मन बिल्कुल शांत हो गया। धीरे-धीरे दो-चार गहरी श्वास लें, धीरे-धीरे दो-चार गहरे श्वास ले, श्वास भी बहुत शांति लाती हुई मालूम पड़ेगी, भीतर तक प्राण शांत हो जाएंगे।

तीसरा प्रवचन

मनुष्य के जीवन में, और जीवन के आनंद का कोई अनुभव नहीं होता, उसे बदलें, थोड़ी सी बात मैंने आपसे कहीं थी। आज सुबह अंधेपन का कौन सा मौलिक आधार है, उस पर हम बात करेंगे।

कई सौ वर्ष पहले, यूनान की सड़कों पर एक आदमी देखा गया था। भरी दोपहरी में सूरज के प्रकाश में भी वह हाथ में एक कंदील लिए हुए था। लोगों ने उससे पूछा कि यह क्या पागलपन है? इस कंदील को लेकर इस भरी दोपहरी में किसे खोज रहे हो? उस आदमी ने कहा, एक ऐसे आदमी की खोज करता हूं, जिसके पास आंखें हों। वह आदमी खड़ा उस समय का एक बहुत अद्‌भुत डायोजनीज, डायोजनीज को मरे हुए बहुत वर्ष हो गए, डायोजनीज जीवन भर वह लालटेन लिए हुए खोजता रहा उस आदमी को, जिसके पास आंखें हों। लेकिन उसे वह आदमी नहीं मिला। पीछे अमरीका में एक अफवाह उड़ी, कि डायोजनीज फिर लौट आया है और अमरीका में फिर लालटेन लिए हुए खोज रहा है। किसी ने उससे पूछा कि हजार डेढ़ हजार साल हो गए तुम्हें खोजते अब तक वह आदमी नहीं मिला, जिसके पास आंखें हो। डायोजनीज ने कहा, वह आदमी तो नहीं मिला, एक ही संतोष मुझे है कि मेरी लालटेन अब भी मेरे पास है और कोई उसे चुरा नहीं लेता है। और अब तो मैंने आशा भी छोड़ दी है कि वह आदमी मिलेगा। लेकिन हम सबके पास आंखें हैं और कोई यह कहे कि हम आंखों वाले आदमी को खोजते हैं और वह नहीं मिलता, तो हमें हैरानी होगी। लेकिन जो भी जानते हैं, वह कहेंगे कि हमारे पास आंखें हैं, केवल वस्तुओं को और पदार्थ को देख पाते हैं, उसे नहीं जो परमात्मा है। हमारी आंखें अत्यंत पार्थिव को देख पाती है, उसे नहीं जो अपार्थिव है और हमारी आंखें दूसरों को देख पाती है, स्वयं को नहीं। ऐसी आंखों से जीवन का काम तो चल जाता है, लेकिन जीवन का अर्थ उपलब्ध नहीं होता। ऐसी आंखों से हम टटोल-टटोलकर किसी भांति गिरते-गिरते मृत्यु के दरवाजे तक तो पहुंच जाते हैं, लेकिन जीवन के द्वार तक नहीं पहुंच पाते।

इन आंखों को आधार पर चलने वाला और कहीं नहीं पहुंचता सिवाय मृत्यु के, वह कहीं भी दौड़ें, कुछ भी कोशिश करें, कैसे भी प्रयास करें, लेकिन अंत में पाया जाता है कि वह मौत के दरवाजे पर पहुंच गया। यह आंखें जीवन के परम जीवन के द्वार तक नहीं ले जाती मालूम होती हैं। जन्म के बाद हम रोज-रोज मौत की तरफ सरकते जाते हैं और फिर हम चाहे कोई भी उपाय करें और कोई भी सुरक्षा और सिक्योरिटी की व्यवस्था करें, मौत से बचना नहीं हो पाता है। हमारी सारी व्यवस्था शायद उसी से बचने के लिए हैं, धन इकट्ठा करते हैं, यश इकट्ठा करते हैं, शक्ति इकट्ठी करते हैं कि शायद शक्ति से, पद से और धन से हम एक दीवाल बना लेंगे और अपने को मौत से बचा लेंगे। लेकिन हमारा कोई भी उपाय सार्थक नहीं होता, वरन हम जो उपाय मौत से बचने के करते हैं, वे ही उपाय हमें और भी गति से मौत की तरफ ले जाते हैं और यह कोई एक आदमी की कथा नहीं है, सभी की कथा है जो हुए उनकी, जो है उनकी, और जो होंगे उनकी, लेकिन थोड़े से लोग इस कथा से भिन्न भी हैं, कुछ लोग अपवाद भी सिद्ध हुए हैं।

क्राइट को जिस रात पकड़ा गया और सुबह उनको सूली दी जाने को थी, उनके एक मित्र ने ल्यूक ने उनसे पूछा कि क्या आप घबड़ाए हुए नहीं है। कल मौत आ जाएगी, क्या आपके चित्त में परेशानी और बेचैनी नहीं है। क्राइट ने कहा, जिस दिन से भीतर देखा, उस दिन से मौत मिट गई, अब मुझे मारने वाले इस भ्रम में होंगे कि उन्होंने मुझे मारा और मैं नहीं मरूंगा।

मंसूर नाम के एक फकीर को सूली पर लटकाया गया और उसके हाथों में खीलियां ठोकी गई और जब लोगों ने उससे कहा कि तुमने अंतिम कोई बात कहीं है, तो मंसूर ने कहा यही कि तुम जिस भ्रम में हो, परमात्मा करें वह भ्रम तुम्हारा टूटा। उन लोगों ने कहा, कौन सा भ्रम? मंसूर ने कहा यही कि तुम मरते हो या मार सकते हो। जो है प्राणों के प्राण, वह अमृत है, लेकिन हम तो ऐसे अमृत को जानते नहीं। हम तो जानते हैं, रोज चारों तरफ घटती हुई मृत्यु को और खुद भी निरंतर मृत्यु की तरफ सरकते हैं, इसे भी जानते हैं। एक श्वास हम लेते हैं और एक आदमी जमीन पर कहीं मर जाता है। एक श्वास भीतर जाती है और एक आदमी मर जाता है और एक श्वास बाहर निकलती है और एक आदमी मर जाता है। प्रति क्षण चारों तरफ मौत घटित हो रही है और हम उसके बीच खड़े हैं और हम कुछ भी करें और कहीं भी भागे।

एक बादशाह हुआ, उसने रात एक स्वप्न देखा। स्वप्न में उसने देखा कि कोई काली छाया उसके कंधे पर हाथ रखे हैं और उससे कह रही है कि कल ठीक समय और ठीक थान पर मुझे मिल जाना। मैं मृत्यु हूं और कल तुम्हें लेने आ रही हूं। कल सूरज डूबने के पहले ठीक जगह उपस्थित हो जाना, उसकी घबराहट में नींद टूट गई। उसने अपने राज्य के बड़े ज्योतिष्यिं को बुलाया और पूछा कि मैंने ऐसा वप्न देखा और स्वप्न विश्लेष्कों को बुलवाया, उस समय के जो फ्रायड होंगे और उनको बुलवाए और उनसे पूछा, इस स्वप्न का क्या अर्थ है? और उन व्यक्तियों से पूछा कि स्वप्न का क्या अर्थ है और मैं क्या उपाय करूं, क्योंकि मुझे खबर मिली स्वप्न में कि आज संध्या होने के पूर्व, मौत मुझे पकड़ ले जाएगी। उन सारे लोगों ने बहुत सोचा और उन्होंने कहा कि सोचने में समय खोना गलती होगी, आपके पास जो तेज से तेज घोड़ा हो उसे लेकर आप भागने की कोशिश करें। जिस राजधानी में वह था दमिश्क में, उसके मित्रों ने और उसके ज्ञानियों ने सलाह दी कि तेज से तेज घोड़ा लें और भागें और सूरज डूबने के पहले जितनी दूर निकल सकें निकल जाएं और इसके सिवाय हम कुछ भी सोचने में समय गंवाना ठीक नहीं समझते, हम सोचते रहे और विश्लेषण करते रहे और व्याख्या और शास्त्रों में खोजते रहे और सांझ हो जाए और मौत हो जाए फिर कौन जिम्मेवार होगा। उस राजा ने फिर एक क्षण भी न खोया, उसने अपने अस्तबल से एक तेज से तेज घोड़ा बुलाया, उस पर वह बैठा और वह भागा। अपने मित्रों और अपनी पत्नियों और अपने बच्चों को विदा के दो शब्द भी कहने की उसे फुर्सत न थी। रोते हुए लोगों ने विदा दीं, लेकिन फिर भी उसे एक ख्याल था कि बहुत तेज घोड़ा उसके पास है और सांझ होने के पहले वह सैकड़ों मील दूर निकल जाए। सच में ही वह सैकड़ों मील दूर निकल गया, उस दिन न उसने खाना खाया, न पानी पीया, न वह एक क्षण को विश्राम के लिए रुका। वह घोड़े को भगाता ही रहा, भगाता ही रहा, आखिर में सूरज डूबने के पहले वह सैकड़ों मील दूर एक बगीचे में जाकर झाड़ के नीचे रुका, वह घोड़े को बांध ही रहा था कि मौत पीछे आकर खड़ी हो गई और उसने कहा, मित्र! हम हैरानी में थे, इतनी दूर तुम्हारी मौत होने को थी, तुम पता नहीं आ भी पाओगे या नहीं आ पाओगे, ठीक जगह तुम आ पहुंचे और ठीक समय पर, घोड़ा तुम्हारा लाजवाब है।

जिंदगी भर हम भागते हैं, भागते हैं और आखिर में वहां पहुंच जाते हैं, जिससे हम भागते थे और जिससे हम बचते थे और जिसके लिए हमने घोड़े दौड़ाएः यश के और धन के और शक्ति के और पद के, उसी जगह हम पहुंच जाते हैं। और तब मौत हमें धन्यवाद देगी कि तुम्हारी दौड़ बहुत अच्छी थी, तुम्हारे पास घोड़े बहुत तेज थे और तुम ठीक जगह और ठीक समय तक आ पहुंचे हों। यह जो जिंदगी है, जो अंततः हमें मृत्यु के दरवाजे पर ले जाती है जरूर कहीं गलत और भूल भरी है, अगर जीवन ठीक हो, तो परम जीवन के द्वार पर पहुंच जाना चाहिए। लेकिन बहुत कम सौभाग्यशाली लोग है, जो वहां पहुंचते हो और नहीं पहुंचते तो एक ही कारण है, हम किसी भांति आंतरिक जीवन के प्रति, वास्तविक जीवन के प्रति अंधे हैं। हमें पदार्थ ही दिखाई पड़ता है,

परमात्मा नहीं और जब तक परमात्मा दिखाई न पड़े। पदार्थ के ऊपर चेतना के जब तक दर्शन न हो, आकार से भिन्न निराकार, अनुभूतियों का द्वार न खुलें, तब तक जानना चाहिए आंखें बंद हैं। जो आंखें आकार ही देखती है, वे आंखें देखती ही नहीं और जो आंखें केवल ठोस वस्तुओं को ही देख पाती है, वे आंखें देख ही नहीं पाता। सारे आकार के साथ कुछ निराकार व्याप्त है और इस सारी देह के साथ कुछ अदेही भी और इस सारे पदार्थ के भीतर कोई और भी मौजूद है, उसे देखने वाली आंखों के लिए जरूरी है कि वे अंधी न हों। मैंने कहा रात श्रद्धा और विश्वास... बात थोड़ी उलटी लगेगी, क्योंकि हजारों वर्षों से यही सिखाया गया है कि जो श्रद्धा नहीं करता और विश्वास नहीं करता, वह तो परमात्मा को जान ही नहीं सकेगा। मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि जो श्रद्धा करता है और विश्वास, उसके लिए परमात्मा को जानने का कोई भी उपाय नहीं है। किसी कारण से यह मैं कहना चाहता हूं, इस कारण से यह तो मैं चाहता हूं। क्योंकि श्रद्धा करने वाला मन, विश्वास करने वाला मन, अंधा हो जाता है। श्रद्धा का अर्थ है, जो हम नहीं जानते, उसे मान लें, जो हमने नहीं देखा, उसे स्वीकार कर लें। जो हमने नहीं देखा, उसे स्वीकार कर लें, जो हमने नहीं सुना, उस पर आस्था कर लें। जो हमारा अनुभव नहीं है, वह हमारी मान्यता बन जाए, श्रद्धा का यही अर्थ है। मैं कहूं कि परमात्मा है और आप विश्वास कर लें, यह श्रद्धा होगी। हो सकता है- मेरे लिए वह ज्ञान हो, लेकिन मेरा ज्ञान आपका ज्ञान बन जाए, तो श्रद्धा है आपके लिए, हो सकता है, मैंने जाना हो, मैं आपसे कुछ कहूं और उसे आप स्वीकार कर लें, वह आप का जाना हुआ नहीं है। आप अंधेपन में गिर रहे हैं, आप अंधे हो रहे हैं, आप अपने भीतर की अंधी शक्तियों को बल दे रहे हैं। श्रद्धा अंधा करती है और जो भी अंधा... बहुत सचेत आंखें चाहिए, उसके लिए तो बहुत-बहुत उन्मुक्त प्रकाश से आलोक से भरी हुई आंखें चाहिए। उसके लिए श्रद्धा का अंधकार और अंधापन, न ही उसका मार्ग है। लेकिन सिखाया हमें यह गया है कि हम श्रद्धा करें और हम श्रद्धा करते रहे।

लेकिन एक बात में हम सब सहमत है, मुश्किल से कभी कोई व्यक्ति पैदा होता है, जो इंकार करता है श्रद्धा से, जो इंकार करता है श्रद्धा से उसकी खोज शुरू होती है, उसकी इनकवायरी शुरू होती है, जो श्रद्धा के घेरे में आबद्ध हो जाता है, उसकी खोज बंद हो जाती है। खोज तो हम तभी करते है, जब हम किसी दूसरे को मानने के लिए राजी नहीं होते। तभी हमारे प्राण अपनी खोज पर निकलते हैं, तभी हमारे प्राणों की शक्ति जागती है और हम, हम खोज के लिए आगे बढ़ते हैं, हमारी खोज की यात्रा शुरू होती है।

मैं यह नहीं कह रहा हूं कि अश्रद्धा करें, अश्रद्धा भी श्रद्धा का ही एक रूप है। मैं यह कह रहा हूं कि अंधे न बनें, श्रद्धा में या अश्रद्धा में। एक आदमी मानता है ईश्वर है, हम कहते हैं यह श्रद्धालु हैं। एक आदमी मानता है ईश्वर नहीं है, हम कहते हैं यह अश्रद्धालु हैं। मेरे लिए दोनों अंधे हैं, क्योंकि जो कहता है, ईश्वर है, उसने भी नहीं जाना और जो कहता है ईश्वर नहीं है, उसने भी नहीं जाना। वे दोनों बिना जाने कुछ बात को स्वीकार कर रहे हैं, जो बिना जाने वीकार करता है, चाहे आस्तिक हो, चाहे नास्तिक है, वह श्रद्धालु हैं और श्रद्धालु अंधा हो जाता है। आस्तिक भी अंधे हैं और नास्तिक भी... आपका आस्तिक या नास्तिक होना इस बात पर निर्भर है कि आप किस प्रपोगेंडा और किस प्रचार के घेरे में पैदा हुए हैं। अगर आप हिंदू घर में पैदा हुए हैं, तो आपकी एक तरह की श्रद्धाएं बन जाएंगी। अगर आप मुसलमान घर में पैदा हुए हैं, तो दूसरी तरह की। अगर आप सोवियत रूस में पैदा हुए हैं, तो नास्तिक की तीसरी तरह की। यह सारी की सारी श्रद्धाएं, आस-पास के वातावरण, प्रचार, सिद्धांतों की हवाओं में पैदा होते हैं। यह आपका ज्ञान नहीं है। और जो व्यक्ति इनको पकड़ लेता है, उसे फिर ज्ञान के खोज की जरूरत ही समाप्त हो जाती है। फिर वह खोज ही नहीं करता। खोज तो तब शुरू होती है, जब एक व्यक्ति बाहर से आए हुए किन्हीं सिद्धांतों को भी स्वीकार नहीं करता है- मैं यह नहीं कह रहा हूं कि वह

अस्वीकार करता है, इस थोड़े से बारीक भेद को समझ लेना जरूरी है- अस्वीकार भी नहीं करता, स्वीकार भी नहीं करता। वह यह कहता है कि जो भी बाहर है, जो भी दूसरों का कहा हुआ है, वह मेरा हुआ जाना हुआ नहीं है। इसलिए मैं कैसे कहूं कि वह सच है, या मैं कैसे कहूं कि वह झूठ है, वह अपने को मुक्त रखता है, वह कोई आग्रह में अपने को आबद्ध नहीं करता है। वह किसी जंजीर को पकड़ता नहीं, वह यह कहता है कि मैं नहीं जानता हूं, मुझे पता नहीं कि ईश्वर है या नहीं, मुझे पता नहीं कि हिंदू ठीक कहते हैं कि मुसलमान, कि ईसाई, कि जैन, मुझे पता नहीं। मैं निपट अज्ञानी हूं, और इस अज्ञान में मैं कोई भी आग्रह करूंगा, तो वह आग्रह खतरनाक होगा, अज्ञानियों के आग्रह बहुत खतरनाक सिद्ध हुए हैं। सारी दुनिया में धर्म लड़ते हैं, अज्ञानियों के आग्रह के कारण, जिन्हें कुछ भी पता नहीं है, जिन बातों का उन्हें पता नहीं है, उन बातों के लिए मस्जिदों, मंदिरों को जलाने को तैयार है। जिन बातों का उन्हें पता नहीं है, उनके लिए वह शास्त्रों को नष्ट करने को या नए शास्त्र निर्मित करने को तैयार है। जिन बातों का उन्हें कोई पता नहीं है, उनके लिए वे लाखों लोगों की हत्या करने को या मर जाने को तैयार है।

अज्ञान में पकड़ी गई श्रद्धाएं, बहुत सुसाइडल सिद्ध हुई, बहुत आत्मघाती सिद्ध हुई। सारी दुनिया में धार्मिक लोग लड़ते रहे, कहीं धार्मिक व्यक्ति भी लड़ सकता है। धार्मिक लोग हत्याएं करते रहे हैं, धार्मिक व्यक्ति भी हत्याएं कर सकता है। धार्मिक लोग मंदिरों की मूर्तियां तोड़ते रहें, और मस्जिदों को जलाते रहे, धार्मिक व्यक्ति भी यह कर सकता है और अगर धार्मिक यह करेगा तो फिर अधार्मिक के लिए क्या शेष रह जाता है। फिर अधार्मिक क्या करेगा? नहीं, यह धार्मिक व्यक्ति ने नहीं किया है, यह किया है अज्ञान में पकड़ी हुई श्रद्धा वाले लोगों ने, अज्ञान और श्रद्धा दोनों मिलकर बहुत खतरनाक चीज बन जाती है। लेकिन मैं आपको स्मरण दिला दूं कि अज्ञान के ही कारण हम श्रद्धा कर लेते हैं, हम नहीं जानते इस सत्य को वीकार करने का साहस बहुत कम लोगों में होता है। मैं फिर से दोहराऊं हम नहीं जानते है इस सत्य को स्वीकार करने का साहस बहुत कम लोगों में होता है और जिस व्यक्ति ने यह साहस ही नहीं है, वह समझ लें कि सत्य की खोज उसका जीवन नहीं बन सकती, यह प्राथमिक साहस है, यह तो पहला चरण हैः कि मैं इस बात को जान लूं कि मैं नहीं जानता हूं। और जो अपने अज्ञान को स्वीकार कर लेता है, वह सभी तरह की श्रद्धाओं से मुक्त हो जाता है। जो अपने अज्ञान को वीकार करने से बचना चाहता है और जो यह दिखाना चाहता है कि नहीं मैं जानता हूं, इस थोथे अहंकार की पूर्ति करना चाहता है। वह किसी न किसी तरह की श्रद्धा को पकड़ लेता है और कहने लगता है कि ईश्वर है या ईश्वर नहीं है। आत्मा है या आत्मा नहीं है, पुनर्जन्म है या पुनर्जन्म नहीं है और इस तरह की बहुत सी बकवासें है, उनमें से वह किसी को पकड़ लेता है, और उसको दोहराने लगता है और चूंकि वह खुद जानता नहीं है, बहुत कमजोर है इसलिए अगर आप उसकी बात न मानें तो वह तलवार लेकर खड़ा हो जाता है। क्योंकि उसके पास मनाने का और कोई उपाय भी नहीं है वह खुद तो जानता नहीं है, तो मनाने का एक ही उपाय है कि वह तलवार उठा लें, मनाने का एक ही उपाय है कि वह भीड़ खड़ी कर लें, मनाने का एक ही उपाय है कि वह संख्या बढ़ाता जाए, इसलिए तो हिंदू फिक्र करता है- संख्या कम न हो जाए, मुसलमान फिक्र करता है, संख्या बढ़ जाए, ईसाई फिक्र करता है और लोगों को पी जाओ और सारे धर्म फिक्र करते हैं हमारी संख्या बढ़े और कम न हो जाए, क्योंकि संख्या बल है, तलवार का बल, शक्ति का बल, भीड़ का बल, उस बल के आधार पर ही हम अपने अज्ञान में पकड़ी हुई श्रद्धाओं के लिए समर्थन दे सकते हैं और हमारे पास कोई भी समर्थन नहीं है।

ज्ञान का जहां समर्थन है, वहां शक्ति का और हिंसा का कोई समर्थन कभी नहीं पकड़ा जाता है। जहां अज्ञान है, वहां समर्थन में यही बात होती है, कमजोर क्रोधी हो जाता है, कमजोर लड़ने को तैयार हो जाता।

यह दुनिया के धार्मिक लोग लड़ते रहे हैं, इस बात की सूचना है कि अज्ञानी और कमजोर लोगों ने दूसरों के ज्ञान को जबरदस्ती अपना ज्ञान बना लिया है। और तब कितने खतरे हुए हैं उनका हिसाब नहीं है, कितने लाखों लोग काटे गए हैं उसका कोई हिसाब नहीं, कितने लाखों लोग जलाए गए है, उसका कोई हिसाब नहीं है। और जिन्होंने यह जलाए है, उनके बुनियाद में है अज्ञानपूर्ण श्रद्धा।

पहली बात जानने की जरूरी है, कि किसी भी तरह की श्रद्धा, जो मैं अपने अज्ञान में पकडूंगा, मेरे लिए परतंत्रता बन जाएगी। मैं फिर उस श्रद्धा के ऊपर नहीं उठ सकूंगा। उस श्रद्धा के ऊपर उठने में मेरे प्राण कंपने लगेंगे, मुझे भय मालूम होने लगेगा, मुझे डर लगने लगेगा, क्यों? डर लगेगा इस बात का और वह तो टूटना बिल्कुल स्वाभाविक है, जो व्यक्ति खोजने के लिए चला है, वह अगर किसी भी श्रद्धा को पकड़ेगा, उसकी श्रद्धा टूटनी स्वाभाविक है, खोज के पहले ही टूट जानी स्वाभाविक है, नहीं तो खोज कैसे शुरू होगी। खोज तो तभी शुरू हो सकती है, जब मैं निश्पक्ष हूं, जब मेरा माइंड, मेरा मन अनप्रजूडिसड है, बिना किसी पक्षपात के, लेकिन हम सब तो पक्षपात से भरे हैं। और फिर हम कहते हैं, हम सत्य को खोजना चाहते हैं और जीवन को जानना चाहते हैं, लेकिन अपने पक्षपात को छोड़ने को हम राजी नहीं है। और हमारे पक्षपात बहुत गहरे हमारे प्राणों को जकड़े हुए हैं, पक्षपात मनुष्य के चित्त की सबसे बड़ी परतंत्रता है और पक्षपात खड़े होते हैं श्रद्धाओं से, विश्वासों से, बिलीफ से, इसके पहले कि कोई आदमी सच में खोजने निकले कि क्या है उसे सब पक्षपातों से मुक्त हो जाना होगा, उसे सारे विश्वासों से मुक्त हो जाना होगा, उसे सारी श्रद्धाओं से मुक्त हो जाना होगा। उसे यह सारी जंजीरें तोड़ देनी होंगी, यह जंजीरें कोई दूसरा हमारे ऊपर नहीं लादता है, हम खुद बांधते हैं, इसलिए तोड़ने के लिए भी हम हमेशा स्वतंत्र है। कोई दूसरा हम पर बांधता नहीं, यह खुद हम स्वीकार करते हैं। हम खुद इनको अंगीकार करते हैं, सुरक्षा के लिए हम इनको अंगीकार कर लेते हैं, अज्ञान में असुरक्षा है, इग्नोरेंस में इनसिक्योरिटी है, अज्ञान में कुछ राता नहीं मिलता, कोई किनारा नहीं मिलता, तो हम किसी ज्ञान के किनारे को पकड़ लेते हैं, ताकि सहारा मिल जाए, सुरक्षा मिल जाए, मुझे भी लगें कि मैं भी जानता हूं। लेकिन अज्ञान में पकड़ा गया कोई भी ज्ञान, ज्ञान कैसे हो सकता है, पकड़ने वाला जब अज्ञान में हैं तो वह जो भी पकड़ेगा, वही अज्ञान हो जाएगा। अज्ञान की स्थिति में कोई ज्ञान, ज्ञान नहीं बन सकता, अज्ञानी गीता को पकड़ेगा, गीता खतरनाक हो जाएगी। अज्ञानी महावीर को पकड़ेगा, महावीर खतरनाक हो जाएंगे, अज्ञानी मोहम्मद को पकड़ेगा, मोहम्मद खतरनाक हो जाएंगे। वह अज्ञानी का जो जहर है, वह जो भी पकड़ेगा, वही जहर वहां व्याप्त हो जाएगा। अज्ञानी ने जो भी पकड़ा है, वह खतरनाक हो गया है। पहली बात जानने की है, अज्ञानी को अपने भीतर अज्ञान को नष्ट करना है, ज्ञान को पकड़ना नहीं, अज्ञान नष्ट हो जाए तो ज्ञान का जन्म उसके भीतर होगा, और अगर वह ज्ञान को पकड़ लें, अज्ञान भीतर होगा ऊपर ज्ञान की बातें होंगी। पंडित में और क्या होता है? भीतर अज्ञान होता है, और ऊपर ज्ञान की बातें होती है; भीतर घना अंधकार होता है, ऊपर शास्त्र होते हैं; भीतर निपट अंधकार होता है, ऊपर मंत्र और शब्द और शास्त्रों को जाल होता है। उस जाल के भीतर जाने पर निपट अज्ञानी आदमी खड़ा हुआ है।

एक पंडित से तो एक सीधा-सादा अज्ञानी भी बेहतर है, इसलिए कि उसे अपने अज्ञान का बोध होता है। जिसे अपने अज्ञान का बोध होता है, उसे पीड़ा होती है, दुःख होता है, उसे लगता है कि इस अज्ञान को मैं कैसे मिटाऊं, लेकिन जिसको अज्ञान का बोध ही मिट जाए और थोथे ज्ञान को पकड़ कर वह बैठ जाए और सोचे कि मैंने जान लिया, वह तो डूब गया, अज्ञान भीतर रहेगा, थोथा ज्ञान बाहर होगा। आज तक शायद ही कभी कोई पंडित ने सत्य जाना हो, वह जान नहीं सकता। शब्द उस पर इतने भारी होते हैं, दूसरों के सिद्धांत उसके प्राणों

पर पत्थर की तरह सवार होते हैं। वह बातें जानता है, सिद्धांत जानता है, तर्क जानता है, उनके लिए आरग्यू कर सकता है, लड़ सकता है, विवाद कर सकता है। पच्चीस तरह की बातें और व्याख्याएं कर सकता है, लेकिन जान नहीं सकता। जानने की पहली शर्त तो यह है कि वह दूसरे के ज्ञान को स्वीकार-अस्वीकार न करें। कैसी होगी वह स्थिति, जब हम दूसरों के ज्ञान को स्वीकार और अस्वीकार नहीं करेंगे। बड़ी सरल होगी, बड़ी हयूमलिटी की होगी, बड़ी विनम्रता की होगी, क्योंकि हम जानेंगे, हम नहीं जानते। सोकरिटीस से किसी ने कहा, कि लोग कहते हैं कि तुम सबसे बड़े ज्ञानी हो, सोकरीटीज ने कहा, उनसे कहना कि वह भ्रम में है, क्योंकि जैसे-जैसे मैं जानने लगा, वैसे-वैसे मुझे पता चला कि मैं तो बड़ा अज्ञानी हूं। जैसे-जैसे मैं जानता गया, वैसे-वैसे मेरा अज्ञान स्पष्ट होता गया और अब तो मैं एक ही बात जानता हूं कि मैं कुछ भी नहीं जानता हूं। यह जो स्थिति है चित्त की अगर पैदा हो जाए, तो एक क्रांति घटित हो जाए।

क्या हमारे मन की इतनी तैयारी है कि हम अज्ञानी होने को राजी हो जाए। अज्ञानी हम है, होना नहीं है, सिर्फ इस तथ्य को स्वीकार करना जरूरी है कि हम अज्ञानी है। क्या सच में आपको पता है कि ईश्वर है- क्या सच में आपको पता है कि आपके शरीर के भीतर कोई आत्मा है- कभी कोई झलक आपको आत्मा की मिली, कभी कोई स्पर्श हुआ, कभी ईश्वर से कोई मुठभेड़ हुई, कोई मुलाकात हुई, कोई एनकाऊंटर हुआ। कभी पदार्थ के अतिरिक्त और कुछ देखा और जाना है। मृत्यु के घेरे के बाहर अमृत की कोई भी झलक कभी मिली। नहीं, सुनी है बातें, शास्त्रों में पढ़ी है। गुरुओं के मुंह से सुनी है और उनको हम पकड़े बैठे हैं। और उनको हम पकड़े रहे, तो हम उन्हें पकड़े-पकड़े समाप्त हो जाएंगे। समाप्त हो जाएंगे बिना उसको जाने जो जाना जा सकता है और निरंतर निकट था। इसके पहले कि जीवन समाप्त हो जाए, यह चित्त की परतंत्र स्थिति समाप्त होनी चाहिए। इस तथ्य को बहुत स्पष्ट रूप से प्रगट हो जाना चाहिए, हमारे मन के समक्ष कि मेरे जानने का कुछ भी आधार नहीं है। क्या होगा उससे, क्यों मैं इतना जोर दे रहा हूं इस बात पर कि अज्ञान स्पष्ट हो जाना चाहिए। इसलिए जोर दे रहा हूं कि जैसे ही अज्ञान स्पष्ट हो आपके जीवन में क्रांति की संभावना शुरू हो गई। जैसे हम यहां बैठे है और चारों तरफ आग लग जाए, तो जिसको यह दिखाई पड़े कि चारों तरफ आग लगी है वह फिर यहां आराम से और शांति से बैठा नहीं रह जाता, लेकिन फिर दिखाई पड़े कि नहीं कोई आग वगैरह नहीं लगी। वह यहां आराम से बैठा रहेगा और शांति से बैठा रहेगा। यह तथ्य दिखाई पड़ जाए कि मेरे भीतर गहन अंधकार और अज्ञान है, तो वह अज्ञान और वह अंधकार आपको फिर शांति से बैठने नहीं देगा। उसकी पीड़ा, उससे मुक्त होने के लिए द्वार बनेगी, मार्ग बनेगी, बीमारी का पता चल जाए। तो हमारे भीतर वाथ्य की सहज आकांक्षा, लेकिन बीमारी का पता न चले, तो वाथ्य की सहज आकांक्षा सक्रिय नहीं हो पाती। अज्ञान का पता चल जाए तो हमारे भीतर ज्ञान की गहन अभीप्सा है। लेकिन अज्ञान का पता न चलें, तो ज्ञान की खोज प्रारंभ भी नहीं हो पाती। अज्ञान का बोध मनुष्य को ज्ञान की प्यास से भर देता है। अज्ञान का बोध ही ज्ञान की प्यास से भरता है। लेकिन जो लोग झूठे ज्ञान को पकड़ लेते हैं, उनके भीतर ज्ञान की प्यास मंदी होती जाती है, धीमी होती जाती है। धीरे-धीरे जो बुझ भी जाती है। ज्ञान की प्यास जगे, उसके लिए अज्ञान का तीव्रतम बोध आवश्यक है और मजा यह है कि अज्ञान मौजूद हो, उसको कहीं से लाना नहीं है, केवल बोध मौजूद नहीं है। अज्ञान मौजूद है, बोध मौजूद नहीं है, अज्ञान से अगर हमारा बोध संयुक्त हो जाए, वह तभी होगा जब हम इस झूठे ज्ञान के जाले और ताने-बाने को तोड़ दें। इसे तोड़ने में कोई वर्षों के अभ्यास करने की जरूरत नहीं है कि हम ज्ञान को तोड़ने जाए।

एक फकीर उठा, और सुबह उठते ही उसने अपने शिष्य को पास बुलाया और उसने कहा कि रात मैंने एक सपना देखा। क्या तुम मेरे सपने की व्याख्या कर सकोगे। उस युवक ने यह भी न पूछा कि वह सपना कैसा है?

उसने कहा, आप रुकेंगे, मैं पानी ले आता हूं हाथ-मुंह धो डालता हूं। वह युवक पानी लेने चला गया, वह पानी लेकर आया। वह फकीर अपना हाथ-मुंह धोता था, तभी दूसरा शिष्य भी करीब से निकला। उसने उसे भी बुलाया और उसने कहा कि सुनो। रात मैंने एक सपना देखा, क्या तुम उसकी व्याख्या कर सकोगे। उसने कहा अगर आप हाथ-मुंह धो चुके हो तो मैं चाय ले आऊं। उस फकीर ने कहा कि तुम दोनों अपत हो, तुमने दोनों में मेरे सपने की व्याख्या कर दी। अगर तुमने आज मेरे सपने की व्याख्या की होती, मैं तुम्हें आश्रम से निकाल कर बाहर कर देता, क्योंकि सपनों की जो व्याख्या करता है, वह नासमझ हैं। सपना आया और एक आदमी पानी ले आया हाथ-मुंह धोने के लिए समझ वाली बात है कि आप जाग जाए ठीक से ताकि फिर न आ जाए सपना, और दूसरा आदमी चाय ले आया, कि अब आप चाय पी लें, ताकि वापिस लौटने की कोई गुंजाइश न रह जाए। सपने की व्याख्या और तोड़ने की कोशिश और मिटाने की कोशिश इस बात का सबूत है कि सपने को हमने स्वीकार कर लिया है। ऐसे श्रद्धाओं को तोड़ने का सवाल नहीं है, सपने की भांति में आप उनका पकड़े हैं, इसलिए वे हैं, आपको यह स्पष्ट हो जाए कि कोई श्रद्धा ज्ञान नहीं बन सकती। वे विलीन हो जाएंगे हवा में उसी तरह, जिस तरह सपने जागने पर विलीन हो जाते हैं।

सिर्फ यह तथ्य स्मरण में आ जाए कि अज्ञानी हूं और मेरा कोई भी ज्ञान अपना नहीं है। यह मैंने दूसरों से स्वीकार कर लिया और पकड़ लिया, लेकिन सिखाया तो हमें यह जाता है कि रोज सुबह गीता पढ़ना और रोज-रोज पढ़ना और जीवन भर पढ़ना। और सिखाया तो यही जाता है कि कुरान जब तुम्हें पूरी याद अहो जाए, तुम ज्ञानी हो जाओगे और सिखाया तो हमें यह भी होता है कि जो बाइबिल पूरी दोहरा दें... चाहे वह उसे कितनी भी कंठस्थ हो जाए, चाहे वह उस नींद में भी उनको बकने लगे, बोलने लगे, तो भी यह शब्द है और मात्र। मेमोरी और नॉलेज में बुनियादी फर्क हैः इस महत्वपूर्ण ज्ञान का ... ज्ञान, ज्ञान की व्यवस्था नहीं है, स्मृति पार। क्योंकि हमें स्मरण है वह बात, जो भी जानते हैं। आदमी अज्ञानी होता जाता है और उसे अजीब मुश्किल में फंस गई है सारी दुनिया। प्रति सप्ताह पांच हजार किताबें नई छप जाती है। एक वक्त ऐसा आएगा आदमी को रहने की जगह न नसीब होगी, किताबें इतनी होंगी; कि आदमी को दफनाना हो तो किताबों में दफनाना पड़ेगा, मकान बनाना हो तो किताबों का बनाना पड़ेगा। क्या करिएगा? या फिर आदमी को कुछ और तरकीबें सिखानी पड़ेंगी कि आप अपनी पैदाइश कम करो, क्योंकि किताबों को रखने के लिए जगह नहीं है। अगर पांच हजार ग्रंथ प्रति सप्ताह तैयार होंगे तो यह तो संभवतः आज नहीं कल यह स्थिति आ जाएंगी, किताबें बढ़ती जाती है और आदमी का ज्ञान क्षीण होता चला जाता है। किताबें और शिक्षाएं स्मृति पर बल देती है, ज्ञान प्रवीण हो, विश्वविद्यालयों पर यह स्मृति का परीक्षण होता है, हम बाहर निकल आते हैं। कुछ बातें हम स्मरण करते हैं और उन्हीं को जीवन भर दोहराते रहते हैं। ज्ञान बड़ी और बात है, बड़ी गहरी बात तो यह है कि जो व्यक्ति जितनी ज्यादा स्मृति को पकड़ेगा, उतना ही अज्ञान होगा।

वही जबकि ज्ञान को उपलब्ध हो सकता है। जो पहले तो यह जान लें कि स्मृति क्या है? स्मृति

गीता को पढ़ लेना सूचनात्मक ज्ञान नहीं है, कुरान को याद कर लेना सूचना का ज्ञान नहीं है। सूचनाएं ज्ञान नहीं है। एक आदमी प्रेम के संबंध में प्रेम के बारे में तो ही प्रेम को समझता है, और एक आदमी तैरने के संबंध में शास्त्र पढ़ लें और व्याख्यान दें और किताबें लिखे तो भी तैर न सकें। कोई बात न समझ सकें कि तैरना क्या हैं? न बता सकें, न व्याख्यान दे सके। तैरना, जानना एक बात है, तैरने के संबंध में जानना बिल्कुल दूसरी बात है

बहुत पुरानी भारतीय कथा है। एक व्यक्ति सवार हुआ है नाव में और नदी पार कर रहा है और अपने साथ बड़े शास्त्र लिए हुए। बीच मझधार में नाविक

उसने कहा, क्या तुमने भवर शास्त्र नहीं पढ़ा, नाविक ने कहा, मौका नहीं आया। तो पंडित ने कहा। थोड़ी सी और आगे बढ़े और उसने पूछा कि न पढ़ा होगा। शास्त्रीय पढ़ा, काव्य पढ़ा। नाविक ने कहा कि नहीं, मैंने तो नहीं पढ़ा, उस पंडित ने कहा और चार आना गया। पानी भीतर आने लगा, उस नाविक ने पूछा, पंडित जी, तैरना जानते हो? उस पंडित ने कहा कि नहीं, तो उस नाविक ने कहा तो फिर आपका सोलहा आना जीवन गया। अब कोई उपाय नहीं है, मेरा तो आठ आना ही गया आपका तो सोलहा आना। उस दिन सोलहा आना जीवन गया पंडित जी का और नाविक तैर कर निकल गया और पंडित वहीं डूब गया। जिंदगी में भी यही हो रहा है। जिंदगी के आगे ही नदियां। फिर यह स्मृति के पल का अज्ञान होकर और जिंदगी। जिंदगी उस मृत्यु को नहीं जानती, जिंदगी काम को जानती है, जिंदगी ज्ञान को मानती है। लेकिन हम उस स्मृति को गलत समझे हुए है। यह तथ्य स्पष्ट रूप से ख्याल में आ जाए, स्मृति ज्ञान नहीं है तो आप अज्ञान स्पष्ट हो जाए। यह बात स्पष्ट होजाए कि कोई श्रद्धा मेरा ज्ञान नहीं बन सकती, तो श्रद्धा को तोड़ने के लिए कोई तलवार, टूट गई बात हो गई। जीवन बहुत अद्‌भुत है, कुछ बातें जानते ही नष्ट हो जाती है। मैं जला जाऊं, मेरे को खोज-खोज कर भगाना नहीं पड़ता, दीया जलाया और खोज रहे हैं कि अंधेरा कहां है तो दीया जला कि अंधेरा गया।

ऐसे ही श्रद्धाओं, विश्वासों की कोई उपस्थिति नहीं हो सकती। केवल इस बोध की अनुपस्थिति का नाम, इस बोध का कि मैं अज्ञान न हूं और किसी दूसरे का अज्ञान मेरा ज्ञान नहीं है। महावीर आपको मिल जाएं या बुद्ध या क्राइस्ट या न मिले तो खोजते ही प्राणों की निरंतर खोज और अनुसंधान से उपलब्ध करना होता है। उसे न तो चुराया जा सकता है, न किसी से मुक्त पाया जा सकता है, न भीख में पाया जा सकता है, कोई रास्ता नहीं है उसे और तरह से पाने का। उसे तो खुद ही जीना पड़ता, खोजना पड़ता। अज्ञान हमारा है, तो हमारा ज्ञान उसे मिटा सकेगा। अज्ञान हमारा है, ज्ञान दूसरे का है। इन दोनों का कहीं मिलना ही नहीं होगा। यह दूसरे को काट ही नहीं पाएंगे, इनका कोई संबंध ही नहीं है। अज्ञान बचा रहेगा और ज्ञान स्मृति में इकट्ठा होता चला जाएगा। प्राण अज्ञान में रहेंगे, बुद्धि ज्ञान से भर जाएगी। दूसरे के ज्ञान स्मृति से ज्यादा गहरा नहीं चाहता। खुद का ज्ञान ही आत्मा की केंद्रीय चेतना को जगाता है और प्रगट करता है, इसीलिए तो यह देखा जाता है कि हम ऊपर से जो थोप लें वह हममें बहुत गहरा नहीं होता, लेकिन डीप भी नहीं होता। चमड़ी के बराबर भी गहरा नहीं होता। जरा सी खरोंच उसे मिटा देती है।

एक व्यक्ति थे और वे बहुत क्रोधित थे और बहुत-बहुत अशांत, उनके मित्रों ने उन्हें सलाह दी, उनके क्रोध ने उन्हें बहुत कष्ट दिया और बहुत पीड़ा दी। आखिर वे परेशान हो गए उन्होंने किताबें पढ़ी और गुरुओं से पूछा और उन्होंने कहा, कि जब तक संसार में रहोगे तब तक तो अशांति रहेगी। संसार छोड़ो तो शांत हो सकते हो, वे पक्के क्रोधी थे, उनको यह भी चोट लग गई, पक्के जिद्दी थे, वे बड़े हटी थे, उनको यह भी चोट लग गई तो उन्होंने एक दिन गुस्से में आकर संसार भी छोड़ दिया, साधु हो गए- जिस व्यक्ति से उन्होंने दीक्षा ली, उसने उन्हें शांति नाथ का नाम दे दिया, क्योंकि वे बड़े अशांत और क्रोधित थे और शांति की साधना के लिए साधु हो गए थे। वे एक बड़े नगर में गए और उनके पुराने बचपन के एक मित्र उनसे मिलने गए, वह शांति नाथ तो मित्रों को भूल चुके थे क्योंकि संसार छोड़ चुके थे। लेकिन मित्र अभी संसार में थे और शांतिनाथ को याद रखते थे। उन मित्र ने उनसे पूछा, महानुभाव! आपका नाम? उन्होंने कहा, शांतिनाथ, कोई दो मिनट कुछ बात चली होगी, फिर उस मित्र ने पूछा, क्षमा करिए, आपका नाम? उन्होंने कहा, शांति नाथ, फिर कोई दो मिनट बात चली होगी, उस

मित्र ने पूछा, क्षमा करिए! आपका नाम। उन्होंने अपना डंडा उठा लिया, कहा नहीं तुझसे कि शांतिनाथ, उन्होंने कहा, मैं समझ गया कि आप बिल्कुल शांति को उपलब्ध हो चुके हैं। मैं जाता हूं, मैं पुराना मित्र हूं, और देखने आया था कि शांति गहरी गई। वह लेकिन डीप भी नहीं, वह चमड़े से ज्यादा गहरी भी नहीं है। जब भिक्षाएं दूसरों से मिल जाए, जो संन्यास दूसरों से लिया जाए, उसका कोई भी मूल्य नहीं है। जो ज्ञान दूसरों से मिले, वह गहरा नहीं जाता। जो शांति दूसरों से मिल जाए वह फिर गहरी नहीं हो सकती। प्राण तो आपके ही होंगे, चाहे वस्त्र बदल लें और घर छोड़ दें, फर्क नहीं पड़ेगा।

भाग रहे है कोने-कोने में, अपने-आप से भागना असंभव है। आप अपने साथ होंगे और सबको छोड़ कर भाग जाएंगे आप अपने साथ होंगे। इसलिए एक बात आज की सुबह मैं आपसे कहना चाहता हूं कि जो आपका है वही बस आपका है और जो आपका है वही आपमें क्रांति और परिवर्तन ला सकता है। जो ज्ञान कहीं और से आता हो, जो नैतिकता, जो चरित्र बाहर से आता हो, वह गहरा नहीं होता, उसे जरा ही खरोंच दें, असली आदमी बाहर आ जाएगा, नकली आदमी फट जाएगा। वह हमेशा असली आदमी भीतर मौजूद है, दुनिया में सबको धोखा दिया जा सकता है, खुद को नहीं, लेकिन हम खुद को भी धोखा देते हैं। और कम से कम सत्य की खोज में तोहम निरंतर धोखा देते हैं। और हम बड़े होशियार है, धोखा ही नहीं देते, धोखा देने में सफल हो जाते हैं। मैं फिर से दोहराता है हम बहुत होशियार है, धोखा ही नहीं देते, धोखा देने में सफल हो जाते हैं। धन्य है वे लोग जिस धोखा देने में असफल रह जाते हैं। तब उन्हें यह ख्याल आता है कि धोखा देना व्यर्थ है, दूसरों का ज्ञान लिए बैठे हैं और ज्ञानी बन गए इससे बड़ा धोखा हो सकता है। गीता और रामायण दोहराते हैं और ज्ञानी बन गए है इससे बड़ा धोखा हो सकता है।

ज्ञान के मामले में अद्‌भुत धोखे हमने दिए है। मेरे एक मित्र मुझसे कह रहे थे, कि वे दूसरे महायुद्ध में थे। एक जहाज पर थे। एक आदमी सामने बैठा हुआ दिन-रात अकेला ही ताश का खेल खेलता रहता था। दोनों तरफ से, दूसरी पार्टी की तरफ से भी चलता था, अपनी तरफ से भी, अकेले ही खेलता रहता था। वह अकेला था, कोई उपाय न था। यह भी उसके साथ उसी केबिन में यात्री थे तो दिन-रात देखते रहते थे, उन्होंने देखा कि वह आदमी चालों में धोखे करता है। अकेले खेल रहा है और कोई दूसरा है नहीं, दूसरी तरफ से भी खुद चलता और अपनी तरफ से भी लेकिन चाल में धोखा करता है। वह दूसरे आदमी को धोखा देता है जो मौजूद ही नहीं है। जब उसने बार-बार देखा कि धोखा करता है तो बहुत हैरानी हुई। एक तो अकेला ताश खेलता था, यही पागलपन था। फिर वह जो मौजूद नहीं है उसको धोखा देता था और वह है ही नहीं, तो धोखा तो अपने को देता था। और तो वहां कोई था नहीं। जब उनकी बर्दाश्त के बाहर हो गया देखते-देखते तो उन्होंने कहा कि ठहरिए! आप तो हद किए दे रहे हैं, धोखा दिए दे रहे हैं। उसने कहा, मुझे सब मालूम है, क्योंकि मुझे मालूम नहीं है क्या मैं धोखा दे रहा हूं। लेकिन मैं इतना होशियार आदमी हूं कि पकड़ नहीं पाता, पकड़ा नहीं जाता हूं इतना होशियार आदमी हूं। क्या मुझे पता नहीं कि मैं धोखा दे रहा हूं मुझे पता है। लेकिन इतना होशियार हो गया आज तक पकड़ा नहीं गया, पकड़ा कैसे जाएगा?

दूसरों को आप धोखा देंगे तो पकड़े भी जा सकते हैं, अदालतें हैं, पुलिस है और जमाने भर का जाल है, कानून है, दूसरे लोग है वे भी आंखें गड़ाए हुए अपने को धोखा देंगे कोई नहीं पड़ेगा, कोई पकड़ने का कारण नहीं है। इसलिए तो दुनिया में सब तरह के धोखे पकड़ जाते हैं, लेकिन आत्मज्ञान का धोखा पकड़ में नहीं आता है। यह सबसे गहरा डीसैपशन है, यह पकड़ में नहीं आता, क्योंकि उसके खिलाफ कोई भी नहीं है। आप बने रहो आत्मज्ञानी, आप जानते हो परमात्मा को न पुलिस पकड़ती है, न अदालत में मुकदमा चलता है और कुछ मूढ़

मिल जाएंगे जो आपको इस धोखे में सहयोगी हो जाएंगे। इस जमीन पर ऐसे मूढ़ खोजना कठिन है, जिनके शिष्य न मिल जाए। शिष्य हमेशा उपलब्ध हो जाएंगे, क्योंकि बड़े मूर्ख हमेशा मौजूद है। वह आपको सहयोगी हो जाएंगे आपके ज्ञान में और ताली बजाएंगे और सिर हिलाएंगे। आप खुद अपने को धोखा देंगे और उनसे धोखा खाएंगे, लेकिन जो आदमी जानता है। थोड़ी भी जिसकी ईमानदारी की खोज है जीवन के प्रति, वह एक बात जरूर समझ लेगा कि अपने को धोखा देने से कोई भी अर्थ नहीं है। सिर्फ जीवन नष्ट होता हो, व्यय होता है। दूसरे के ज्ञान को अपना ज्ञान मानना बहुत सूक्ष्म धोखा है। लेकिन हम सब माने हुए हैं, न केवल मानना बल्कि लड़ सकते हैं उस ज्ञान पर, लोग विवाद में आ जाते हैं और लड़ते हैं मेरा विचार। तलवारें निकल आती है विचार पर और बड़े मजे की बात है आपका कोई भी विचार नहीं है, सब विचार पराए है और दूसरों के हैं। मेरा विचार बिल्कुल झूठी बात है। कौन सा विचार आप है? एकाध विचार है जो कह सकें मेरा है, अगर खोज करेंगे तो ऐसा एक भी विचार नहीं पाएंगे। और जब ऐसे पराए विचारों का हम पर बोझ हो तो स्वयं का अनुभव पैदा नहीं हो सकता है।

इसलिए मैं पहलीः जो स्वतंत्रता चाहिए सत्य के खोज के लिए, वह श्रद्धा से स्वतंत्रता, अश्रद्धा से स्वतंत्रता। उन्मुक्त अपने अज्ञान को स्वीकार करता हुआ चित्त। पहली स्वतंत्रता है, वह फर्स्ट फ्रीडम हैं, इसके बिना कोई रास्ता आगे बन नहीं सकता। तो आज की सुबह तो मैं यही प्रार्थना करूं कि श्रद्धा से स्वतंत्र हो जाइए, अश्रद्धा से स्वतंत्र हो जाइए, विश्वास से स्वतंत्र हो जाइए। मान्यता, परंपरा, संप्रदाय से मुक्त और स्वतंत्र हो जाइए। चित्त से इन जालों को तोड़ जाइए। और आपके जानते और समझते ही यह जाल टूट जाते हैं इनके लिए जाकर कमरे पर लड़ने की जरूरत नहीं है। अंडरस्टैंडिंग, इस बात की समझ जाल टूट गया।

चित्त अगर इस भांति श्रद्धा, अश्रद्धा, बिलीफ से, डिसबीलिफ से मुक्त हो जाए। बहुत निर्मल हो जाते हैं, बहुत सरल हो जाते हैं, बहुत सहज हो जाते हैं। खोज की तैयारी हो जाती है, पहला चरण पूरा हो जाता है। यह तो पहली बात है जो आज की सुबह मैंने आपसे कही। कल मैं विवेक के जागरण की बात सुबह आपसे कहूंगा। श्रद्धा से मुक्त हो जाएं तो फिर विवेक जग सकता है। श्रद्धा से चित्त मुक्त हो, विवेक जाग्रत हो। विवेक की बात कल करूंगा। विवेक जाग्रत हो, श्रद्धा से मुक्ति हो और फिर तीसरी बात परसों करूंगा जब चित्त श्रद्धा से मुक्त हो जाता है और विवेक जाग्रत हो जाता है। एक और छोटी सी बात है वह भी अगर उसके जीवन में हो जाए, जिसको हम समाधि कहते हैं। अत्यंत निर्विकार और निराकार चित्त की स्थिति को आब्जैक्टलैसनेस कहते हैं। श्रद्धा से मुक्त हो चित्त, विवेक जाग्रत हो और चित्त के समक्ष सभी आब्जेक्ट, सभी विषय, सभी विचार, सभी कल्पनाएं विलीन हो जाए। चित्त के समक्ष फिर कुछ भी न रह जाए। श्रद्धा से मुक्ति हो, विवेक जाग्रत हो और चित्त के समक्ष कुछ भी न रह जाए, चित्त के समक्ष रह जाए अनंत शून्य, सन्नाटा और शांति, बस ये तीन बातें पूरी हो जाए तो मनुष्य वहां खड़ा हो जाता है, जहां परमात्मा है। वहां उसकी आंखें खुल जाती है, जहां सत्य है, वहां उसके प्राण आंदोलित होने लगते हैं, वहां उसके प्राणों में लहरें उठने लगती है जहां व्यक्ति मिट जाता है और समस्त वह जो टोटेलिटी है, वह सबकी सत्ता है उससे मेल हो जाता है। समाधि की बात अंतिम दिन करूंगा, आज मैंने श्रद्धा से मुक्त होने की बात कहीं। कल विवेक को जाग्रत कैसे करें उसकी बात करूंगा और परसों समाधि कैसे अवतरित हो, कैसे आ जाए हमारे जीवन में। इन तीन चरणों में चर्चा करूंगा, इस संबंध में जो भी प्रश्न होंगे, वह आप संध्या पूछ लेंगे। ताकि इनके कुछ पहलू छूट गए होंगे, वह आपके प्रश्नों में आ जाएंगे और उनकी बात हो सकेगी।

अब हम सुबह के ध्यान के लिए बैठेंगे। इसके पहले कि हम ध्यान के लिए बैठे मैं दो थोड़ी सी बातें ध्यान के संबंध में कह दूं। ध्यान बड़ी अत्यंत सरल सी बात है, और जो कोई भी कहता हो ध्यान बहुत कठिन है, वह झूठ कहता होगा। ध्यान से ज्यादा सरल और कोई बात नहीं है। क्योंकि ध्यान हमारा स्वरूप है, जो हमारा स्वरूप होता है, वह एकदम सरल होता है। जैसे गुलाब के पौधे में गुलाब के फूल लग जाना एकदम सरल बात है, इसमें कोई कठिन बात नहीं है, सिर्फ हम पूरी परिस्थितियां जुटा दें तो फूल लग जाएंगे, फूल लगने में कोई कठिनाई नहीं है। फूल तो बड़ी सहजता से निकल आते हैं, कली बन जाती है और फिर खिल जाती है। इतने स्पोनटेनियस, इतनी सहजता से हो जाता है फूल का खिलना कि हमें पता भी नहीं चलता। न कोई बैंड बाजे बजते हैं, न कोई अखबार में खबर छपती है, न कोई रेडियो से, दिल्ली से एनाऊंस होता है, कुछ फूल पूर्ण लगते हैं खिल जाते हैं। कहीं पता नहीं चलता, कहीं कोई आवाज नहीं होती, कोई शोरगुल नहीं मचता। कलियां लगती हैं और फूल खिल जाते हैं। जैसे गुलाब के फूल में गुलाब का फूल खिल जाता है, सहज सी बात है। वैसे ही मनुष्य के चित्त में ध्यान का फूल खिल जाना उतनी ही सहज बात है। ही ही तो बहुत सहज है लेकिन हम बहुत उलटे-सीधे है। इसलिए गडबड़ होती है, इसलिए देर होती है। ध्यान तो बहुत सरल है हम बहुत कठिन है। ध्यान तो बहुत सरल है हम बहुत जटिल है। हमारी जटिलता उपद्रव कर रही है, ध्यान के आने में कोई बाधा नहीं है। गुलाब के फूल में तो अब भी फूल आ जाए, लेकिन हमने जड़ें ही काट डाली। या हम पूरे पौधे को उखाड़कर जमीन के बाहर रखें हुए हैं, या हमने पानी न देने की कसम खाली, व्रत ले लिया था हम पानी न देंगे या हम खाद नहीं देते हैं या खाद की जगह जहर देते हैं।

गुलाब के फूल में तो फूल आ जाना, बहुत सरल बात हैः इसमें तो शक का कोई सवाल पैदा कर दें। और गुलाब के फूल को कहें कि सिर-साशन करों। जड़े ऊपर करो और सिर नीचा करो। तो फिर बहुत कठिन हो जाएगा, फिर फूल नहीं आएंगे और हम सब सिर-साशन कर रहे हैं। जिंदगी सब उलटी किए हुए हैं, इसलिए ध्यान का फूल हममें खिल ही नहीं पाता है। लेकिन उसकी अगर सारी परिस्थितयों को हम उलटा कर दें तो एक बात स्मरण रखना हम कठिनाई में होंगे, ध्यान कठिन नहीं है। तो काम बन सकता है, अपनी कठिनाई छोड़नी पड़ती है, कोई बड़ी बात नहीं। अगर ध्यान कठिन होता है, तो हमको कठिन बात सीखनी पड़ती है, कठिन बात सीखनी कठिन होती है, कठिन बात छोड़नी कठिन होती है। किसी चीज को मिटा देना कठिन नहीं होता, बनाना बहुत कठिन होता है। अगर ध्यान ही कठिन होता और हमें इसके लिए तैयारी करनी पड़ती। लेकिन एक हम कठिन है और हम कठिन

पहली बातः ध्यान, दूसरी बातः ध्यान से मेरा अर्थ, एकाग्रता नहीं। सिर्फ आपने सुना होगा।

अपने मन को लगाएंगे तो मन खींच जाएगा, तन जाएगा, तनाव के बाद एक तरह की उदासी, थकान आएगी। स्वाभाविक, जब भी आप कोई तना हुआ महसूस करेंगे तो पीछे से खिंचाव आएगा, खिंचाव आने से चित्त अशांत होगा। इसलिए जो लोगों की कनसनट्रेशन या एकाग्रता करते हैं, बहुत तने हुए और खिंचे हुए लोग हो जाते हैं। वे सरल लोग नहीं रह जाते और कांप्लेक्स और जटिल हो जाता है। देखा ही होगा आपने कोई आदमी अगर माला फेरने लगा या राम-राम जपने लगे तो ज्यादा क्रोधी हो जाता है। कोई आदमी मंदिर जाने लगे, भगवान की मूर्ति के पास बैठकर एकाग्रता करने लगे, ज्यादा क्रोधी हो जाता है, ज्यादा वायलेंट हो जाता है, ज्यादा हिंसक, ज्यादा दंभी हो जाता है। अहंकार उसका और घना हो जाता है। स्वाभाविक है यह होगा, यह सब कंपीटीशन के, एकाग्रता के परिणाम है और अगर एकाग्रता बहुत बढ़ जाएगी तो आदमी पागल भी हो सकता है। वह इतना एकाग्र हो जाए तो उसकी एकाग्रता टूटने में आदमी पागल भी हो जाए। यह कोई ईश्वर का

उन्माद नहीं है, ईश्वर का उन्माद नहीं होता है, ईश्वर की शांति होती है, ईश्वर का कोई पागलपन नहीं होता। ईश्वर की शांति होती है, आनंद होता है, फ्रुल्लता होती है उन्माद नहीं होता। यह सब पागलपन है, कनसनट्रेशन का परिणाम पैदा हुआ है। और आप समझ लें जिस कौम में बहुत ज्यादा कनसनट्रेशन का बल रहा हो, उस कौम का मस्तिश्क धीरे-धीरे डल हो जाता है। धीरे-धीरे उस कौम के मस्तिश्क की जो ऊर्जा और प्रतिभा चाहिए वह क्षीण हो जाती है। भारत जैसे मुल्कों की प्रतिभा के क्षीण होने का बुनियादी कारण यह है।

यहां हमने मस्तिश्क को विश्रांति नहीं दी। खींचने की कोशिश की, तनाव देने की कोशिश की। तनाव के दुश्परिणाम हुए। भारत ने आज तक कुछ भी इनवेंट नहीं किया, कुछ खोजा नहीं, कुछ नया बनाया नहीं, कुछ क्रिएट नहीं किया। तीन हजार साल के इतने नपुंसक और बांझ दिन बीते हैं हमारे, जिसका कोई हिसाब नहीं। इतना बैरल, कुछ हमने तीन हजार साल में सृजन नहीं किया। कोई खोजने की, कोई नई दिशाएं नहीं खोजी, कोई नया विज्ञान, कोई नई कला। हमने जीवन के प्राणों में कोई छिपे हुए कोने नहीं खोजे, किसी अज्ञात का हमने उदघाटन नहीं किया। हम बैठे हुए दोहराते हैं शास्त्रों को, और दोहराए चले जाते हैं, और हम बड़ी एकाग्रता की बातें करते हैं, एकाग्रता ध्यान नहीं है। ध्यान है चित्त की परम-विश्रांति की अवस्था और एकाग्रता है चित्त की तनाव की ही स्थिति। एकाग्रता होती है किसी चीज के विरोध में, ध्यान किसी चीज के विरोध में नहीं है। अगर समझ लें, आपको मैं कहूं कि यहां बैठकर एकाग्रता करिए। राम के नाम पर एकाग्रता करिए या ओम पर एकाग्रता करिए या किसी और पर, कोई भी चीज काम दे सकती है। तब जब आप एकाग्रता करेंगे, तो शेष जो दुनिया है उससे आपका मन लड़ेगा। क्योंकि एक कुत्ता यहां से भौंकता हुआ निकल जाए, तो आप कहेंगे कि इसने सब गड़बड़ कर दिया। एकाग्रता खंडित हो गई। तो कुत्ते के भौंकने से लड़िए कि यह आपको सुनाई न पड़े, आपका नाम तो वही चलता रहे, ओम-ओम, आप कहते रहिए भौंकना कुत्ते का सुनाई न पड़ें। एक बच्चा रोने लगे, यह सुनाई न पड़े। तो आप लड़िए, चारों तरफ जो घटनाएं घट रही हैं, जो दुनिया खड़ी है उससे लड़िए और अपने चित्त को एक तरफ लगाइए, आप थक जाएंगे, परेशान हो जाएंगे। तब आप कहेंगे अपने बस की बात नहीं। नहीं, इसलिए किसी के बस की बात नहीं, सिवाय पागलों को छोड़कर। पागल यह कर सकते हैं, सिर्फ पागलों को छोड़कर यह किसी के बस की बात नहीं हैं, और होनी भी नहीं चाहिए, क्योंकि अगर हो जाए तो परिणाम घातक होंगे।

ध्यान का अर्थ किसी एक चीज पर सबके विरोध में चित्त को रोकना नहीं है। ध्यान का मेरा अर्थ हैः सब चीजें बही जाए और चित्त शांत हो, चित्त अनुत्तेजित हो और चीजें बही जाएं। एक कुत्ता भौंके, तो आप कोई मुर्दा थोड़ी है कि उनको सुनाई नहीं पड़ेगा। आप जीवित है, जो जितना ज्यादा जीवित हो, उसे उतना ही स्पष्ट सुनाई पड़ेगा। जिसका चित्त जितना सेन्सेटिव है, जितना संवेदनशील है, जितना रिसेपटिव है, जितना ग्राहक है, उसे उतना तीव्रता से सुनाई पड़ेगा। जिसका चित्त जितना अनुत्तेजित शांत है, उसे उतना ही स्पष्ट सुनाई पड़ेगा, एक सुई भी गिरेगी तो उसे सुनाई पड़ेगा। शांति में तो छोटी सी ध्वनि भी सुनाई पड़ेगी, अशांति में नहीं सुनाई पड़ सकती। एक आदमी के घर में आग लग गई हो और सड़क से अपने घर की तरफ भागा जा रहा हो और आप उससे कहें जय राम जी, उसे सुनाई नहीं पड़ेगा। इसलिए नहीं कि वह कोई परमस्थिति को उपलब्ध हो गए हैं, बल्कि इसलिए है कि मस्तिश्क कनसनटरेटिड है। एक चीज पर लगा, उनके घर में आग लगी है और आप जय राम जी कर रहे हैं। या कल उनसे मिलिए कि कल हम आपको रास्ते में मिले थे ख्याल है। वे कहेंगे मुझे ख्याल नहीं, कौन दिखा, कौन नहीं दिखा मुझे कुछ पता नहीं है। चित्त एकाग्रता, लेकिन चित्त की एकाग्रता, चित्त पर तनाव है, बोझ है, भार है। चित्त होना चाहिए शांत और अनुत्तेजित। कैसे होगा?

मैं एक छोटे से रेस्टहाऊस में, गांव में रुका था। एक मित्र भी मेरे साथ थे। वह रेस्टहाऊस अजीब था। सारे गांव के कुत्ते शायद वही विश्राम करते थे रात को, करते होंगे। अच्छी जगह थी, वहां वे भी ठहरते थे। वे रात को इतनी जोर से शोरगुल करते और जब ढेर करें। कुत्तों की आदत करीब-करीब ऐसी होती हैं, जैसे नेताओं की होती हैं। दूसरा उसके विरोध में करें, तीसरा उसको जवाब दें, चौथा उसको जवाब दें, वहां करीब-करीब वही हालत थी जो चुनाव के वक्त हो जाती है। मेरे मित्र सोना उनको मुश्किल हो गया, उन्होंने मुझसे कहा यह तो बड़ी मुसीबत हो गई। यह तो यहां सोना असंभव है, मैंने उनसे कहा कि कुत्तों को पता भी नहीं कि आप यहां ठहरे हुए हैं। और आपसे उनकी कोई दुश्मनी नहीं है, पिछले जन्म का कोई संबंध हो तो मुझे पता नहीं। तो उनको पता भी नहीं वे आपको डिस्टर्ब भी नहीं कर रहे, परेशान भी नहीं कर रहे हैं, आप क्यों उनसे हैरान हो रहे हैं। आप सो जाइए, उन्होंने कहा, कैसे सो जाए। ये भौंकते हैं तो सब नींद खराब हो जाती है। मैंने उनसे कहा, उनके भौंकने से नींद खराब नहीं होती। उनके भौंकने के प्रति आप रेसिसटेंस मन में लिए हुए हैं कि नहीं भौंकने चाहिए। आपके मन में विरोध है उनके भौंकने के प्रति, इसलिए नींद नष्ट हो जाती है, डिस्टरबेंस उनके भौंकने से पैदा नहीं होता, आपके मन का यह आग्रह है, उन्हें भौंकना नहीं चाहिए, उन्हें यहां नहीं होना चाहिए। यह आग्रह पहरा दे रहा है और नींद तोड़ रहा है। मैंने उनसे कहा, आग्रह छोड़ दीजिए, रैसिटेंस छोड़ दीजिए अपने मन में सोचिए कि तुम कुत्ते हो तुम्हारा भौंकना। मेरे सोने का वक्त है मैं सोता हूं। उनको भौंकने दीजिए, उनकी आवाज को गूंजने दीजिए बराबर जब तक आप जागे होंगे, तब तक वह आवाज सुनाई पड़ेगी, लेकिन आपके भीतर विरोध मत रखिए उसके प्रति आए गूंज जाने दीजिए। मैंने उनसे कहा, ठीक उलटा परिणाम होगा यही आवाज सुलाने का काम करने लगेगी। वे मान गए, समझदार थे, इतने समझदार कम लोग होते हैं, और सो गए, सो जाना स्वाभाविक था। सुबह होते अब उससे बोले कि मैं हैरान हूं, यह मेरे ख्याल में कभी नहीं आया कि मेरा जो प्रतिरोध था कुत्तों के प्रति वही बाधा दे रहा था। कुत्ते कैसे बाधा देंगे, हमारा जो प्रतिरोध है वह बाधा देता है। अप्रतिरोध का नाम ध्यान है, नान-रैसिसटेंट माइंड, अप्रतिरोध ही मन जो रैसिस्ट नहीं करता। चीजों को आने-जाने के तहत बड़ी धुंधियाई चीजें आएंगी-जाएंगी, कोई आपका ठेका है कि आप शांत होकर बैठे तो कुत्ते न भौंके, मक्खियां न उड़ें, मच्छर न आएं, कोई बच्चा न रोएं, कोई और बात न करें। यह किसी का कोई ठेका नहीं है। दरख्त हिलेंगे, हवाएं आएंगी, पत्ते गिरेंगे-उड़ेंगे, आवाजें होंगी, लेकिन इस तरह आपका कोई जोर नहीं है। ये जोर देने वाले बेचारे जंगलों में भागते हैं, पहाड़ों पर जाते हैं, फिर इस ख्याल में कि यहां गड़बड़ होती है तो वहां जाएं। हिमालय पर जाए या तिब्बत जाए या कहां जाए, वे कहीं भी चले जाए कुछ भी नहीं होगा, वह रैसिसटेंस माइंड साथ होगा। एक पक्षी वहां चिल्ला देगा वे कहेंगे कि सब ध्यान गड़बड़ हो गया हमारा, ऐसा ध्यान जो किसी की वजह से गड़बड़ हो जाता है और ध्यान नहीं, वह एकाग्रता है। एकाग्रता गड़बड़ होती, क्योंकि एकाग्रता का मतलब है एक चीज को पकड़ कर रह जाना और बाकी सब चीज के लिए दरवाजा बंद कर देना, वह सब चीजें धक्के देने लगती है, बल्कि सच्चाई यह है जब आप एकाग्र होने की कोशिश में तब वे चीजें उतना धक्का नहीं देती। स्वाभाविक है, जब आप एकाग्र होने की कोशिश करते हैं तो वे चीजें ज्यादा धक्का देने लगती है।

मन एक प्रवाह की भांति है, वहां जाए, चारों तरफ घटनाएं हो रही है, उनके प्रति बेहोश होने की, मूर्च्छित होने की या उनके लिए दरवाजा बंद करने की कोई जरूरत नहीं है। इसलिए मैंने जब बच्चों से विरोध नहीं है, कुत्तों से, बिल्लियों से किसी से कोई विरोध नहीं है। उसका संसार से कोई विरोध और जिसका किसी से कोई विरोध नहीं है और हर चीज को जो इस तरह गुजर जाने देता है, जैसे

बहुत निकट है वह और किसी भी दिन द्वार खुल सकता है। यहां हम छोटे से प्रयोग करेंगे इन तीन दिनों में अप्रतिरोध के। अभी हम यहां बैठेंगे, बैठने का मतलब अकड़ कर और रीढ़ को बहुत सीधा करके और सिर को बहुत खींच कर बैठ जाना नहीं, क्योंकि प्रतिरोध शुरू हो गया। बहुत सहजता से जैसे छोटे-छोटे बच्चे बैठ जाते हैं। वैसे सहजता से बैठ जाना, सिर झुके झुक जाए, रीढ़ झुके झुक जाए कोई भी फिर बाधा नहीं दे रहा है। ध्यान तो भीतर चित्त की स्थिति है, उसका इस सबसे कोई वास्ता नहीं है इतने इट इज, इतनी सरलता से बैठ जाना। जैसे आप कोई काम नहीं कर रहे हैं, खाली वक्त गुजार रहे हैं। आंख की पलक धीरे से फिर बंद कर लेनी है, बंद कर लेने का मतलब यह नहीं है कि आप कोशिश करके उसे दबा लेते हैं, वह रसिस्टेंस शुरू हो गया। न ही पलक को गिर जाने देना है जैसे झपकी आ गई हो व पलक गिर गयी। पलक को बंद नहीं करना है, गिर जाने देना है। उसे धीरे से गिर जाने दे, उसमें भी यह न हो कि मैंने बंद किया। उसको भी गिर जाने दे, सारे शरीर कोढीला छोड़ दें। जैसे हम कुछ बड़ा काम नहीं कर रहे हैं, खाली बैठे हैं, कोई काम नहीं कर रहे हैं कि विश्राम कर रहे हैं। आदतें नहीं है हमारी विश्राम करने की, हम तो खाली भी बैठे तो कुछ न कुछ करते, नहीं तो रेडियो खोल देंगे, अखबार उठा लेंगे, कुछ न कुछ करेंगे। न करने का हमें पता ही नहीं है और न करना बहुत अद्‌भुत है। न करने का कोई मुकाबला नहीं है, न करने की स्थिति का नाम ध्यान है। यहां हम न करने की स्थिति में दस-पंद्रह मिनट बैठेंगे। आंख की पलक कोढीला छोड़ देंगे सारे शरीर कोढीला छोड़ देंगे फिर क्या करेंगे। बात तो इतनी है अगर इतना ही करना तो काम हुआ।

कोई भी आवाज सुनाई पड़ रही हो। रुकी तो रहेगी नहीं, आएगी, गूंजेगी और चली जाएगी। आप विरोध न करें कि यह आवाज क्यों गूंजी, आप आवाज के प्रति सजग रहे आवाज तेजी से गूंजे, तब जानें, धीमी होने लगेगी, धीमी होने लगेगी, तब जानते रहें। फिर वह विलीन हो जाएगी तब जानते रहेंगे, जैसे धुआं आया, भर गया। ऐसी आवाजें होंगी, घटनाएं होंगी चारों तरफ किसी से कोई विरोध नहीं है, वे आएंगी और चली जाएंगी। अगर आप शांति से मात्र साक्षी रहे, प्रतिरोधी नहीं, विरोधी नहीं। जो भी आई आई, जो भी गई गई, अगर इतनी शांति से उनका निरीक्षण किया तो आप भी दो क्षण के भीतर ही पाएंगे कि चित्त तो एकदम शांत हुआ जा रहा है। वह प्रतिरोध से अशांत है स्मरण रखें और कोई अशांति नहीं है। वह विरोध से अशांत है, लड़ रहा है इसलिए अशांत है जो नहीं लड़ रहा है तो कोई अशांति नहीं है।

लाओत्से फकीर हुआ चीन में, उसने लिखा है। धन्य वे लोग जो लड़ते नहीं, क्योंकि उनको कोई हरा नहीं सकेगा। धन्य है वे लोग जो लड़ते नहीं क्योंकि उनको कोई हरा न सकेगा। जो लड़ता ही नहीं उसके हारने का सवाल ही नहीं। जिसके हारने का सवाल ही नहीं उसके दुखी होने का कोई सवाल नहीं है, लड़े न, ध्यान लड़ाई नहीं। आमतौर से लड़ाई है, मंदिरों में लोग बैठे हैं मालाएं लिए लड़ रहे हैं। पहाड़ों पर लोग बैठे हैं आंख बंद किए हुए आसन लगाए हुए लड़ रहे हैं। ध्यान तो लड़ाई से बिल्कुल उलटी बात है, लड़े न, बिना लड़े कोई उससे लड़िए मत कि अब उसको रोकेंगे बैठेंगे हम तो ध्यान कर रहे हैं। पैर को बदलेंगे तो बगल वाला क्या कहेगा, नहीं वह ध्यान ही नहीं है आप पैर ही से अटके हुए हैं। पैर में दर्द हो रहा है, आप बिल्कुल बदल लीजिए, आपकी जिंदगी है, जान है अभी इसलिए पता चल रहा है। मर जाएंगे, इंजेक्शन दे दिया तो पता नहीं चलेगा या अफीम खाकर बैठ गया तो पता नहीं चलेगा। या किसी चीज पर इतना कंसन्टरेशन किया कि चित्त और सब तरफ से हट गया और उसी एक चीज में अटक गया तो पता नहीं चलेगा या यह हो सकता है कि निरंतर अभ्यास करिए तो निरंतर पैर की आदत हो जाएगी तो फिर पता नहीं चलेगा, लेकिन उससे कोई मतलब नहीं है। पैर में दर्द हो

रहा है चुपचाप बदल लीजिए, एक ही बात का ख्याल रखिए, विशेष मत करिए, दिल में दुखी मत होइए कि पैर को बदलना पड़ रहा है। पैर आपका अभी जिंदा है इसलिए खबर देता है, मर जाएगा तो खबर नहीं देगा।

मार्क्सटविन का नाम आपने सुना होगा, बहुत हंसमुख और बढ़िया आदमी है अमरीका में। वह एक दिन बैठे-बैठे बहुत गपशप कर रहा था, बहुत प्रसन्न था, खूब ऊंची बातें कर रहा था, हंसा रहा था मित्रों को एकदम गंभीर हो गया और उदास हो गया, एकदम से। तो उसके एक मित्र ने पूछा, आपको क्या हो गया? उसने कहा, मालूम होता है मेरे पैर को लकवा लग गया है। डाक्टरों ने मुझे दस साल पहले कहा था, कभी न कभी खतरा है आपके पैर को लकवा लग जाएगा। मैंने कहा, आपको पता कैसे चला? उसने कहा, मैंने चयुंटी ले रहा हूं बड़ी देर से लेकिन कुछ पता ही नहीं चल रहा, बगल की महिला ने कहा, क्षमा करिए मैं संकोच की वजह से कह नहीं रही, चयुंटियां आप मुझे लिए जा रहे हैं। वह बेचारा जांच कर रहा था और बगल की महिला की चयुंटियां लेता रहा, लेता रहा, उसने सोचा कि मेरा पैर तो गया, पता ही नहीं चल रहा कुछ। यह जो पैर का पता न चलना है, या शरीर का पता न चलना है। यह कोई अच्छी स्थिति नहीं है आपको पता चलना चाहिए, भीतर होश है कांशसनेस जितनी ज्यादा होगी पता चलेगा, उसकी कोई फिक्र न करें, चुपचाप पैर को बदल लीजिए, नान रैसनेस, कोई विरोध नहीं, चुपचाप पैर बदल लीजिए, गर्दन थक गई हो आगे-पीछे जाती हो जाने दीजिए। ऐसे जाने दीजिए, जैसे आपका कोई विरोध नहीं है, जो हो रहा है शरीर को करने दीजिए। आप इतना ही भर ख्याल रखिए कि मैं किसी चीज का विरोध नहीं करूंगा, चुपचाप बैठा रहूंगा। होने दूंगा जो हो रहा है, मैं किसी चीज पर पकड़ नहीं रखूंगा कि ऐसा हो, जैसा हो रहा है होने दूंगा। हवाएं आएंगी तो ठीक, नहीं आएंगी तो ठीक। कोई चिल्लाएगा तो ठीक, नहीं चिल्लाएगा तो ठीक। मैं सब कुछ स्वीकार करता हूं, टोटल एक्सैपटिबिलिटी। और मैं किसी चीज का विरोध नहीं करता हूं, बस इस भाव में एक दस मिनट हम यहां बैठेंगे। थोड़े-थोड़े फासले पर हो जाएंगे तो अच्छा होगा। क्योंकि हो सकता है कि आप इस भाव में, लेकिन बगल वाला इस भाव में न हो। थोड़े-थोड़े फासले पर ताकि कोई किसी को छूता न हो। थोड़े ऐसे फासले पर बैठ जाएंगे, बहुत आराम से। हां बाहर भी बैठ सकते हैं।

हूं आप लोग भी थोड़ा एक-दूसरे से दूर हो जाएं तो अच्छा है एक-दूसरे को छूता हुआ कोई न बैठे और बिल्कुल आराम से बैठ जाएं, जैसा आपके लिए बैठना निरंतर सुखद रहा हो, वैसे बैठ जाए। तब यहां जगह कम है इसलिए बैठने को कह रहे आपको, घर पर करेंगे सो कर सकते हैं कोई भी, सोने-बैठने का सवाल नहीं है। सवाल है भीतर की टेट ऑफ माइंड, भीतर जो मन की स्थिति उसका, कोई चीज का कोई सवाल नहीं है। सोए रहें, खड़े रहें, बैठे रहें आराम कुर्सी पर हों, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है। बड़ी बात है कि बिल्कुल सहजता से, सरलता से, आनंद से बैठ जाए। तो मैं मान लूं कि आप एक-दूसरे को नहीं छू रहे हैं और कुछ लोग तो छू रहे हों वे सोच रहे हों क्या हर्जा है बैठे रहें। सिर्फ धीरे से आंख की पलकों को छोड़ दें, आंख को बंद हो जाने दें, बंद न करें, बंद हो जाने दें, धीरे से पलक छोड़ दे और आंख बंद हो जाए। धीरे से पलक को छोड़ दे ऐसा भाव करेंगे कि पलक छूट गई, छूट जाएगी और धीरे से बंद हो जाएगी, दबाव भी नहीं होगा आंख धीरे से बंद हो जाएगी। अगर आंख बिल्कुल ढीले से छोड़ दी तो आंख के छोड़ते से लगेगा भीतर एक हलकापन आ जाएगा। आधे से ज्यादा तनाव तो जीवन में आंख के तने होने का है, बिल्कुल छोड़ दे आंख को। आंख बंद हो जाने दो, बिल्कुल शांत बैठ जाए किसी चीज से कोई विरोध नहीं, कोई विरोध नहीं है। हम कोई बड़ी साधना भी नहीं कर रहे है उसी ख्याल से, कोई साधना नहीं कर रहे, विश्राम कर रहे हैं।

जैसे ही शांत होने लगेंगे भीतर की श्वासों का पता चलने लगेगा। श्वास का आना-जाना भी मालूम होने लगेगा, श्वास भीतर बाहर होगी तो पता चलेगा। हवाएं हिलाएंगी, तो पता चलेगा, दूर कुछ गायन चल रहे हैं, उनकी घंटियां बज रही हैं, तो पता चलेगा। जो कुछ भी ध्वनियां चारों तरफ हो रही है शांति से उन्हें गूंजने दें और चुपचाप उनका निरीक्षण कर दे। किसी का कोई विरोध नहीं, बस शांति से सुनें, जो भी आवाजें हो रही है उन्हें सुनें। मौन सुनते रहे, सुनते-सुनते ही मन शांत हो गया, एकदम शांत।

चौथा प्रवचन

बहुत से प्रश्न मेरे समक्ष हैं। सबसे पहले तो यह पूछा गया है कि मेरी बातें अव्यावहारिक मालूम होती हैं। ठीक प्रतीत होती हैं, लेकिन अव्यावहारिक मालूम होती हैं।

यह ठीक से समझ लेना जरूरी हैं। मनुष्य के इतिहास में जो-जो हमें अव्यावहारिक मालूम पड़ा है, वही कल्याणप्रद सिद्ध हुआ है और जिसे हम व्यवहारिक समझते हैं, उसने ही हमें आश्चर्यजनक रूप से दुख में, हिंसा में और पीड़ा में डाला है। निश्चित ही जो आप कर रहे हैं वह आपको व्यवहारिक मालूम होता होगा, प्रेक्टिकल मालूम होता होगा, लेकिन उसका परिणाम क्या है आपके जीवन में। व्यवहारिक जो आपको मालूम पड़ता है आप कर रहे हैं, लेकिन उसका परिणाम क्या है? उसका परिणाम तो सिवाय दुख और चिंता के कुछ भी नहीं। निश्चित ही उससे भिन्न कोई भी बात, एकदम से अव्यावहारिक मालूम होगी। इसलिए नहीं कि वह अव्यावहारिक है, बल्कि इसलिए कि जिसे आप व्यवहारिक समझते रहे हैं, वह उससे भिन्न और विपरीत है, अपरिचित है। और कोई भी अज्ञात जीवन दिशा में प्रवेश करने के पूर्व परिचित भूमि छोड़नी पड़ती है। जिस परिचित को हम जानते हैं, ज्ञात और नोन, उसको छोड़ना पड़ता है तो ही अज्ञात में प्रवेश होता है। निश्चित ही थोड़ा अव्यावहारिक होने को कभी न कभी तैयार होना चाहिए। जैसे उदाहरण को यह बात बिल्कुल ही व्यवहारिक मालूम होती है कि कोई मुझे गाली दे, तो मैं दुगुने वजन की गाली उसे दूं। यह बात व्यवहारिक मालूम होती है, कोई मुझे ईंट मारे, तो मैं पत्थर से जवाब दूं।

क्राइट ने जब लोगों को कहा, कि तुम अपना बायां गाल भी उनके सामने कर देना, जो दाएं पर चोट करें तो बात बिल्कुल अव्यावहारिक लगेगी। लेकिन ईंट के जवाब में पत्थर से मारना, इस अव्यावहारिक बात पर ही तीन हजार वर्ष में साढ़े चार हजार युद्ध हुए हैं। तीन हजार वर्षों के मनुष्य जाति के इतिहास में साढ़े चार हजार युद्ध इस व्यवहारिक बात पर हुए हैं कि तुम ईंट का जवाब पत्थर से देना और जब तुम्हारी एक आंख फोड़ें तुम दोनों फोड़ देना। सोचे थोड़ा सा अगर तीन हजार वर्षों में साढ़े चार हजार बार मनुष्य जाति पागल हो जाती हो, इस मनुष्य जाति की व्यवहारिकता में कुछ न कुछ बुनियादी भूल होनी चाहिए। और यह पागलपन कुछ थोड़ा नहीं है, पिछले दो महायुद्धों में दस करोड़ लोगों की हत्या की है हमने। फिर भी हम कहते हैं कि हम जो सोचते हैं, वह व्यवहारिक है और अब तो हम उस समय के करीब आ रहे हैं कि हो सकता है पूरी मनुष्य जाति समाप्त हो जाए, लेकिन फिर भी हम कहेंगे कि हम जो सोचते हैं, वह व्यवहारिक है। सारा जीवन नरक हो गया है, लेकिन हम कहते हैं कि हम व्यवहारिक आधारों पर नरक में खड़े हैं और जो कोई भी बात इस नरक से बाहर निकालने की हो, वह अव्यावहारिक मालूम होती है, जरूर होगी, होनी ही चाहिए, अगर वह आपको अव्यावहारिक मालूम न होती तो आपने कभी का उसे कर लिया होता और जीवन बदल गया होता।

इसलिए कृपा करके अपनी व्यवहारिकता पर थोड़ा संदेह करें, आपकी व्यवहारिकता घातक हैं। आपके जीवन में वह सारी जाति के जीवन में, थोड़ा उस पर शक करें, थोड़ा विचार करें कि व्यवहारिकता कहां ले आई। जरूर क्राइट की बात बिल्कुल अव्यावहारिक मालूम होती है। क्राइट ने कहा, उन्हें क्षमा कर देना जो तुम्हें चोट करें। बिल्कुल अव्यावहारिक बात हैं। क्राइट को जिस दिन सूली दी गई, वे सूली पर लटकाए गए, लटकाने वाले लोगों ने कहा कि कुछ अंतिम बात कहनी हो तो कहो, तो उन्होंने कहा, हे परम पिता! इन सबको क्षमा कर देना, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं? ये तो नहीं कहना था, भगवान से प्रार्थना कर दी थी कि जला

कर इन सबको खाक कर देना और साथ में नरक में डालना और अग्नि में चढ़ाना और कढ़ाईयों में डालना और इनको सताना दुष्टों को। लेकिन उन्होंने बड़ी अव्यावहारिक बात कहीं कि इन्हें माफ कर देना, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं? इन्हें अपने करने का भी कोई पता नहीं है, होश नहीं हैं। जरूर यह बात अव्यावहारिक लगती हैं, लेकिन अव्यावहारिक होने से कोई बात न तो गलत होती हैं और न वस्तुतः जीवन में न उतारने योग्य हो जाती हैं। मेरा निवेदन है अगर कोई बात ठीक लगती हो, और अव्यावहारिक मालूम होती हो, तो यही समझना ज्यादा उचित होगा कि जिसे हम व्यवहारिक समझते रहे हैं, वह हमारी समझ भूल है। रह गई बात यह कि नए प्रयोग तो जीवन में शुरू करते वक्त अजनबी होंगे, लेकिन यदि उन्हें कोई करेगा, तो वे क्रमशः परिचित होते जाते हैं। और ठीक उलटी बात घटती है। एक छोटी सी घटना कहूं।

चंपाबन में गांधी थे। किसी अंग्रेज चाय बगीचे के मालिक ने। गांधी ने वहां कुछ आंदोलन चलाया। एक चाय बगीचे के मालिक अंग्रेज ने, किसी गुंडे को कहा पांच हजार रुपये देंगे, गांधी को मार डालो। अदालत में मुकदमे से घबराना मत, हमारी अदालतें हैं, उसमें भी हम बचा लेंगे। यह खबर गांधी के मित्रों को लगी, उन्होंने गांधी को जाकर कहा, कि ऐसी-ऐसी खबर है। रोज सुबह चार बजे उठकर आप अंधेरे में घूमने में जाते हैं, ठीक नहीं। कल से इतने जल्दी न जाए, सूरज निकल आए तब जाए, कोई भी खतरा हो सकता है। रोज गांधी चार बजे उठते थे, उस दिन तीन बजे ही उठ आए। मित्र सोते थे, चार बजे के ख्याल में थे कि उठेंगे तो वे भी उठ आएंगे। गांधी तीन बजे उठे और उस आदमी के घर पहुंच गए, जिसके बाबत यह खबर थी कि वे पांच हजार रुपये देकर मरवाना चाहता है। तीन बजे रात गांधी को देखकर उसे विश्वास ही नहीं आया, दो चार दफे उसने आंख मीड़ी होंगी, साफ की होंगी; कि अंधेरे में सपना तो नहीं देखता रात में, कहां गांधी सामने खड़े हैं। गांधी ने जाकर कहा कि तुम्हारी बड़ी कृपा है, क्योंकि इस शरीर के लिए मर जाने पर पांच हजार देने को कोई भी राजी नहीं होगा, आदमी के शरीर की कीमत बहुत कम है। शायद आपको पता न हो, दुनिया में किसी भी जानवर की बजाय, आदमी के शरीर की कीमत बहुत कम है। एक जानवर का शरीर बिकता है, तो उससे कुछ पैसा मिल सकता है, आदमी के शरीर में कुछ भी नहीं है। हिसाब लगाया जाए, तो मुश्किल से कोई साढ़े चार-पांच रुपये का सामान निकलता है आदमी के शरीर में से, इससे ज्यादा का नहीं। अब थोड़ा जमाना मंहगा है, तो साढ़े सात का आठ का निकलता होगा, इससे ज्यादा का नहीं। तो गांधी ने उनको कहा कि पांच हजार बहुत हैं, मुझे इतना दाम देने को कोई राजी नहीं होगा, और फिर मुझे जरूरत भी है हरिजन फंड में तो यह पांच हजार रुपये मुझको दे दे और गोली मार ले और यहां कोई भी मौजूद नहीं है, इससे कोई सवाल भी नहीं उठेगा, कोई झंझट भी नहीं उठेगी, कोई परेशानी भी खड़ी नहीं होगी। वह आदमी तो घबड़ा गया, यह विश्वास करना संभव नहीं हुआ, ऐसी अव्यावहारिक बातें कोई विश्वास करता है, तो बहुत घबड़ा गया। क्या करें, क्या न करें, उसकी समझ न आया, सिवाय इसके कि गांधी के पैर छुएं। उसने गांधी के पैर छुए और कहा, कि मैं अब तक सोचता रहा कि यह जीसस क्राइस्ट की सारी घटना काल्पनिक है, आपने आज मेरे द्वार पर उपस्थिति होकर स्पष्ट कर दिया कि क्राइस्ट भी हुआ होगा, और फांसी पर लटके हुए उसने कहा होगा कि क्षमा कर दें इनको। क्योंकि इन्हें पता नहीं कि ये क्या कर रहे हैं। आपने मुझे क्रिश्चियन बना दिया। गांधी तो वापिस लौट आए, लेकिन वह आदमी बदल गया, वह दूसरा आदमी हो गया।

निश्चित ही कोई भी व्यवहारिक आदमी इस तरह का काम करने को राजी नहीं होगा, लेकिन दुनिया उन लोगों से आगे बढ़ती है, जो थोड़े से अव्यावहारिक होते हैं। और उन लोगों से तो रोज गड्ढे में गिरती है, जिनको हम व्यवहारिक कहते हैं। आपकी बड़ी कृपा होगी, अपने पर भी और दूसरों पर भी, अगर आप अपने थोड़ी

व्यवहारिकता से हटे और थोड़े अव्यावहारिक होने की भी हिम्मत करें। स्मरण रखें- अव्यावहारिक होने की थोड़ी सी भी चेष्टा जीवन में क्रांति ला सकती है। मैं जो कह रहा हूं, ऐसे तो जीवन के मूलभूत सूत्रों से संबंधित हैं, अव्यावहारिक उसमें कुछ भी नहीं है। जो भी करेगा, वह पाएगा, उससे ज्यादा सम्यक व्यवहार और कोई भी नहीं हो सकता। लेकिन हम बहुत होशियार लोग हैं, हम जो करते हैं, उससे न हटने के लिए हजार बहाने खोजते हैं। और सबसे बड़ा बहाना यह होता है कि हम किसी बात को कह दे कि बात तो बिल्कुल ठीक है, लेकिन अव्यावहारिक है। कहीं ठीक बातें भी अव्यावहारिक होती, बड़ी हैरानी की बात है, अगर ठीक बातें अव्यावहारिक होती है, तो फिर गलत बातें व्यवहारिक होती होंगी। तब तो ठीक और अव्यावहारिक बातें ही चुनना उचित है बजाय गलत और व्यवहारिक बातों के। क्योंकि चुनाव हमेशा ठीक और गलत के बीच है। जो आपको ठीक मालूम होता हो, उसे चुनने का साहस होना चाहिए। थोड़ी तकलीफ भी होगी, ठीक को चुनने में। थोड़ी असुविधा भी होगी, लेकिन जो सत्य जीवन के लिए थोड़ी असुविधा और तकलीफ भी उठाने को राजी न हो। जो इतना भी मूल्य न चुकाना चाहता हो, उसका जीवन सत्य नहीं हो सकता है, असत्य ही रहेगा। इसलिए यह मेरी कोई भी बात अव्यावहारिक मालूम होती हो, उसे थोड़ा सोचें, समझे, विचारे। थोड़ा प्रयोग करें, नहीं पाएंगे कि वह अव्यावहारिक है। क्योंकि अव्यावहारिक बातें करने से फायदा भी क्या है, अर्थ भी क्या है, प्रयोजन भी क्या है? मेरी तरफ से मैं कोई अव्यावहारिक बात आपसे नहीं कह रहा हूं। आपकी तरह से अव्यावहारिक दिखाई पड़ती हो, तो थोड़ा विचार करें, तो थोड़ा प्रयोग करें, देखें। प्रयोग करते ही पता चलेगा कि हम जो कर रहे थे, वही अव्यावहारिक था।

और भी कुछ प्रश्न पूछें हैं, ऐसे तो एक ही प्रश्न होता है, कि उसे और गहरे में जाया जाए, तो वह लंबा हो, लेकिन फिर सब प्रश्नों के उत्तर संभव नहीं होंगे। कल या आज सुबह मैंने कहा, कि जिन्होंने कहा है कि स्त्री नरक का द्वार है। उन्होंने गलत कहा है, तो किसी ने पूछा है कि हम तो ऐसे ही अनुभव करते हैं कि किसी स्त्री के चक्कर में पड़ गए कि फिर नरक का दरवाजा खुला। और फिर जन्म-मरण का सिलसिला शुरू हो जाता है। तो आप यह किस आधार पर कहते हैं कि स्त्री नरक का द्वार नहीं है।

कि इन्होंने बड़ी सीधी और साफ बात पूछी हैं, लेकिन वे ये भी तो सोचे कि जोस्त्री आपके चक्कर में पड़ गई है कि उसका नरक का दरवाजा आपने खोल दिया कि नहीं। आप ही स्त्री के चक्कर में पड़े हैं यह बड़ी कमजोर बात होगी, स्त्री भी आपके चक्कर में पड़ गई हैं। लेकिन इस बात को आप चक्कर में पड़ना क्यों समझते हैं। इस बात को चक्कर में पड़ना समझते हैं, शायद इसलिए नरक का द्वार खुल जाता है। हम जीवन को सहजता से लेते ही नहीं, हमारा चित्त बहुत जटिल हो गया और हम जीवन को बड़ी दारुणता से लेते हैं, बड़ी कठिनाई से लेते हैं। हमने जीवन की सारी निसर्गता को सारी सहज स्वाभाविकता कोझूठे सिद्धांतों, झूठी मान्यताओं से इस भांति दबा रखा है कि हम अद्‌भुत रूप से मूर्खतापूर्ण चिंतन में उतर गए हैं और सारे जीवन को खराब किए हुए हैं।

मैं एक घर में मेहमान था, उस घर की गृहिणी ने मुझसे कहा कि मैं पति को बहुत सम्मान देती हूं, लेकिन फिर भी रोज कलह हो जाती है। आदर करती हूं, जैसा मुझे सिखाया कि परमात्मा समझो पति को वैसे ही समझने की कोशिश करती हूं, लेकिन फिर भी चौबीस घंटे कलह चलती है, बहुत मुश्किल हो गया, नारकीय जीवन हो गया। मैंने उन महिला को कहा, कि शायद तुम्हें यह पता न हो कि इस नारकीयता में उन्हीं लोगों का हाथ है, जो नरक-वर्ग की बहुत बातें करते हैं। वह बोली कैसे? मैंने उनको कहा कि हम बहुत छोटे से बच्चों को भी सैक्स के प्रति घृणा सिखाते हैं, कंडमनेशन सिखाते हैं, निंदा सिखाते हैं, सैक्स को एक पाप बतलाते हैं। बीस

वर्ष की युवती हो जाती है, तब वह विवाहित होती है या बीस वर्ष बाईस वर्ष का युवक हो जाता है, तब वह विवाहित होता है। बीस वर्ष तक जिस लड़की ने काम की वृत्ति को पाप और घृणा समझा हो, जब विवाह के बाद पति उसके निकट आए तो यह आदमी उसे पापी मालूम पड़े, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। और इस आदमी के प्रति उसके मन में अनादर और घृणा का भाव आए यह भी आश्चर्यजनक नहीं है। जिस देश में सैक्स के प्रति निंदा का भाव हो, उस देश में पत्नी पति का आदर नहीं कर सकती और न पति पत्नी का आदर कर सकता है। दोनों के मन में घृणा है, तीव्र घृणा और किस बात के प्रति घृणा है।

काम की शक्ति समस्त सृजन का मूल हैं, सारा जीवन उसी से विकसित होता है, उसी केंद्र से, पौधे और पशु और पक्षी और फूल और मनुष्य सभी उसी से पैदा होते हैं। अगर परमात्मा की कोई भी शक्ति काम कर रही है विश्व के निर्माण में, तो वह काम की शक्ति है। वह सैक्स की शक्ति है, वह सैक्स एनर्जी है। जो भी सृष्टि हो रही है, जो भी सृजन हो रहा है, वह उससे हो रहा है, उस मूल शक्ति को जब हम निंदा के भाव से देखते हैं, तो जीवन में कुंठा पैदा हो जाए, दुख पैदा हो जाए, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। और जब हम उसे निंदा के भाव से देखते हैं, घबराहट से देखते हैं, परेशानी से देखते हैं, तो उससे लड़ते भी है और वह वृत्ति हमारे प्राणों के केंद्र पर काम भी करती है, तो हम उससे आकर्षित भी होते हैं, उससे भागते भी है, उसके निकट भी जाते हैं, उससे दूर भी होना चाहते हैं और इस खींच-तान में, इस कानफलिक्ट में अगर जीवन नरक बन जाता है, न तो इसमें स्त्री का कोई कसूर है, न पुरुष का कोई कसूर है।

जीवन में जो निसर्ग है, जो प्रकृति है, उसे हमने सहजता से लेना ही छोड़ दिया। हमने उसे सहजता से लिया ही नहीं और बड़े आश्चर्य की बात है, अगर हम उसे सहजता से ले सके। और अगर हम पति-पत्नी को प्रेम दे सके, पत्नी पति को प्रेम दे सके अबाध, अनकंडीशनल, किसी शर्त के कारण नहीं, किसी बाधा के कारण नहीं, सहज और उन्मुक्त प्रेम दे सके, तो सबसे जो महत्वपूर्ण बात है, वह यह है कि जितना प्रेम गहरा और घना होगा, उतना ही सैक्स काम का संबंध विलीन होता चला जाएगा। काम की सारी शक्ति प्रेम में परिवर्तित हो सकती है और किसी चीज में कभी परिवर्तित नहीं होती। और जो लोग सैक्स से लड़ाई शुरू कर देते हैं, उनका जीवन अत्यधिक कामुक हो जाता है, अत्यधिक मानसिक व्यभिचार से भर जाता है। मन में व्यभिचार करते हैं ऊपर से डरते हैं, घबड़ाते हैं, लड़ते हैं और तब निरंतर एक नरक पैदा हो जाए तो इसमें आश्चर्य कौन सा है। न तो पत्नी नरक पैदा करती है, न बच्चे नरक पैदा करते हैं, न पति नरक पैदा करता है, कोई नरक पैदा नहीं करता। जीवन को देखने का हमारा ढंग अगर बुनियादी रूप से गलत है, तो नरक पैदा हो जाता है, नरक पैदा होता है जीवन के देखने के ढंग से और हम जिस तरह के देखने के आदी हो जाते हैं, फिर जीवन वैसा ही हो जाता है। और जब जीवन को हम गलत ढंग से देखते हैं, और वह गलत होता चला जाता है, घबराहट बढ़ती चली जाती है, बेचैनी बढ़ती चली जाती है। तो हर आदमी दूसरे पर दोष देता है, अपने पर तो दोष नहीं देता। पति पत्नी पर दोष देता है, पत्नी पति पर दोष देती है और यह दोष देने की दूसरे पर थोपने की प्रवृत्ति इतनी जघन्य है, इतनी अपराधपूर्ण है, जिसका कोई हिसाब नहीं है। और तब निंदा का एक आदान-प्रदान चलता है जिसमें कोई हल नहीं हो सकता, समाधान नहीं हो सकता है। तो आप गालियां दे रहे हैं स्त्रियों को, स्त्रियां शास्त्र लिखेंगी तो वे भी आपको गालियां देंगी, अभी उन्होंने लिखे नहीं है, अभी उन्होंने कोई शास्त्र तैयार नहीं किए, अभी वे आपके ही शास्त्र ही पढ़ती है और उन्हीं को ही मानती है। तो इसलिए आपकी बातों में वह भी सहमत है, लेकिन वे दिन दूर नहीं है, जब स्त्रियां शास्त्र लिखेंगी और वे उसमें लिखेंगी कि ये सब पुरुषों के कारण सारा जगत नष्ट हो गया, सारा आवागमन चल रहा है और यह सारा का सारा नरक का द्वार यह पुरुष ही है और जब स्त्री और पुरुष एक-

दूसरे को नरक का द्वार समझ लें तो दुनिया अगर नरक बन जाए तो क्या बनेगी और क्या बनेगा फिर दुनिया। हम जिंदगी को जैसा लेना शुरू करते हैं, वैसी जिंदगी हो जाती है, हम जैसा जिंदगी को देखना शुरू करते हैं, वैसी जिंदगी हो जाती हैं। मेरी दृष्टि यह है कि जो आदमी वस्तुतः सरल और शांत होना चाहता है, वह जीवन की जो प्रकृति है, वह जो नेचर है, वह जो निसर्ग है, उसको अत्यंत धन्यता से वीकार करेगा, अत्यंत धन्यता से, अत्यंत थेंकफुल होगा, धन्यवाद से भरा होगा। कहां है गलत, कहां है कुछ गलत, कुछ भी गलत नहीं है। फूल पैदा होते हैं बीज से, कभी आपने जाकर यह कहा कि यह बीज नारकीय है, इससे फूल पैदा होते हैं। नहीं आपने कभी नहीं कहा, और आपको पता नहीं है कि फूल से भी बीज उसी तरह पैदा होते हैं, जिस तरह मनुष्य मनुष्य पैदा होता है, उसी तरह सैक्स वहां भी काम कर रहा है फूलों में भी, लेकिन हम अजीब लोग है- हम जाएंगे तो फूल को कहेंगे बहुत सुंदर। और तितलियां उड़ रही है और फूलों पर से पराग ले जा रही है और दूसरे फूलों तक पहुंचा रही है। वह सब जन्म के बीजांकुर हैं और फूल उड़ रहे हैं हवाओं में, उनका पराग उड़ रहा है और दूसरे फूलों तक जा रहे हैं, वह सब बीज है, वह सब सैक्सुअल एक्टिविटी है। लेकिन हम फूलों के लिए प्रसन्न है और तितलियों के लिए गीत लिखते हैं और फूलों के लिए गीत लिखते हैं। और मनुष्य के जीवन में जब बच्चे का जन्म होता है, तो जिस अद्‌भुत व्यवस्था से बच्चे का जन्म होता है उसकी निंदा करते हैं। आपको पता है कि जब, जब भी प्रेम से कोई स्त्री और पुरुष का मिलन होता है तो उस क्षण में वे दोनों मिट जाते हैं और उनके दोनों के भीतर परमात्मा के सृजनात्मक शक्ति काम करने लगती है और एक बच्चे का जन्म होता है, एक नया जीवन पैदा होता है। इससे बड़ी मिस्टरी इससे बड़ा कोई रहस्य नहीं है, लेकिन इस सबसे बड़े रहस्य को जहां से जीवन के अंकुर बढ़ते हैं, बड़े होते हैं, जहां से जीवन फैलता है, न मालूम किन नासमझों ने कुंठित किया हुआ है, निंदित किया हुआ है और निंदा भर दी है इस बात के प्रति और जब निंदा हमारे मन में होगी तो स्वाभाविक है कि बच्चे विकृत पैदा होंगे। इस बात को आप समझ लें दुनिया में मनुष्य जाति का जो पतन हो रहा है वह इस बात से हो रहा है कि जब मां-बाप दोनों का हृदय काम के संबंध के प्रति, मैथुन के प्रति घृणा से भरा हुआ हो, तो उन दोनों से जो बच्चे पैदा होंगे, वे पवित्रता में पैदा नहीं हो सकते हैं। वे बच्चे कंसीव ही नहीं होते पवित्रता में।

मैं तो मानता हूं कि अगर जीवन के बाबत हमारी समझ गहरी होगी तो हम सैक्स के प्रति उतना ही पवित्रता की धारणा, दृष्टि रखेंगे जिससे हम मंदिर में प्रार्थना के प्रति रखते हैं, उससे भी ज्यादा। उससे भी ज्यादा इसलिए कि मंदिर में हो सकता है कि पत्थर की मूर्ति हो, परमात्मा न हो, लेकिन सैक्स के संबंध में, मैथुन में तो परमात्मा की पष्ट शक्ति काम कर रही है, जीवन का जन्म हो रहा है। पत्नी के पास पति वैसे जाएगा, जैसे उसे मंदिर के पास जाना चाहिए। पत्नी पति के पास वैसे जानी चाहिए, जैसे अत्यंत प्रार्थनापूर्ण हृदय से भरी हुई। अगर पत्नी और पति के बीच का संबंध अत्यंत प्रार्थना, पवित्रता और ध्यान से भरा हुआ हो तो जो बच्चे पैदा होंगे, वे कुछ और ही तरह के पैदा होंगे, उस पवित्रता से पवित्रता का जन्म होगा, उस प्रेम और प्रार्थना से कुछ और तरह की आत्माएं विकसित होंगी, लेकिन इस घृणित संबंध से जो भी पैदा होगा वह बहुत श्रेष्ठ नहीं हो सकता है। मनुष्य जाति का पतन इसलिए हुआ है।

मनुष्य जाति रोज पतित होती जा रही है और उसके पतन के पीछे यह कारण नहीं है कि भौतिकवाद है और पश्चिम के वैज्ञानिक है और ये हवाई जहाज बनाने वाले, मोटर बनाने वाले लोग है और अच्छे कपड़े बनाने वाले लोग है। ये लोग नहीं है पतन के पीछे, न ये फिल्में है पतन के पीछे और न कोई और पतन के पीछे। पतन के पीछे सैक्स के प्रति हमारा जो निंदा का भाव है, वह मनुष्य जाति को बीजों से नष्ट कर रहा है, उसके भीतर से जन्म जहां से शुरू होता है, वहां से विकृत और कुरूप कर रहा है। दोनों की भावनाएं नए बच्चे को निर्मित

करती है अगर दोनों की भावनाएं ऐसी कुंठित है एक दूसरे को नरक समझ रहे हैं, कलह समझ रहे हैं और मजबूरी में जबरजस्ती में एक दूसरे से मिल रहे हैं तो स्वाभाविक है कि जो पैदा होगा, वह कोई श्रेष्ठ नहीं हो सकता है, वह सुंदर नहीं हो सकता। वह सत्य और शिव नहीं हो सकता। सैक्स के संबंध में मेरी अत्यंत आदरपूर्ण, अत्यंत पवित्रता की भावना है, उससे ज्यादा पवित्र कुछ भी नहीं है। हम मां को आदर देते हैं, लेकिन हमको पता नहीं है, हम पिता को आदर देते हैं, लेकिन हमें पता नहीं है। मां और पिता से भी गहरे में जो सृजन का मूल्य है वह कौन है? और मां को आप कैसे आदर देंगे जब आप सैक्स की निंदा करेंगे और पिता को कैसे आदर देंगे। और बहुत गहरे में जब आप सृजन को ही निंदा कर रहे हैं तो स्रष्टा को कैसे आदर देंगे। मेरी समझ में नहीं आता है कौन सा तर्क है कौन सा गणित है। कहते हैं स्रष्टा को हम आदर देंगे परमात्मा को, सृजन का जो मूल स्रोत है उसकोआदर देंगे तो फिर सृजन की इस मूल क्रिया को कैसे अनादर करेंगे आप। मेरी दृष्टि में सृजन का मूल स्रोत अनादर के योग्य नहीं, अत्यंत आदर के योग्य है। एक और ही तरह का दांपत्य जीवन विकसित होना चाहिए, यह दांपत्य जीवन बिल्कुल रुग्ण और गलत है और इसे गलत करने में तथाकथित धार्मिक साधु संतों के उपदेशों का हाथ है और एक खतरनाक षड्यंत्र कोई दो तीन हजार वर्ष से चल रहा है मनुष्य जाति को अद्‌भुत रूप से विकृत करने में, और उनके हाथों से चल रहा है जिनसे हम सोचते हैं कि जीवन ऊंचा उठेगा, उनकी ही बातें और उनकी खतरनाक और घातक बातें जीवन को नीचे ले जा रही है। क्या इसका यह अर्थ है कि मैं आपसे यह कह रहा हूं कि आप सब भांति सैक्स में डूब जाए, नहीं यह मैं आपसे नहीं कह रहा हूं। मैं तो आपसे यह कह रहा हूं कि सृजन का जो मूल केंद्र है उसके प्रति अनादर और निंदा का भाव न रखें, फिर क्या होगा? जब आप अत्यंत प्रेम और पवित्रता से उस केंद्र को देखना शुरू करेंगे, उस वृत्ति को तो आप खुद हैरान हो जाएंगे। अगर एक पति अपनी पत्नी को अत्यंत आदर और प्रेम से देखना शुरू करें, नरक का द्वार न समझें और वैसा ही पत्नी न समझें। और जिस संबंध के कारण वे एक-दूसरे का नरक बन गए उस संबंध को प्रेम और आदर और सम्मान से स्वीकार करें, तो आप बहुत हैरान हो जाएंगे। जैसे-जैसे यह प्रेम गहरा होगा और यह पवित्रता गहरी होगी और यह प्रार्थना गहरी होगी, वैसे-वैसे सैक्स की जो सृजनात्मक शक्ति है वह और ऊपर उठकर प्रकट होनी शुरू हो जाएगी। वह मैं सृजन के रूप ले लेगी, हो सकता है आप से फिर बच्चे ही पैदा न हो, एक गीत पैदा हो, कविता पैदा हो, एक मूर्ति बनें, सेवा निकलें। सत्य का जन्म हो, सौंदर्य का जन्म हो, आपसे कुछ और नए तल पर सृजन शुरू होगा। आपका जीवन सृजनात्मक और क्रिएटिव हो जाएगा। जब कोई व्यक्ति जीवन में श्रेष्ठतर सृजन के मार्ग खोज लेता है तो उसके भीतर से अपने आप सृजन की शक्ति नए-नए द्वारों से प्रकट होने लगती है और जिन्हें हम बच्चों का जन्म कहते हैं, उस द्वार से विलीन हो जाती है एक ट्रांसफॉरमेशन होता है, एक परिवर्तन हो जाता है एक बिल्कुल ही नया परिवर्तन हो जाता है। इसलिए जिन लोगों के जीवन में सृजन के नए द्वार होते हैं, प्रेम के नए द्वार होते हैं, प्रार्थना और पवित्रता की नई दिशाएं खुल जाती है, उन लोगों के जीवन में अनायास ही ब्रह्मचर्य का प्रवेश हो जाता है। ब्रह्मचर्य ठोक-ठोक कर लाना नहीं पड़ता और जो ठोक-ठोक कर लाया जाता है और जबरदती लाया जाता हो, वह ब्रह्मचर्य झूठा है, उस ब्रह्मचर्य में कोई भी अर्थ नहीं है और उस तरह के ब्रह्मचर्य से वथम्, सामान्य काम का जीवन सैक्स का जीवन ज्यादा उचित और योग्य है। इन बातों को सुनेंगे, समझेंगे, आग्रह नया नहीं है कि मान लेंगे। क्योंकि मैं जो कह रहा हूं वह तो हजारों वर्ष से जो कहा गया है उससे इतना भिन्न और विरोधी है कि मैं यह अपेक्षा नहीं कर सकता है कि वह एकदम से आपकी समझ में भी आ जाए। लेकिन आज नहीं कल मनुष्य जाति को समझना होगा, क्योंकि कुछ भूल हुई है और कहीं कोई बुनियादी रुग्णता हमको पकड़ ली हैं।

यह मैं आपसे कहूं कि सैक्स को छोड़कर कोई व्यक्ति ब्रह्मचर्य को उपलब्ध नहीं होता। हां, जो व्यक्ति सृजन के नए द्वार खोज लेता है, वह अनायास ही ब्रह्मचर्य को उपलब्ध हो जाता है। यह चित्त की दशा कैसे विकसित हो, उसके लिए मैं सारी बात कर रहा हूं, ध्यान है। आज मैंने कुछ तीन सूत्र कहे हैं, कल कुछ कहा है, कल कुछ और आपसे कहूंगा। अगर इन सारे सूत्रों पर चित्त शांत और सरल होता जाए तो अद्‌भुत रूप से आपके जीवन से सैक्स विलीन हो जाएगा, इसका यह अर्थ नहीं है कि आपके जीवन से समस्त सृजन विलीन हो जाएगा, आपके जीवन में सृजन के नए द्वार खुल जाएंगे। नए, नए मार्ग, नए आयाम खुल जाएंगे, आपसे बहुत सृजन हो सकेगा, बहुत कुछ चीजें आपसे पैदा हो सकेंगी। लेकिन यह इस भांति नहीं हो सकेगा, जिस भांति हम सोचते रहे हैं। इसी संबंध में एक प्रश्न और पूछा हुआ है कि विवेकानंद ने या किसी ने कहा है कि वीर्य को संरक्षित करो, उससे ओज पैदा होगा। यह जो इस तरह की जो बातें हमें शिक्षा में दी गई हैं। यह भी बहुत आश्चर्यजनक रूप से गलत है। जीवन में ओज का विकास हो, तो वीर्य अपने आप संरक्षित होता है, लेकिन वीर्य के संरक्षण से ओज का विकास नहीं होता। वीर्य के संरक्षण से विक्षिप्तता आ सकती है, ओज नहीं, पागलपन आ सकता है, ओज नहीं। लेकिन ओज का विकास हो जीवन में तो वीर्य अपने आप संरक्षित होता है। इसलिए जोर इस बात पर जहां भी दिया जाता है कि वीर्य को संरक्षित करो, यह घातक शिक्षा है और इसका कुल परिणाम इतना हो सकता है कि ओज तो पैदा न हो और जीवन अत्यंत कुंठित और घूर और दमित हो जाए, सप्रेड हो जाए। जिन कोमों ने इस तरह की बातें सोची है जो कि उलटी है, मुझे दिखाई यह पड़ता है जैसे कि यह सब ऐसा ही मामला है जैसे मैं आपसे कहूं कि इस घर में बहुत अंधेरा है। अंधेरे को निकाल बाहर करो तो दीया अपने आप जल जाएगा, कोई ऐसा कहे तो हम कहेंगे यह बड़ी गड़बड़ बातें कह रहा है। अंधेरे को तो बाहर निकाला ही नहीं जा सकता है, अगर हम अंधेरे को बाहर निकालने लगेंगे तो हम टूट जाएंगे, अंधेरा तो वही रहेगा। अंधेरा निकालकर दीया नहीं जलता, हां दीया जल जाए तो अंधेरा अपने आप बाहर निकल जाता है। अंधेरे को निकालने से दीया नहीं जलता, दीये के जलने से अंधेरा पाया ही नहीं जाता है, तो मैं आपसे यह कह रहा हूं ओज को जलाओ, ओज को जगाओ, वीर्य अपने आप संरक्षित हो जाएगा। लेकिन हम फिक्र करते हैं वीर्य को संरक्षित करने की, वीर्य संरक्षण में आप क्या करेंगे, जिस व्यक्ति के जीवन में ओज ही नहीं जगा, जिस व्यक्ति के जीवन में कोई आंतरिक शांति की और प्रकाश की ज्योति नहीं जगी वह क्या करेगा? वह करेगा यह कि उसके भीतर जितनी भी काम की भावनाएं होंगी उनको दबाएगा, लड़ेगा उनसे, उनको जबरदस्ती रोकेगा। इस रोकने में दबाने में उसका चित्त विकृत होगा, खंडित होगा, इस दबाने में घबराहट और भय पैदा होगा। इस दबाने में निरंतर डर होगा कि कब यह दमन छूट जाए, कब कहीं यह संयम थोड़ा सा शिथिल हो जाए तो मुश्किल खड़ी हो जाए, विस्फोट हो जाए, चीजें टूट जाएं और यह विस्फोट होगा और इस विस्फोट को बचाने के वह जो भी उपाय करेगा उसमें उसका जीवन नष्ट होगा और कुछ भी नहीं होगा।

मैं पढ़ता था, एक घटना पढ़ता था। एक महिला एक होटल में आकर ठहरी, वह ब्रह्मचारनी थी, कोई पचास वर्ष उसकी उम्र हो गई थी। उसने धर्म की शिक्षा में अपने जीवन को संयमित किया था। वह सातवें मंजिल पर ठहरी और थोड़ी ही देर बाद नीचे उसने मैनेजर को फोन किया, कि एक आदमी यहां आकर मेरे साथ बहुत बुरा दुर्व्यवहार कर रहा है। वह मेरे सामने बिल्कुल ही करीब-करीब उघाड़ा खड़ा हुआ है। मैनेजर घबरा गया, कि कौन आदमी इसके पास पहुंच गया, वहां क्या हो गया, अकेला जाना उसने भी ठीक नहीं समझा। वह दो पुलिस के आदमियों को लेकर भागा हुआ ऊपर पहुंचा। वह महिला वहां अकेली थी, उसने पूछा वह दूसरा आदमी कहां, उसने कहा आप देखते नहीं वह सामने। सामने तो खिड़की थी, और कोई आधा मील तक कोई

दूसरा मकान भी नहीं था। मैनेजर ने कहा, कोई हमें दिखाई नहीं पड़ता कहां, उसने कहा वह सामने वाले मकान में देखिए। आधा मील दूर एक मकान था, वहां तो कुछ दिखाई नहीं पड़ता था। उस मैनेजर ने कहा, हमें कुछ दिखाई नहीं पड़ता। वहां से ही उसने टेबल पर से दूरबीन उठाई और कहां दूरबीन से देखिए, वह आदमी छत पर बिल्कुल उघाड़ा खड़ा हुआ है। मैनेजर हैरान हुआ कि कैसी पागल औरत है, उसने नीचे खबर की कि एक आदमी मेरे साथ बहुत दुर्व्यवहार कर रहा है। यह जोस्त्री है इसने मन में सैक्स की भावनाओं को निरंतर दबाया होगा तो अब यह दूरबीन लगा-लगाकर देख रही है कि कौन-कौन इसके साथ दुर्व्यवहार कर रहा है, कौन-कौन इसके संयम को तोड़ने की कोशिश कर रहा है। कौन-कौन इसे नरक के रास्ते पर ले जाने के लिए चेष्टा कर रहा है।। दूर मकान पर कोई आदमी व्यायाम कर रहा था अपनी छत पर, वह आदमी उघाड़ा होकर हाथ-पैर हिला रहा है, इसको देखकर ही अपनी दूरबीन से देखकर समझ रही है।

यह दमित चित्त है, यह कोई ब्रह्मचर्य को उपलब्ध चित्त नहीं है। और ऐसे दमित चित्त बड़े खतरनाक है और ऐसे दमित चित्त ही सैक्स के संबंध में जो निंदा का प्रचार करते हैं, वही आमजन पकड़ लेते हैं और दोहराते हैं। और यही चिल्लाते रहते हैं फलां नरक है, ढिकां नरक है, यह बात बुरी है, वह बुरी है, इनको भारी चिंता लगी रहती है, भारी चिंता और इनकी चिंता बड़ी आश्चर्यजनक है, इनको तो चिंता होनी नहीं चाहिए। अभी दिल्ली में हिंदस्ुतान के बहुत से बड़े साधु इकट्ठे हुए और उन्होंने कहा कि अश्लील पास्ेटर नहीं लगने चाहिए, अश्लील पोस्टर दीवालों पर नहीं होने चाहिए, अश्लील फिल्में नहीं होनी चाहिए, अश्लील उपन्यास नहीं होने चाहिए। मैंने उनसे पूछा, कि आप इनको पड़ते कैसे हैं, इन पास्ेटरों को देखते कैसे हैं। साधु हो कि आपको इनसे प्रयोजन कहां है, यह आपको दिखाई कैसे पड़ जाते हैं। और आपको इनकी इतनी चिंताएं क्यों हैं? जरूर इनको आपसे ज्यादा दिखाई पड़ते होंगे, जब एक साधु सड़क से निकलता होगा, तो जो फिल्म का पास्ेटर लगा है, शायद आपने न भी देखा हो, उसको जरूर दिखाई पड़ता है, वह दूरबीन लगाकर देखता है। देखना बिल्कुल स्वाभाविक है, उसमें चित्त में जिन-जिन वृत्तियों को दबाकर रखा है, वह भी उखड़-उखड़कर उसके सामने आ जाती है। आपने सुना होगा साधु-संन्यासी जब बड़ी तपश्चर्या करते हैं तो स्वर्ग की अप्सराएं आकर उनको डिगाती है, आप पागल हो गए हो कि स्वर्ग की अप्सराओं ने कोई धंधा खोल रखा है कि इनको डिगाने आएंगी। और यह क्या पागलपन है? नहीं कोई अप्सराएं नहीं आती, इनके चित्त में ही दमित जो वासनाएं हैं। जब चित्त शिथिल होता है और मन कमजोर होता है, वे ही वासनाएं अप्सराएं बनकर खड़ी हो जाती है। कोई वहां है नहीं, अगर आप जाओगे तो आपको कोई अप्सरा न दिखाई पड़ेगी। लेकिन वे मरे जा रहे हैं आंख दबा-दबाकर डरे जा रहे हैं, अप्सराएं नाच रही है उनके आस-पास, ये अप्सराएं रुग्ण चित्त से पैदा हुई कल्पनाएं हैं, ये कहीं कोई स्वर्ग-वर्ग से आती नहीं है, ये तो स्वर्ग में किसने धंधा खोल रखा होगा ये सब काम को करने का, और किसको प्रयोजन है कि इनको डिगाए, इनकी तपश्चर्या से कौन परेशान है, लेकिन कथाएं यह कहती हैं कि इंद्र का आसन डावांडोल हो जाता है इनकी तपश्चर्या से। तो वो अपनी अप्सराएं भेजते हैं, इनको बिगाड़ने के लिए, बर्बाद करने के लिए। यह बिल्कुल ही पागल चित्त से पैदा हुई आकृतियां हैं। यह आकृतियां कहीं हैं नहीं, लेकिन इन्होंने जो-जो दबाया है, वह इनके सामने रूप लेकर खड़ा हो जाता है, अति दमित स्थिति में चीजें रूप लेकर खड़ी होने लगती हैं।

यह हजारों साल से चलता रहा हैं और हमें इसका कोई ख्याल नहीं किया कि यह बात क्या है? नहीं तो जो व्यक्ति शांति से, प्रेम से और आनंद से भर गया है, जिसके चित्त में काम की वासना परिवर्तित रूपांतरित होकर प्रेम की अभिव्यक्ति बन गई है, उसे न तो कोई अप्सराएं आने का सवाल है, न उसके सपनों में स्त्रियों के

खड़े होने का सवाल है, न अगर वह स्त्री हो तो दूर छतों पर से दूरबीन देखने की कोई जरूरत है कि वहां कोई पुरुष दुर्व्यवहार कर रहा है। चित्त जैसे-जैसे शांत होता चला जाएगा यह सारी विकृतियां विलीन हो जाएंगी। एक बात जैसे ही प्रेम गहरा होगा, वैसे ही सैक्स विलीन हो जाएगा। जितना गहरा हृदय में प्रेम होगा, उतना ही सैक्स विलीन हो जाएगा और जितना हृदय में गहरा प्रेम होगा, जीवन उतने ही ओज से भर जाएगा, प्रेम के अतिरिक्त और कोई ओज नहीं है, प्रेम के अतिरिक्त और कोई तेजस्विता नहीं है, प्रेम के अतिरिक्त और कोई सौंदर्य नहीं है, प्रेम के अतिरिक्त और कुछ भी परमात्मा का नहीं है, लेकिन यह जो तथाकथित ब्रह्मचारी और यह वीर्य के संरक्षण करने वाले और यह सब जो बातें हैं, यह सारे के सारे लोग प्रेम से बहुत भयभीत है। ये प्रेम से बहुत डरे हुए हैं और जहां भय है, वहां ओज क्या होगा? जहां भय है, वहां ओज कैसे होगा? ओज तो वहां होता है, जहां फियरलेसनेस, जहां अभय, इनकी स्थिति तो बड़ी कमजोर है और ये जिन चीजों से लड़ रहे हैं, जिन चीजों को दबा रहे हैं, वही चीजें इनके जीवन का संघर्ष बन गई है, वही इनके जीवन के प्राणों को सोखे जा रहे हैं।

और मैं सैकड़ों साधुओं को जानता हूं, जब वो मुझसे सबके सामने मिलते हैं तो आत्मा-परमात्मा की बातें पूछते हैं, कि आत्मा है या नहीं, परमात्मा है या नहीं। ईश्वर ने दुनिया बनाई या नहीं, लेकिन जब वे मुझे अकेले में, एकांत में मिलते हैं तो सिवाय सैक्स के और कोई दूसरी बात नहीं पूछते। जब वो सबके सामने बातें पूछते हैं तो आत्मा-परमात्मा की, जब अकेले में पूछते हैं तो कहते हैं कि सैक्स के साथ क्या किया जाए, यह तो हमारे प्राण खाए जा रहा हैं, यह तो निरंतर हमको सताए हुए हैं। यह स्वाभाविक है, इसमें कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है, यह बिल्कुल वाभाविक है, यह होगा, यह होना निश्चित है। जीवन सरलता से विकसित होता है, दमन से, सप्रेशन से नहीं। जिस चीज को भी हम दबा लेते हैं, वही चीज घातक रोगाणुओं की तरह भीतर इकट्ठी होने लगती हैं, आज नहीं कल उसका विफोट होगा और चित्त दिक्कत में पड़ जाएगा।

एक छोटी सी कहानी निरंतर कहता रहा हूं, वह मैं आपसे कहूं। फिर उसके बाद मैं दूसरा प्रश्न लूं। कोरिया की कहानी है। दो भिक्षु एक नदी को पार कर रहे हैं पहाड़ी नदी को। एक युवती नदी के किनारे खड़ी है, उसे भी नदी पार होना है। लेकिन युवती अकेली है, पहाड़ी नदी है, अपरिचित और बिना सहारे के उसकी हिम्मत नहीं पड़ रही कि वह पार हो जाए। वृद्ध भिक्षु आगे-आगे आया है, उसके मन में हुआ कि मैं इसे हाथ का सहारा दे दूं और नदी पार करा दूं। उसने कोई तीस वर्ष से किसी स्त्री का स्पर्श नहीं किया है, अपने को दूर-दूर रखा है, दीवालें खड़ी कर रखी हैं, निरंतर दूर भागता रहा है। उसके मन में ख्याल आया हाथ का सहारा भी दूं, कोई सत्तर वर्ष की उसकी उम्र हैं। लेकिन यह ख्याल ही मन में आते से कि हाथ का सहारा दे दूं और कल्पना में ही हाथ का हाथ से स्पर्श होते ही उसके मन में तो तीस साल से सोई हुई वासना जाग पड़ी, जिसको मंत्रों से दबाया हुआ था, जप करके दबाया हुआ था, वह मौजूद है, वह जा नहीं सकती कहीं, वह जाग उठी, उसे एक तरह का रस मालूम हुआ तभी वह घबड़ा भी गया, उसे याद आया अपने संयम, अपने वैराग्य का कि मैं यह क्या कर रहा हूं तीस साल की तपश्चर्या, जरा सा हाथ छूकर नष्ट हो जाएगी। और ऐसी तपश्चर्या का मूल्य भी कितना है जो एक स्त्री के हाथ छूने से नष्ट हो जाए और ऐसी तपश्चर्या कहीं मोक्ष ले जाएगी। कैसे पागलपन का मन है लेकिन उसने सोचा, कि यह तो बड़ा सब गड़बड़ हो जाएगा उसने आंखें बंद की, वह नदी पार होने लगा, उस युवती को तो पता भी नहीं है कि साधु बेचारा स्वर्ग से नरक तक पहुंच गया है इतनी जल्दी, मोक्ष छिना जा रहा है आवागमन का मार्ग फिर से खोला जा रहा है। उसे पता भी नहीं वह अपने किनारे खड़ी है यह तो इन्होंने अपने मन में ही सब हिसाब-किताब लगाया है, वह आंख बंद किए नदी पार करने लगा, लेकिन आंख बंद करने से कुछ

होता है। आंख बंद करने से स्त्री और भी सुंदर हो जाती है, खुली आंख से देखने पर स्त्री में क्या सौंदर्य है या पुरुष में क्या सौंदर्य है। और आंख अगर और भी गहरी हो, तो सिवाय हड्डियों-मांस के क्या रह जाएगा और अगर आंख और भी एक्स रे वाली हो, तब तो बहुत घबराहट हो जाएगी। लेकिन आंख अगर बंद हो, तो फिर बहुत सुंदर हो जाता है, सब बहुत सुंदर हो जाता है, बंद आंख में सब सपने हो जाते हैं, जोस्त्री कभी इतनी सुंदर नहीं, बंद आंख में बहुत अलौकिक रूप सी होकर प्रकट होने लगती है, अप्सरा बन जाती है सामान्य स्त्री आंख बंद करने से। तो मैं कहता हूं आंख खोलो और स्त्री को ठीक से देख लें तो मुक्त हो सकते हैं, आंख बंद किया तब तोस्त्री से छुटकारा मुश्किल है या स्त्री के लिए कहूं तो पुरुष से छुटकारा मुश्किल है। वह आंख बंद करके खड़ी स्त्री और भी सुंदर होकर प्रकट होने लगी। एक साधारण सी गांव की लड़की थी, जो वहां खड़ी थी। उसका मन बार-बार डोलने लगा कि पीछे जाऊं सहारा दे ही क्यों न दूं, इसमें क्या बिगड़ने वाला है और यहां कोई देखने वाला भी तो नहीं। कोई गुरु को भी खबर करने वाला नहीं है, कोई खास बात भी नहीं, लेकिन फिर मन में दोहरा द्वंद खड़ा हो गया कि तीस साल की तपश्चर्या है, जरा सी बात में खत्म कर रहा हूं, अरे यह असहाय संसार है इसकी बातों में पड़ना नहीं चाहिए, यह तो सब, यही तो नरक का द्वार है, सोचा होगा इसी में तो चक्कर हो जाएगा, वह किसी तरह नदी पार हुआ। उस पार पहुंचा बहुत थका-मांदा था क्योंकि जो चित्त इतनी कानिलक्ट में पड़ जाए, इतनी दुविधा में द्वंद, वह थक ही जाता है। तभी उसे ख्याल आया कि उसके पीछे ही पीछे थोड़ी दूर पर उसका युवक साथी भी आ रहा है एक दूसरा भिक्षु, वह अभी अंजान है, अनुभवी भी नहीं है, कहीं वह भी इसी दया के झंझट में न पड़ जाए, जिसमें मैं पड़ा। कहीं उसे भी दया न आ जाए इस युवती पर उसे नदी पार करने का ख्याल न सोचने लगे, उसने पीछे लौटकर देखा। देखकर हैरान हो गया, वह युवक भिक्षु उस लड़की को कंधे पर लिए उतर रहा है। उसके प्राणों में तो आग लग गई। आग के कई कारण थे- एक तो कारण था कि वह खुद वंचित रह गया उस लड़की को कंधे पर लेने से, बुनियादी तो यही था। दूसरा उपदेश देने से वंचित रह गया। तीसरा चित्त में बहुत क्रोध आया, कि मुझसे बिना आज्ञा लिए मेरी मौजूदगी में और यह युवक क्या कह रहा है। सभी बूढ़ों को आता है, युवक को कुछ न करने देंगे बिना आज्ञा लिए। और सभी वृद्धजनों को एक ईर्श्या पकड़नी शुरू होती है युवकों से, क्योंकि युवक जो कर रहे हैं उसमें से वे बहुत कुछ वे नहीं कर पाए। और न कुछ करने की स्थिति में हो गए, बहुत कठिनाई हो गई उसे, अब कोई विकल्प भी न रहा, लेकिन उसने सोचा, आज जाकर गुरु से कहूंगा और इसको या तो निकालकर बाहर करवाऊंगा आश्रम से यह तो हद पाप की बात हो गई। इतनी देर से खुद उसी पाप को करने का विचार करता था, वह भूल गया। तो हद पाप की बात हो गई, गुसे में आगे-आगे चला, पीछे-पीछे वह युवक भी आया। दोनों द्वार पर मिलें।

उस बूढ़े आदमी ने कहा कि सुनते हो, यह बर्दाश्त के बाहर है। बात छिपाई नहीं जा सकती, मुझे गुरु से कहना ही होगा, नियम उल्लंघन हुआ है। भिक्षु जीवन का नियम खंडन हुआ है। तुमने उस लड़की को कंधे पर क्यों उठाया? उस युवक ने कहा, मैं बहुत आश्चर्य में हूं। मैं तो उस लड़की को कोई दो मील पीछे कंधे से उतार भी आया। आप उसे अब भी कंधे पर लिए हुए हैं। उस युवक ने कहा, मैं उसे कंधे से उतार भी आया, आप उसे अब भी कंधे पर लिए हुए हैं। और कंधे से केवल वही उतार सकता है, जिसने कभी लिया ही न हो। स्मरण रखें, कंधे से केवल वही उतार सकता है, जिसने कभी कंधे पर लिया ही न हो। और केवल इतने से कि हमने कंधे पर नहीं लिया है, इस भ्रम में कोई न रहे कि वह कंधे पर नहीं है। जैसे-जैसे चित्त दमन करता है, वैसे-वैसे चीजें सिर पर चढ़ती चली जाती हैं। चीजों को सहजता से ले, चीजों को सहजता से जानें, चीजों के प्रति अत्यंत स्वाभाविक रूप से जागरूक हो तो कोई कारण नहीं है कि जीवन धीरे-धीरे सभी बंधनों से मुक्त हो जाए और एक परम

मुक्ति की अवस्था चेतना को उपलब्ध हो सके, लेकिन जिन लोगों ने दमन किया है वे कभी मुक्त नहीं हो सकते। दमन ही उनका बंधन बन जाता है।

तो मैं तो आपसे कहूंगा, निवेदन करूंगा। जीवन को बहुत सहजता से ले, उसके निसर्ग को बहुत सहजता से स्वीकार करें। और जीवन को देखें आंख खोलकर आंख बंद करके कभी कोई देख नहीं सकता। पूरी आंख खोलकर देखें, और जो चीज जितनी आकर्षक मालूम होती है, उतने निकटता से उसका निरीक्षण करे, आप पाएंगे आकर्षण विलीन हो गया। अगर स्त्रियां आकर्षक मालूम होती हैं पुरुषों को तो स्त्रियों से भागे न। अगर स्त्रियों को पुरुष आकर्षक मालूम होते हैं तो पुरुषों से भागे न। भागने से तो आकर्षण सदा के लिए थाई हो जाएगा। आकर्षण भीतर एक फोड़े की तरह बैठ जाएगा। मैं देखता हूं कि जिन चीजों को हम उनकी पूरी नग्नता में और पूरी सत्यता में जान लेते हैं उनसे हम मुक्त हो जाते हैं। तो जिस जीवन के बंधन से सच में ही मुक्त होना हो, उस बंधन को उसकी पूरी सच्चाई में और सहजता में देखें और जानें और मन में कोई दुविधा और द्वेष और द्वंद खड़ा न करें। जरूर जीवन के अनुभव से निरीक्षण, बोध से, अमूर्च्छित होकर देखने और समझने से, एक वक्त आपके जीवन में आएगा जिसमें स्त्री और पुरुष के बंधन और फासले टूट जाएंगे और विलीन हो जाएंगे और उस आत्मा का दर्शन होगा, जो न स्त्री है और न पुरुष है। देह से दृष्टि उठ जा सकती, देह से दृष्टि उठ सकती है, लेकिन जितना दबाएंगे, उतना देह से दृष्टि बंध जाएगी। जितना रोकेंगे, उतना बंधेंगे; जितना भागेंगे, उतना भयभीत होंगे; जितने भयभीत होंगे, उतनी ही छायाएं पीछा करेंगी, जो कि अगर रुक जाए तो पीछा नहीं करती, ठहर जाए, वे भी आपके पीछे दौड़ना बंद कर देती हैं। खुली आंख से देखें तो पता चलता है, शैडोज, छायाएं है उनमें कोई भी प्राण जैसा तत्व नहीं। न भय का कोई कारण, न भागने का कोई कारण है। जो पलायन करता है, वह बंधता चला जाता है, जो चित्त का परिवर्तन करता है, वह मुक्त हो जाता है। इस पर सोचें, अन्यथा जो हो रहा है, अनेक-अनेक लोगों के जीवन में जो दुख है वह आपके जीवन में भी होगा और जो नरक वह पैदा कर रहे हैं, अपनी गलत दृष्टियों से वे आप भी पैदा कर लेंगे। नरक कहीं है नहीं, हर आदमी अपना पैदा करता है।

एक फकीर हुआ, उसका एक शिष्य बहुत बार उसके पीछे पड़ गया कि आप नरक स्वर्ग की बहुत बातें करते हैं। कभी मुझे भी तो दिखलाए। वह फकीर टालता रहा, लेकिन जब नहीं माना युवक तो उसने कहा आज तुम आ ही जाओ। आज अमावस की रात है, आज मैं तुम्हें दिखला ही दूं। वह युवक आया, उसे एक कोठरी में उसने बंद किया और कहा कि आंख बंद कर लो। मैं बाहर बैठा रहूंगा और कहूंगा कि जाओ नरक पहुंच जाओ। तो नरक में पहुंच जाओगे, गौर से देख लेना वहां क्या दिखाई पड़ता है। फिर मैं तुम्हें मैं वापिस लौट आऊंगा और कहूंगा वापिस लौट आओ फिर आज्ञा दूंगा, स्वर्ग में चले जाओ। तुम स्वर्ग पहुंच जाओगे, स्वर्ग को भी देख लेना। उसने युवक को बिठाया, और कहा कि देखो आंख बंद कर लो अंधेरे में। उसने आंख बंद कर लीं। उसने कहा जाओ नरक में पहुंच जाओ। फिर उसने कहा वापिस लौट आओ और कहा स्वर्ग में पहुंच जाओ। फिर थोड़ी देर बाद उसने कहा वापिस लौट आओ, मुझे बताओ क्या देखा। उसने कहा मैं तो बड़ा मुश्किल हो गया, न तो नरक में मुझे कुछ दिखाई पड़ा और न स्वर्ग में मुझे कुछ दिखाई पड़ा। और आप तो कहते थे कि नरक में आग की लपटें जल रही है। और वर्ग में कल्पवृक्ष खड़े हैं जिनके नीचे सब कामनाएं पूरी हो रही हैं। वह तो मुझे कुछ भी नहीं दिखाई पड़ा, तो वह फकीर हंसने लगा। उसने कहा, वह तो तब दिखाई पड़ेगा जो तुम अपने साथ ले जाओगे, वही दिखाई पड़ेगा। अगर तुम नरक अपने साथ ले जाओगे तो तुम्हें नरक दिखाई पड़ेगा, अपने साथ स्वर्ग ले जाओगे तो स्वर्ग दिखाई पड़ेगा। अभी तो तुम कोरे कागज हो, अभी तुम्हारे पास में नरक है न स्वर्ग तो

दिखाई क्या पड़ेगा? उस फकीर ने कहा, कि वह तो तुम्हें अपने साथ ले जाना पड़ेगा, जो वहां देखना है उसे। अगर नरक की कढाइयां देखनी है जलती हुई आग की तो अपने साथ ले जानी पड़ेगी, तो अगर स्वर्ग के फूल और सुगंध देखनी है तो वह भी अपने साथ ले जानी पड़ेगी। स्वर्ग और नरक मन की अवस्थाएं हैं और हम उन्हें निर्मित करते हैं। हम उनमें जाते नहीं, हम उन्हें बनाते हैं, वे हमारे साथ है, वे कहीं दूर नहीं र्ेहैं कोई जियोग्राफिकल, कोई भूगोल में कहीं नरक और स्वर्ग नहीं है। स्वर्ग है कहीं तो साइकोलॉजिकल है, मानसिक है, अंतःकरण में है। तो अगर आपको इस तरह के स्वर्ग नरक दिखाई पड़ते हो दुनिया में तो आप समझ लेना कि आप उनको बना रहे हैं। यही जमीन है, यही लोग है, यही सब कुछ है, यही चांद-तारे हैं, जो आदमी ठीक से देखने में समर्थ हो जाता है, उसे यहां स्वर्ग उपलब्ध हो जाता है, यहीं परमात्मा के दर्शन होने लगते हैं, यहीं वह मुक्त हो जाता है और जो आदमी गलत ढंग से देखने की आदत में ग्रसित हो जाता है, यही फूल, यही जमीन, यही चांद-तारे, यही लोग नरक हो जाते हैं, यहीं वह गहरे बंधन पड़ जाता है।

और बहुत से प्रश्न है, उनकी मैं बाद में बात करूं। कल बात कर लूंगा, अभी तो रात्रि के ध्यान के लिए बैठना पड़ेगा। यहां मैंने जानकर उधर से तकलीफ दी और यहां बुलाया कुछ कारणों से। एक तो इस कारण से कि वहां आस-पास प्रकृति की कोई ध्वनि नहीं है, जहां हम बैठते थे। यहां बहुत ध्वनियां है, यहां बहुत छोटे-छोटे आवाजें गूंज रही है। तो ध्यान के लिए वहां बहुत कम आवाजें थी, जब मन शांत होने लगे तब तो वहां भी बहुत सी धीमी ध्वनियां सुनाई पड़ सकती है। लेकिन जब तक न हो, तब तक यहां बहुत बड़ा म्यूजिक, बहुत बड़ा संगीत चारों तरफ है। यह संगीत बहुत गहरे में ले जाएगा, फिर वहां हम एक पंडाल के नीचे बैठते थे, जो आदमियों के द्वारा ठोका और खींचा गया है और आदमियों ने सब तरह के पंडाल खींचे हैं, शास्त्रों के, धर्मों के और उनके नीचे हम बैठे हैं। उससे ही मुझे जरा घबराहट हो रही थी, यहां हम परमात्मा के पंडाल के नीचे बैठेंगे, यहां आदमी का खींचा हुआ कुछ भी नहीं है, ऊपर दरख्त है और ऊपर आकाश है, और ऊपर चांद है और बड़ी दुनिया है और विराट पंडाल है उसके निकट हम होंगे। जब उन छोटी-छोटी दीवालों में बंद होते हैं तो मन भी सिकुड़ जाता है और छोटा हो जाता है, जितने विस्तार पर हम होंगे उतना मन विस्तीर्ण होता है और यात्रा करता है। अगर कोई व्यक्ति रोज थोड़ी देर आंख खोलकर आकाश को ही देखता रहे तो उसकी आत्मा बड़ी होने लगेगी। लेकिन हम तो आदमियों के छोटे-छोटे छप्परों को देखते हैं और उन्हीं में जीते हैं।

लंदन में पीछे एक सर्वे हुआ, और वहां के बच्चों से पूछा गया तो पता चला पंद्रह लाख बच्चे ऐसे हैं लंदन में जिन्होंने खेत नहीं देखा। दस लाख ऐसे बच्चे हैं जिन्होंने गाय नहीं देखी। इन बच्चों के जीवन में क्या होगा, इनके बच्चों का जीवन तो विकृत हो जाएगा, जिन्होंने गाय नहीं देखी हो, जिन्होंने खेत नहीं देखे। जिन बच्चों ने सिर्फ मकान देखे हैं, सड़कें देखी हैं, भागती हुई मोटरें और धुआं देखा और ट्रेनें देखी। यही सब देखा तो इनका चित्त मनुष्य के निर्मित जो दुनिया है उससे ऊपर नहीं उठ सकता, इसलिए मैंने चाहा कि वहां से हम यहां आए, यहां ऊपर दरख्त हैं, चांदनी है और बहुत अद्भुत दुनिया हैं और फिर यह चारों तरफ प्राण की गूंजती हुई आवाज हैं, तो यहां ध्यान में जाना बहुत बहुत सरलता से, बहुत अद्भुत रूप से हो सकेगा, हम जिनके करीब रहते हैं वैसे ही हो जाते हैं। अगर आप फूलों के करीब बहुत दिन रहे तो फूलों की गंध आपमें प्रविष्ट हो जाएगी, अगर आप दरख्तों के पास बहुत दिन रहे तो आपका यह चित्त भी उन्हीं जैसा मौन होने लगेगा। अगर आप सागर के किनारे बैठे तो वैसे ही विस्तार तरंगें आपके हृदय को भी छुएंगी, अगर आप झरनों के पास बैठे हैं तोझरने आपमें प्रविष्ट हो जाएंगे। हम जिन चीजों के करीब रहते हैं निरंतर वे चीजें हममें प्रविष्ट होने लगती हैं। लेकिन हम निरंतर मनुष्यों के निकट रहते हैं और मनुष्य जो सोचते हैं उसे ही सुनते हैं। मनुष्य जो विचार करते हैं उसी को

जानते हैं और मनुष्य क्या विचार करते हैं, वे या तो सुबह से अखबार पढ़ते हैं और चुनावों की बातें करते हैं या हड़तालों की बातें करते हैं या अनशनों की बातें करते हैं या कहां दंगा-फसाद हो गया हो उसकी बात करते हैं या कहां हिंदू धर्म खतरे में हैं या कहां मुसलमान धर्म खतरे में हैं उसकी बातें करते हैं या ताश खेलते हैं या शराब पीते हैं या जुआ खेलते हैं या विवाद करते हैं, इस तरह के कुछ काम हैं। मनुष्य के पास जितने ज्यादा हम रहते हैं, उतने ही हम छोटे होते चले जाते हैं, लेकिन हमें अपना छोटा होना पता नहीं चलता क्योंकि हमारे चारों तरफ भी उसी तरह के छोटे लोग रहते हैं और हमें यह तृप्ति रहती हैं कि और लोग भी तो ऐसे ही है। यह जो हमारे मनुष्य को छोड़कर चारों तरफ फैला हुआ विराट विश्व है, इस विराट विश्व ने अभी भी परमात्मा से न संबंध नहीं छोड़ा है। यह पौधे अब भी परमात्मा के हमसे ज्यादा निकट है, यह चांद तारे अब भी ज्यादा निकट है, यह छोटे-छोटे कीड़ों की झंकार अब भी हमसे ज्यादा निकट है, अब भी यह पहाड़ियों की साइलेंस और सन्नाटा हमसे ज्यादा निकट है परमात्मा के, मनुष्य सर्वाधिक अपने ही द्वारा निर्मित कोलाहल में बंद हो गया। मनुष्य को हटा दे जमीन से, अब भी साइलेंस है। अब भी अद्‌भुत सन्नाटा है, अद्‌भुत संगीत है इसलिए मैंने चाहा कि इधर हम होंगे और थोड़ी देर शांति में और सन्नाटे में बैठेंगे। ध्यान के लिए तो मैंने आपको कहा बहुत सरल सी बात है। अभी हम सब लोग थोड़े-थोड़े एक दूसरे से दूर बैठे। इस रात का पूरा उपयोग करें कुछ हो सकता है भीतर कुछ पैदा हो सकता है। थोड़ा-थोड़ा दूर बैठे, न तो सर्दी की फिक्र करें और न किसी और चीज की। थोड़े फासलों पर बैठ जाए और इस रात का जो भी फायदा मन को मिल सकता है उसे मिलने दे। देखे एक दूसरे को न छुए। आदमी आदमी से थोड़ा बचे, न आदमी बड़ा खतरनाक प्राणी है, थोड़ा सा मोह छोड़े उसके फासले का। अगर थोड़ा सा हट जाएं। देखें थोड़ा हटें यहां तो काफी भीड़भाड़ किए बैठे हैं। इतने भी नहीं हटेंगे तो मैं इतनी जो बातें कर रहा हूं उसमें कहां हटेंगे, मुश्किल है। थोड़ा जमीन ही नहीं छोड़ते।

पांचवां प्रवचन

चित्त मुक्त हो, इस संबंध में कल सुबह हमने बात की। वह पहला चरण हैः स्वयं का विवेक जग सके, इस दिशा में। दूसरे चरण मेंः स्वयं का विवेक कैसे जागृत हो, किन विधियों, किन मार्गों से, भीतर सोई हुई विवेक शक्ति जाग जाए, इस संबंध में हम आज बात करेंगे। इसके पहले कि हम इस संबंध में विचार करना शुरू करें, एक अत्यंत प्राथमिक बात समझ लेनी जरूरी है और वह यह कि मनुष्य के भीतर केवल वे ही शक्तियां जागृत होती और सक्रिय, जिन शक्तियों के लिए जीवन में चुनौती खड़ी हो जाती है, चैलेंज खड़ा हो जाता है। वे शक्तियां सोई हुई ही रह जाती है, जिनके लिए जीवन में चुनौती नहीं होती। यदि किसी व्यक्ति को वर्षों तक आंखों का उपयोग न करना पड़ें, तो आंखों की जागी हुई शक्ति भी सो जाएगी। अगर किसी व्यक्ति को वर्षों तक पैरों से न चलना पड़ें, तो पैर भी पंगु हो जाएंगे। जीवन उन शक्तियों का निरोध कर देता है, जिन शक्तियों के लिए हम सक्रिय रूप से उपयोग नहीं करते। ठीक इसके विपरीत, जीवन उन शक्तियों को पैदा भी कर देता है, जिनके लिए चुनौती उपस्थित हो जाती है।

विज्ञान भी इस दिशा में जिन खोजों को कर पाया है, वे भी इसकी समर्थक हैं। पशुओं में, प्राणियों में, पक्षियों में या मनुष्यों में केवल वे ही शक्तियां जाग गई है, और सक्रिय हो गई हैं, जिनके लिए जीवन ने चुनौती खड़ी कर दी। जहां चुनौतियों का अभाव है, जहां प्रेरणाएं नहीं है, वहां शक्तियों के जागने का कोई कारण नहीं रह जाता। घने जंगल में दरख्त ऊंचे उठ जाते हैं, अफ्रीका के जंगलों में दरख्त आकाश को छूने की तरफ बढ़ने लगते हैं। घने जंगल में श्वास लेने की सुविधा दरख्तों को नीचे होने पर नहीं मिल सकती, उनके सामने बड़ा प्रश्न खड़ा हो जाता होगा, उनके प्राण संकट में पड़ जाते होंगे, तो वे निरंतर ऊपर उठने की कोशिश करते हैं, ताकि हवा और रोशनी उन्हें मिल सकें, लेकिन जहां घने जंगल नहीं होते, वहां दरख्त छोटे रह जाते हैं, वहां दरख्त बड़े नहीं होते। मरुस्थलों में, ऊंटों ने अपनी गर्दनें लंबी कर ली हैं। इसके सिवाय जीना असंभव था, जितना भयंकर मरुथल हो, और जिस मरुस्थल में निचाईयों पर पत्तियों को पाना असंभव हों, वहां के ऊंट उतनी ही लंबी गर्दन करने में समर्थ हो गए हैं। जिराफ होता है, उसने भी अपनी गर्दन बहुत लंबी कर ली हैं, क्योंकि जिन जंगलों में वह होता है, वहां दरख्त बहुत ऊंचे हैं।

प्राणी विज्ञान इस बात को कहेगा, कि हम केवल उन्हीं शक्तियों को विकसित कर पाते हैं, जिन्हें बिना विकसित किए जीवन संकट में पड़ जाए। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि मनुष्य के मस्तिश्क में बहुत से हिस्से निष्क्रिय पड़े हुए हैं। मस्तिश्क का बहुत छोटा सा हिस्सा काम कर रहा है, बाकि हिस्से सब बंद पड़े हुए हैं। शायद उनकी जरूरत नहीं पड़ी, शायद उनके लिए चुनौती खड़ी नहीं हुई। शायद उनके लिए जीवन ने अभी मौका नहीं दिया कि वे जागे और सक्रिय हो जाए। यह मैं इसलिए कह रहा हूं प्राथमिक रूप से कि विवेक की शक्ति भी प्रत्येक मनुष्य के भीतर उपस्थित है, लेकिन यदि हम विवेक की शक्ति के लिए चुनौती उपस्थित नहीं करेंगे, तो वह सोई रह जाएगी, वह जागेगी नहीं। श्रद्धा रोक देती है, विश्वास रोक देता है, क्योंकि विश्वास कर लेने पर विवेक को जागने का कोई कारण ही नहीं रह जाता। इसलिए श्रद्धा विवेक की शक्ति के जागरण में बाधा है, तो ठीक श्रद्धा के विपरीत जो चित्त की दशा होती है वह सहयोगी होगी, संदेह, डाऊट, विवेक को जगाने में सहयोगी होता है। धन्य होता है वे लोग जिनके जीवन सम्यक संदेह का जन्म हो जाता है। क्यों? क्योंकि सम्यक संदेह के तीव्र दबाव में, प्रेशर में, संदेह की चित्त दशा में विवेक सोया हुआ नहीं रह सकता, उसे

जागना ही पड़ेगा। क्योंकि संदेह बाहर तो किसी बात पर विश्वास करने को राजी नहीं होता है और जब बाहर किसी बात पर विश्वास करने को हम राजी नहीं होते, तो एक ही मार्ग रह जाता हैं, राजी होने का, संतुष्ट होने का, कि उत्तर भीतर से आए। अगर बाहर के सब उत्तर व्यर्थ दिखाई पड़ने लगे, बाहर के सारे शास्त्र निरर्थक दिखाई पड़ने लगे, बाहर कोई भी शरण न मालूम पड़े और बाहर श्रद्धा को कोई आधार न रह जाए, तो उस निराधार चित्त की दशा में, जब बाहर के सब सहारे खो गए हो, और बाहर विश्वास के लिए कोई कारण न रह गया हो, प्राणों में सोई हुई वह ऊर्जा जगती हैं, जो भीतर से उत्तर देना शुरू करती है। उसके पहले भीतर से उत्तर नहीं आते। उसके पहले भीतर से उत्तर आने का कोई कारण भी नहीं है, भीतर से उत्तर तभी आ सकते हैं, जब बाहर के सब उत्तर व्यर्थ हो गए हो। जब तक हम विश्वास से जकड़े हुए हैं, तब तक भीतर से उत्तर उठने का कोई कारण नहीं रह जाता। वे ही थोड़े से लोग स्वयं के विवेक को जगा पाते हैं, जो क्रमशः बाहर के सब भांति के उत्तरों से, बाहर के समाधानों से अपने चित्त को मुक्त कर लेते हैं, उस स्थिति में गहरे और तीव्र संदेह की स्थिति में भीतर का विवेक जगता है। जैसे कोई आपके पीछे, बंदूक लेकर दौड़ता हो, तो आपके दौड़ने की अंतिम शक्ति जाग जाएगी। आप अपनी पूरी शक्ति से भागेंगे।

एक बार ऐसा हुआ, जापान में एक राजा अपने एक नौकर को बहुत-बहुत प्रेम करता था। वह नौकर इस योग्य था भी, युद्धों में उस नौकर को वह अपने साथ ले गया, अपने महलों में उसे उसने अपने साथ रखा, अपनी यात्राओं में उसे साथी समझा। उसने कभी उससे नौकर जैसा व्यवहार भी नहीं किया, प्रेम किया मित्र जैसा। वह युवा नौकर सुंदर भी था, स्वस्थ भी था, बुद्धिमान भी था। उस राजा की पत्नी उस पर मोहित हो गई, राजा को यह पता चला। उसके चित्त को बहुत वेदना हुई, सीधी बात थी, कि वह तलवार उठाता और नौकर की गर्दन काट कर अलग कर देता। इसमें कोई बाधा न थी, लेकिन उस नौकर को उसने बहुत प्रेम किया था और मित्र जैसा प्रेम किया था, तो उसने उसे अंतिम रूप से भी मित्र के अनुसार एक मौका देने की इच्छा प्रकट की। उसने उस नौकर को बुलाया और कहा, मित्र! चाहूं तो मैं तुम्हारी गर्दन काट दूं, लेकिन तुम्हें मैंने इतना प्रेम किया, इसलिए एक मौका दूंगा। यह तलवार अपने हाथ में लो और एक तलवार मैं अपने हाथ में लेता हूं, और हम दोनों लड़े और जो मर जाए, वह समाप्त हो जाए। और जो शेष रह जाए, वह रानी भी उसकी हो जाए, यह राज्य भी उसका हो जाए। मित्र की हैसियत से यह मौका देना जरूरी है, उस नौकर ने कहा, यह तो बड़ी आप बात तो बहुत ऊंची कर रहे हैं, लेकिन इसमें कोई अर्थ नहीं है, क्योंकि मैंने कभी तलवार उठाई नहीं। मैं तलवार कैसे पकड़ी जाए, यह भी नहीं जानता हूं। तो नाममात्र को तो युद्ध होगा, मरूंगा मैं, झूठी बात होगी, प्रशंसा भी आपको मिलेगी और जान भी मेरी जाएगी। इससे बेहतर है आप ऐसे ही तलवार उठाकर मेरी गर्दन काट दे। इसमें कोई अर्थ ही नहीं है, मैं तो तलवार पकड़ना भी नहीं जानता, और आप वह जो राजा था, उस समय का कुशलतम तलवारबाज था, पूरे मुल्क में उसका मुकाबला नहीं था। उससे कोई मुकाबला करने की हिम्मत भी नहीं कर सकता था। उसकी कुशलता अप्रतीम थी, तो एक नौकर जिसने कभी तलवार न उठाई हो, वह उससे कैसे जीतेगा, कैसे लड़ेगा, लेकिन फिर भी राजा ने कहा, मेरे अंतःकरण को यही उचित मालूम होता है कि तुम्हें एक मौका दूं। आज्ञा थी, उस नौकर को तलवार लेकर खड़ा होना पड़ा। राजा बहुत बार तलवार की प्रतियोगिताओं में उतरा था और हमेशा सफल हुआ था, उसकी कल्पना में भी यह घटना नहीं थी, जो हुई।

उस दिन उस नौकर को पराजित करना मुश्किल हो गया, क्योंकि नौकर को मरने का तो कोई भय ही नहीं था, मरना तो निश्चित था। बचने का कोई उपाय नहीं था, तलवार चलानी उसे आती नहीं थी, लेकिन इतनी खतरे की स्थिति में, इतने डेंजर में, उसके प्राणों की सारी शक्ति जग गई। वह साधारण सा नौकर एकदम

असाधारण हो उठा। उसके हाथ में तलवार बड़ी खतरनाक सिद्ध होने लगी, वह बिल्कुल बेबूझ तलवार चला रहा था। उसे तलवारों के दांवपेंच का कोई पता नहीं था, वह बेबूझ तलवार चला रहा था। लेकिन बचने का कोई उपाय नहीं था, इसलिए प्राणों की सारी शक्ति इकट्ठी हो गई थी, राजा पीछे हटने लगा, हर वार राजा को पीछे धकेलने लगा, और राजा घबड़ाया जिंदगी में ऐसा मौका कभी नहीं आया था, बड़े से बड़े कुशल तलवार बाजों से वह लड़ा था, एक अकुशल आदमी से लड़ना। लेकिन अकुशल आदमी बढ़ा जा रहा था, राजा को प्राणों की रक्षा का सवाल खड़ा हो गया, और राजा चिल्लाया कि रुक जाओ! और उसने कहा कि मैं हार गया, मेरी कल्पना के बाहर थी यह बात, उसने अपने गुर से वह राजा राज्य छोड़कर चला गया। उस नौकर के हाथ में सारी संपत्ति और पत्नी को छोड़ गया। बाद में उसने एक फकीर से पूछा कि यह क्या घटना घटी, यह कैसे संभव हुआ?

उस फकीर ने कहा, यह तो होना निश्चित था, अगर तुम मुझसे पहले आते तो मैं तुमसे पहले ही कह देता। जब जीवन इतने खतरे में होता है, तो प्राणों की सारी की सारी संरक्षित शक्तियां सलंग्न हो जाती हैं। उस समय जीतना बहुत कठिन है, तुम्हारे लिए जीवन खतरे में नहीं था। तुम सुरक्षित थे अपनी कुशलता में, उस नौकर के लिए जीवन पूरी तरह खतरे में था, उसके पूरे प्राण दांव पर थे। उसकी पूरी शक्ति जग गई है, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। और जब पूरी शक्ति जागती है, तो एक साधारण सा मनुष्य अद्‌भुत रूप से असाधारण हो जाता है। विवेक के इस संबंध में भी यही सत्य है, विवेक तभी जागता है, जब संदेह पूरा खतरा उपस्थित कर दे। लेकिन जो लोग संदेह के खतरे से बचते हैं, उनका विवेक कभी नहीं जगेगा, विश्वास में एक तरह की सिक्युरिटी है, एक तरह की सुरक्षा है। हजारों साल से मां-बाप पीढ़ियां दर पीढ़ियां जिसे मानते रहे हैं, उसे हम भी मान लेते हैं इसमें एक सुरक्षा हैं, इतने लोग गलत तो नहीं रहे होंगे।

हजारों वर्ष से लाखों लोगों ने जिस बात को माना है, वह कोई भ्रांत तो नहीं रहे होंगे, वे कोई नासमझ तो नहीं रहे होंगे, तो हम सुरक्षित है, उन्होंने जब इतनी भीड़ इस बात को सच कहती हैं, तो हम भी उस भीड़ में खड़े हो जाते हैं। और भीड़ के प्रभाव में, भीड़ की संख्या में हम भी अपनी सुरक्षा पा लेते हैं। हम बेसहारा नहीं रह जाते, अकेले नहीं रह जाते, इतने लोग साथ हैं, इतने लोगों का साथ होना बल देता है, हिम्मत देता है, आसरा देता है, सहारा देता है। खतरा कम हो जाता है जीवन का, हम सुरक्षित हो जाते हैं। और जो सुरक्षित हो जाता है, उसके भीतर के विवेक के जागरण का कोई उपाय नहीं रह जाता। विवेक जागरण के लिए इनसिक्युरिटी चाहिए, खतरा चाहिए, चारों तरफ से ऐसी स्थिति चाहिए, जो चुनौती बन जाए, तो कुछ भीतर होता है, तो ही सोई हुई चीजें जागती है नहीं तो नहीं जागती है। लेकिन हम तो विश्वास के घेरे में खड़े होकर सब भांति सुरक्षित हो जाते हैं। और इसीलिए हम खोज करते हैं, इस बात की कि फलां किताब कितनी पुरानी है। दो हजार वर्ष पुरानी है तो कम सुरक्षा देती है, पांच हजार वर्ष पुरानी है तो ज्यादा सुरक्षा देती है, क्योंकि पांच हजार वर्ष से जिसे लोग मानते हैं, वह जरूर ही सच होगा। और अगर कोई यह भी सिद्ध कर दे कि वह किताब खुद ईश्वर की लिखी हुई है, ईश्वर परिणित है और सुरक्षा देती है, क्योंकि फिर तो इसके शक होने का सवाल ही नहीं रहा, संदेह का सवाल नहीं रहा, इसलिए सारे दुनिया के धार्मिक लोग अपनी-अपनी किताब को, ईश्वर के द्वारा बनाए होने का प्रमाण देने की कोशिश करते हैं।

यह प्रमाणितता अपने संदेह को समाप्त करने की कोशिश है। हम बिल्कुल निश्चिंत हो जाए, कि अब शक की कोई बात ही नहीं रही। हम खतरे के बिल्कुल बाहर हो जाए, सुरक्षा हमें पूरी मिल जाए। सिक्योरिटी में कोई शक न रहे, इसलिए तो सारी दुनिया के धार्मिक लोग लड़ते हैं। हिंदू कहेंगे, वेद ईश्वर के द्वार बनाया हुआ,

मुसलमान कहेंगे कि नहीं, यह कैसे हो सकता है? ईश्वर ने तो कुरान भेजी। जैन कहेंगे, कि नहीं-नहीं यह कोई ईश्वर के बनाए हुए नहीं है, तो तीर्थंकर का प्रणित, तो महावीर ने जो कहा वही है, वह सर्वज्ञ के वचन है। बौद्ध कहेंगे, कि बुद्ध के जो वचन है, वे ही सत्य है, बाकि कुछ और भी सत्य नहीं है। सारी दुनिया के धार्मिक लोग इसलिए तो लड़ते हैं, यह लड़ाई इस बात की लड़ाई नहीं है, कि इनको इस बात से प्रयोजन हो कि कौन सी किताब ईश्वर की बनाई हुई है, इनका प्रयोजन केवल एक है कि जब सिद्ध हो जाए, कि फलां किताब ईश्वर की बनाई हुई है, तो इनका चित्त निश्चिंत हो जाए। और जो चित्त निश्चिंत हो गया, वह मर गया, उसकी खोज खत्म हो गई। उसने सहारा खोज लिया, और इनक्वायरी बंद हो गई। यह जो सारी हमारी कोशिश चलती है कि महावीर सर्वज्ञ है, बुद्ध सर्वज्ञ है, वे सब जानते हैं और जो जानते हैं बिल्कुल ठीक जानते हैं। यह हम इतने जोर से क्यों लड़ते हैं इस बात के लिए, अगर कोई कह दें कि नहीं महावीर की बात में फलां चीज गलत है। तो हम मरने-मारने को उतारू हो जाएंगे। कृष्ण ने फलां बात गीता में गलत कह दी, तो हम लड़ने को तैयार हो जाएंगे, क्यों? इतना हमारा आग्रह क्यों है, उनके ठीक होने में। आग्रह इसलिए नहीं है कि हमको मतलब है कि वह ठीक है, आग्रह इसलिए कि अगर वे संदिग्ध हो गए तो हम तो मुश्किल में पड़ जाएंगे। वह अगर संदिग्ध हो गए तो हम संदेह में पड़ जाएंगे।

फिर हमारे विश्वास का आधार कहां रह जाएगा, फिर हमें सुरक्षा कहां रह जाएगी, फिर तो संदेह खड़ा हो जाएगा, डाऊट खड़ा हो जाएगा। इसलिए ऐसी-ऐसी बातों पर भी हम शक करने में और कठिनाई में पड़ गए, जैसे बाइबिल। बाइबिल में कहा होगा कि जमीन चपटी है और जमीन सूरज के इर्द-गिर्द घूमती है। जब पहली दफा पश्चिम में वैज्ञानिकों ने पता लगाया कि जमीन गोल है, तो पुरोहित और पादरी बहुत नाराज हुए। उन्होंने कहा, यह बिल्कुल ही गलत है, यह हो ही नहीं सकता। प्रमाण सब सामने थे, जमीन गोल होने के, लेकिन वे कहते कि बाइबिल में लिखा है कि जमीन चपटी है, यह गोल हो नहीं सकती। वैज्ञानिक के प्रमाण को वे इंकार करते रहे, उन्होंने गैलिलीयों को पकड़वा कर कहा, कि हम गर्दन कटवा देंगे। कहो कि जमीन चपटी है, गैलिलियों ने कहा कि बड़ी मुसीबत है, तुम्हें इतनी क्या फिक्र है कि जमीन चपटी होने की। तुम्हें इससे क्या प्रयोजन है? नहीं प्रयोजन था अगर ईसा का एक वचन भी गलत होता है, बाकि वचन भी संदिग्ध हो जाएंगे। खतरा यही था कि जमीन गोल है कि चपटी, किसी को क्या लेना-देना इस बात से। नहीं खतरा ही था अगर ईसा का यह वचन भी गलत है तो दूसरे वचन संदिग्ध हो जाएंगे। शक हो जाएगा कि जो एक आदमी एक बात गलत बोल सकता है, तो दूसरी बातें भी गलत बोल सकता है। तो डाउटफुल हो जाएगी स्थिति और अगर इससे भी कोई प्रयोजन नहीं कि ईसा गलत हो कि सही हो, प्रयोजन तो इसका है कि फिर हमारे लिए संदेह खड़ा हो जाएगा। और हमारा विश्वास डगमगा जाएगा, तो ऐसी-ऐसी मूढ़ताओं पर भी विश्वास जारी रही है जिनकी आप कल्पना नहीं कर सकते।

यूनान में अरस्तु के वक्त तक समझा जाता रहा था कि स्त्रियों के दांत पुरूषें से कम होते हैं। होने चाहिए स्त्रियां कहीं पुरुषों के बराबर हो सकती हैं। यह हो ही नहीं सकता, वे तो हीन है, पुरूष से हीन है, इसलिए उनके दांत कम होने चाहिए। अरस्तु जैसा समझदार, विचारशील व्यक्ति उसने भी अपनी किताब में लिखा कि स्त्रियों के दांत कम होते हैं। बड़ी हैरानी की बात है, उसकी खुद की दो औरतें थी, एक भी नहीं। वह कभी भी बैठा कर गिनती करवा सकता था, लेकिन उसने किया नहीं। क्योंकि पुराना धर्म यह कहता था यूनान का कि स्त्रियों के दांत कम होते हैं। अरस्तु के मरने के एक हजार बाद तक यूनान में यही माना जाता रहा कि स्त्रियों के दांत कम होते हैं। ऐसी स्त्रियां काफी है बहुतायत से, और अक्सर तो पुरूषें से थोड़ी ज्यादा हैं, कम नहीं हैं। और

यूनान में तो बहुत थी, क्योंकि जिन मुल्कों में लड़ाई चलती है, दंगे-फसाद होते हैं, वहां पुरूष कम हो जाते हैं, स्त्रियां ज्यादा हो जाती हैं। यूनान में तो संख्या कई दफा स्त्रियों की दुगुनी तक हो गई थी, पुरूषें से, क्योंकि आए दिन तलवार बाजी थी। तो उस बेवकूफी में पुरुष मर जाते हैं, स्त्रियां बच जाती हैं। लेकिन किसी को यह नहीं सूझा कि जाते हुए स्त्रियों के दांत गिन लें। कोई ख्याल ही नहीं आया, संदेह पैदा नहीं हुआ न। ऐसी हजारों तरह की मूढ़ताएं, हजारों वर्ष तक चलती है।

और हम क्यों डरते हैं उनको उखाड़ने में, उनको खोलने में डर इसलिए पैदा होता है कि अगर पूर्वजों की एक बात गलत हो जाए तो पूर्वजों की दूसरी बातें भी गड़बड़ हो जाती है, भय पैदा हो जाता है। और उस भय में फिर हमारे भीतर संदेह खड़ा होगा और हमको खोज करनी पड़ेगी हम मुश्किल में पड़ जाएंगे। लेकिन मैं आपसे कहूं, जिसका चित्त संदेह से नहीं भरता और जो संदेह की पीड़ा में नहीं पड़ता और जो संदेह की अग्नि में नहीं झुलसता, उसके भीतर विवेक कभी जाग्रत नहीं होता है। विवेक तो जाग्रत तब होता है, जब संदेह पीड़ा देने लगता है, कष्ट देने लगता है, संताप देने लगता है, एंगसाइटी पैदा करने लगता है। जब संदेह चारों तरफ से प्राणों को छेदने लगता है, और जब कोई उपाय नहीं रह जाता विश्वास करने का कि यह वेद ईश्वर के बनाए हुए हैं कि यह कुरान परमात्मा कि भेजी हुई हैं, कि यह बाइबिल खुद ईश्वर के पुत्र की बनाई हुई हैं, जब इस पर कोई, कहीं कोई आसरा नहीं रह जाता और सब तरफ चित्त में संदेह खड़ा हो जाता है, सब जगह प्रश्नवाचक चिन्ह खड़े हो जाते हैं। कहीं कोई सुरक्षा नहीं मालूम होती, तो फिर प्राणों की जो बहुत रिजर्व फोर्स, वह जो बहुत संरक्षित और केवल खतरे के लिए जरूरी है, वह शक्ति जागनी शुरू होती है और भीतर विवेक पैदा होता है। विवेक के अतिरिक्त ईश्वर प्रणीत कुछ भी नहीं है। बाकी सब शास्त्र मनुष्य के बनाए हुए हैं। और बाकी सब शास्त्र में वैसी ही कमियां और भूलें हैं, जैसी मनुष्य में होनी स्वाभाविक हैं।

एक भी शक्ति मनुष्य की बनाई हुई नहीं है, वह है विवेक। वह है प्राणों में सोई हुई विवेक की जानने की ज्ञान की क्षमता, वह मनुष्य की बनाई हुई नहीं है। वह है ज्ञान की क्षमता मात्र तो परमात्मा की हो सकती हैं, बाकि कुछ परमात्मा का नहीं हो सकता है, बाकि सब मनुष्य का निर्माण है, सोच-विचार, खोज-बीन है, और इसीलिए तो मनुष्य के सोच-विचार और खोज-बीन में बहुत विरोध और बहुत झगड़ा है। यह जो भीतर सोई हुई प्राणों की विवेक शक्ति है, इसे जागने के लिए पहला सूत्र हैः सम्यक रूप से संदेह। सम्यक रूप से संदेह मैं क्या कह रहा हूं। अकेला संदेह भी कह सकता हूं, लेकिन मैं कह रहा हूं राइट डाऊट। मैं कह रहा हूं, सम्यक रूप से संदेह। यह मैं इसलिए कह रहा हूं, कि कहीं संदेह अविश्वास न बन जाए। संदेह और अविश्वास में भेद है, बुनियादी भेद है। विश्वास के विरोध में होता है अविश्वास। संदेह विश्वास का विरोधी नहीं है, संदेह अविश्वास और विश्वास दोनों का विरोधी है। तीसरी बात है संदेह, अगर हम एक ट्राएंगल खींचे, एक त्रिभुज बनाए, तो दो भुजाओं पर होंगे, विश्वास और अविश्वास। तीसरे कोण पर होगा, संदेह, संदेह बड़ी अलग बात है, संदेह अत्यंत वैज्ञानिक चित्त की प्राथमिक अवथा है। अविश्वास नहीं, अविश्वास विश्वास का ही रूपांतरण है। अविश्वास, विश्वास की ही प्रतिक्रिया रिएक्ॅशन है।

एक कोई मानता है ईश्वर है, कोई मानता नहीं है। कोई मानता है आत्मा है, कोई मानता नहीं है। कोई कहता है कि मोक्ष है, कोई कहता है नहीं है। कोई कहता है कि जन्म मृत्यु के बाद फिर जन्म है, फिर मृत्यु है, कोई कहता नहीं है। यह दोनों ही थितयां एक ही तरह की है, इनमें शुद्ध संदेह नहीं है। शुद्ध संदेह का अर्थ यह है कि न मैं विश्वास पर पड़ता और न अविश्वास में, मैं अपने चित्त को मुक्त रखूं, खोजूं, पूछूं, चेष्टा करुं जानने की और जब तक मेरे विवेक के समक्ष कोई चीज सत्य की भांति स्पष्ट न हो जाए, तब तक उसे न तो मानो और न न

मानो, दोनों से अपने को मुक्त रखों, संदेह का अर्थ है अविश्वास और विश्वास से मुक्ति। संदेह पहली, पहली स्थिति है। संदेह के बिना विवेक नहीं जगेगा।

दूसरा तत्व है, विवेक के जागरण में, आत्म-निरीक्षण। संदेह की भूमि हो, आत्म-निरीक्षण की खाद देनी पड़े। आत्म-निरीक्षण का क्या अर्थ है? हम सारे लोग दूसरों का तो बहुत निरीक्षण करते हैं। स्वयं की निरीक्षण कभी कोई मुश्किल से करता होगा। हम प्रशंसा भी करते हैं और निंदा भी करते हैं, लेकिन प्रशंसा भी दूसरों की होती है और निंदा भी दूसरों की। आत्म-निरीक्षण हम करते नहीं, हमारा चित्त निरंतर दूसरों के संबंध में सोचने में सलंग्न होता है। स्वयं के संबंध में विचार, स्वयं के संबंध में आब्जर्वेशन निरीक्षण, स्वयं के बाबत भी तटस्थ खड़े होकर सोचने की वृत्ति मुश्किल से होती है। और जिसमें नहीं है ऐसी वृत्ति, वह करीब-करीब जिन बातों को दूसरों में निंदा करता है, करीब-करीब उन्हीं बातों को स्वयं में जीता है। जिन बातों के लिए दूसरों को कोसता है, कंडमनेशन करता है, उन्हीं बातों को स्वयं में पालता है और पोसता है और उसे पता भी नहीं चलता कि यह क्या हो रहा है? पता इसलिए नहीं चलता कि वह कभी खुद की तरफ लौट कर नहीं देखता है, देखता रहता है दूसरों की तरफ, खुद की तरफ लौट कर नहीं देखता। जो व्यक्ति खुद की तरफ लौट कर नहीं देखता, उसका विवेक कैसे जगेगा? विवेक दूसरों की तरफ देखने से नहीं जगता, क्योंकि पहली तो बात यह हैः कि जो व्यक्ति अभी खुद को ही देखने में समर्थ नहीं है, वह दूसरों को देखने में कैसे समर्थ हो सकेगा। जो व्यक्ति अभी अपने ही संबंध में निर्णय नहीं ले सकता है, वह दूसरे के संबंध में निर्णय कैसे ले सकेगा। खुद के भीतर के प्राणों से भी जो परिचित नहीं हो सका है, वह दूसरे के बाहर से देखकर उसके भीतर से कैसे परिचित कैसे हो सकेगा।

दूसरे के बाहर जो दिखाई पड़ रहा है, वह दूसरे का अंतः तल नहीं है। क्योंकि खुद हम अपने बाबत समझ लें, अपने बाबत हम अपने बाहर जो दिखला रहे हैं, वह क्या हमारा अंतःकरण है, वह क्या हमारा अंतःतल है, जिससे हम कह रहे हैं मैं तुम्हें प्रेम करता हूं, जिससे हम कर रहा हूं कि मैं तुम्हारा आदर करता हूं, क्या सच में हमारे भीतर भी वही भाव है, वही आदर और प्रेम है या कि हम धोखा दे रहे हैं या कि हम चारों तरफ एक पाखंड का व्यक्तित्व खड़ा कर रहे हैं, एक अभिनय कर रहे हैं।

हमारे बाहर तो जो है, वह झूठा है, भीतर कुछ सच्चा है। लेकिन दूसरे के बाहर को हम सच्चा मानकर विचार करने लगते हैं और दूसरे के भीतर को तो हम देख नहीं सकते, झांक नहीं सकते। इसलिए दूसरे को जानने के पहले खुद को जानना बहुत जरूरी है और बड़े मजे की बात है, दूसरे के संबंध में जानने की हमारी इतनी उत्सुकता क्यों हैं। दूसरों के दीवालों के छेद में से हम झांकने की कोशिश क्यों करते हैं? दूसरों के वस्त्र उठाकर देखने का हमारा प्रयोजन क्या है? कहीं ऐसा तो नहीं है कि अपने को देखने से बचने के लिए हम सब यह उपाय करते हो, ऐसा ही है। अपने को देखने से बचना चाहते हैं, इसलिए दूसरों को उखाड़ते हैं और देखते हैं। और अपने को देखने से क्यों बचना चाहते हैं, बहुत पीड़ा होगी अपने को देखने से, इसलिए अपने को तो कभी नहीं देखते, अपने बाबत तो एक भ्रम खड़ा कर लेते हैं कि हम ऐसे हैं और दूसरे को देखते हैं। और दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश करते हैं निरंतर अपने चित्त में अपनी वाणी में अपने विचार में। क्यों? ताकि इस भांति हम खुद ऊंचे हो सके। जब हम सारी दुनिया को नीचा देखने लगते हैं, तो अनजाने खुद ऊंचे हो जाते हैं। जो आदमी सब लोगों की बुराई देखने लगता है, वह एक बात में निश्चिंत हो जाता है कि वह खुद बुरा नहीं है।

बर्ट्रेंड रसल ने कभी एक दफा कहा, अगर किसी घर में चोरी हो जाए। और सबसे पहले जो जोर-जोर से चिल्लाने लगे, कि चोरी बहुत बुरी चीज है, पक्का समझ लेना कि उसके भीतर गहरा चोर है। तो सच है बात, अगर यहां चोरी हो जाए तो जो आदमी चोरी की सबसे ज्यादा निंदा करने लगे, और जो चोरों को गाली देने

लगे और बहुत शोरगुल मचाने लगे और दौड़धूप करने लगे, चोर को पकड़ने की। पक्का समझना कि वह आदमी चोर है, क्योंकि इस भांति वह अपने चारों तरफ एक हवा पैदा करता है कि आप एक भ्रम में आ जाए। एक बात तो पक्की समझ ले कि इसने चोरी नहीं की, जो चोरी की इतनी निंदा कर रहा है, वह चोरी कैसे करेगा? जो चोरी के इतने विरोध में हो वह चोर नहीं हो सकता है। हम जो भीतर होते हैं उससे बिल्कुल उलटा वातावरण चारों तरफ खड़ा करने की कोशिश करते हैं। यह स्थिति खुद के संबंध में अत्यंत आत्मवंचक हो जाती है। जैसे विवेक को जगाना हो, वह आत्मवंचना नहीं कर सकता, वह अपने से धोखा नहीं कर सकता। वह इसके पहले कि दूसरों के द्वार पर झांके, अपने द्वार की खोज करेगा।

मैंने सुना है कि एक सुबह, एक मनोचिकित्सक के द्वार पर एक आदमी भागा हुआ पहुंचा। उस आदमी की उम्र को पचास वर्ष होगी। उसने जाकर अंदर बहुत घबराहट में कहा कि ऐसा मालूम होता है कि मेरे पिता का दिमाग खराब हो गया। मनोचिकित्सक ने कहा, क्या? कैसे तुम्हें पता चला? उसने कहा उनकी उम्र अस्सी वर्ष हो गई, वह दिनभर टब में बैठे रहते हैं, पानी में बैठे रहते हैं। घंटों और गुड्डे-गुड्डियों से खेलते रहते हैं, अस्सी वर्ष की उम्र में क्या यह पागलपन का लक्षण नहीं है कि कोई आदमी बाथरूम में बैठा रहे, टब में बैठा रहे, गुड्डे-गुड्डियों से खेलता रहे। तो निश्चित ही पागलपन का लक्षण है। उस मनोचिकित्सक ने कहा कि फिर भी यह कोई बहुत खतरनाक पागलपन नहीं है। इससे नुकसान क्या है, उनका दिल बहलता होगा, अस्सी वर्ष के आदमी को, दिल बहलाने दो, तुम्हारा कोई हर्जा तो करते नहीं, किसी को नुकसान नहीं पहुंचाते, कोई तोड़-फोड़ नहीं करते, किसी को वे मारपीट नहीं करते, चुपचाप बाथरूम में बैठे रहते हैं, गुड्डियों से खेलते रहते हैं, खेलने दो। वह बोला आप कहते हैं, हर्जा नहीं है। उस आदमी की आंखों में आंसू आ गए और उसने कहा, गुड्डियां मेरी हैं और उनकी वजह से मैं बिल्कुल भी नहीं बैठ पाता हूं टब में, वह सब गुड्डे-गुड्डी मेरे हैं और सब खराब किए दे रहे हैं बिल्कुल। जरूर उनका दिमाग खराब हो गया है। इस आदमी को यह तो दिखाई पड़ा कि उनके पिता का दिमाग खराब हो गया है, लेकिन यह दिखाई नहीं पड़ा कि गुड्डे-गुड्डी मेरी हैं तो मेरा दिमाग भी कोई बहुत अच्छा नहीं हो सकता है। इसे यह तो बहुत जल्दी दिखाई पड़ गया कि कौन पागल है? दुनिया में दूसरों का पागलपन देख लेना बहुत आसान है। और केवल वही आदमी पागल नहीं है जो अपना पागल नहीं है जो अपना पागलपन देखने में समर्थ हो जाता है, इसे मैं फिर दोहराता हूं, केवल वही आदमी पागल नहीं है जो अपना पागलपन देखने में समर्थ हो जाता है, बाकि शेष सारे लोग पागल है जो दूसरों का पागलपन देखने में बड़े कुशल है।

गैर पागल आदमी की स्वस्थ आदमी की पहली पहचान यह है कि वह सबसे पहले अपने पागलपनों को पहचानता है, अपनी भूलों को पहचानता है, अपने जीवन के दोषों को देखता-पहचानता है। जो आदमी अपनी भूलों, अपने दोषों, अपनी विक्षिप्ताओं को पहचानने में समर्थ हो जाता है, उसने पहला कदम उठा लिया, मुक्ति की ओर। वह उनसे कल मुक्त भी हो सकेगा। आत्म-निरीक्षण जितना गहरा होता है, उतनी ही भीतर चेतना विकसित होने लगती है, क्यों? क्योंकि आत्मनिरीक्षण अत्यंत, अत्यंत दुरुह, अत्यंत आइडूअस बात है। बहुत तप की बात है, तपश्चर्या की बात है, खुद की भूलों को देखना, बड़ी तपश्चर्या है। क्योंकि खुद की भूलों को देखने के लिए स्वयं से ही थोड़े दूर खड़े होने की साधना करनी होती है। तभी तो हम देख सकते हैं, आब्जर्व कर सकते हैं, निरीक्षण कर सकते हैं। खुद से अपनेको थोड़ा दूर करके देखने की जरूरत है। जैसे हम दूसरे लोगों को देखते हैं, ठीक उसी भांति खुद को भी देखने की जरूरत है। जब कोई व्यक्ति अपने भीतर स्वयं को इस भांति दूर से खड़े होकर देखने लगता है, तो वह जो देखने वाली शक्ति है, उसके निरंतर अभ्यास से वह विकसित होती है, उसी का नाम विवेक है। वह जो साक्षी होने की शक्ति है, वह जो विटनेस होने की शक्ति है, वह जो आब्जर्वेशन की

शक्ति है, निरीक्षण की शक्ति है, वही तो विवेक है। जब कोई अपने से दूर खड़े होकर देखने लगता है कि कहां-कहां मुझमें पागलपन, कहां-कहां मुझमें दोष, कहां-कहां मेरा जीवन भ्रांतियों से भरा, कहां-कहां मेरे जीवन में पाखंड, कहां-कहां मेरे जीवन में असत्य, कहां-कहां मेरे जीवन में हिंसा, जब कोई कहां-कहां मेरे चित्त में अहंकार, जब कोई निरंतर इनके प्रति जागता है, देखता है, समझता है तो इसके भीतर विवेक जगना शुरू होता है। इसी क्रम में उसके भीतर विवेक की शक्ति जागने लगती है और बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि जैसे-जैसे विवेक जागता है, वैसे-वैसे उसके दोष अपनेआप क्षीण होने लगते हैं। क्योंकि जहां विवेक का प्रकाश है, वहां दोषे का अंधकार बहुत दिन नहीं टिक सकता है, वह हट जाएगा। वह टूट जाएगा, वह मिट जाएगा।

गुरजिएफ एक फकीर हुआ, यूनान में। उसने अपनी आत्मकथा में लिखा कि मेरा पिता मृत्यु-शैया पर था। उसने मुझे अपने पास बुलाया, तब मैं चौदह वर्ष की मेरी उम्र थी, मुझसे कान में उसने कहा, कि अगर मैं कोई सलाह दूं तो तुम बुरा नहीं मानोगे। बहुत समझदार आदमी रहा होगा वह, क्योंकि सलाह देने वाले यह कभी पूछते नहीं कि बुरा मानोगे कि नहीं मानोगे। सलाह देने वाले मुफत सलाह बांटते हैं और दुनिया में जो चीज सबसे ज्यादा दी जाती है, और सबसे कम ली जाती है वह सलाह ही है। उस बूढ़े आदमी ने जिसकी नब्बे वर्ष उम्र थी, चौदह वर्ष के बच्चे से पूछा कि क्या मैं तुम्हें सलाह दूं कि तुम बुरा नहीं मानोगे। और अगर मैं तुम्हें सलाह दूं तो कभी तुम जीवन में मेरे प्रति रुष्ट नहीं रहोगे, उस युवक ने कहा कि आप कैसी बात करते हैं, आप कहें आपको मुझे क्या कहना है। उस बूढ़े आदमी ने कहा मेरे पास न तो संपत्ति है तुम्हें देने को, न मेरे पास किसी और तरह की यश और प्रतिष्ठा है, लेकिन जीवन भर अनुभव से मैंने एक बात पहचानी और जानी, वह मैं तुम्हें देना चाहता हूं। और वह यह है कि तुम खुद को, खुद से जरा दूर रखकर देखना सीखना। अगर रास्ते पर तुम्हें कोई मिल जाए और तुम्हें गाली दे, तो जल्दी से उसकी गाली का उत्तर मत देना। घर लौट आना, दूर खड़े होकर देखना कि उसने जो गाली दी, वह कहीं ठीक ही तो नहीं है। अगर वह ठीक हो, तो उसको जाकर धन्यवाद दे आना, तुमने मुझ पर बड़ी कृपा की। और एक बात मुझे बताई जिसका मुझे पता नहीं था। अगर वह ठीक न हो, तो उसकी चिंता छोड़ देना। क्योंकि जो बात ठीक नहीं है उसे तुम्हें प्रयोजन ही क्या?

गुरजिएफ ने लिखा है फिर मैंने जीवन भर उसी रात पिता उसका मर गया। इस बात की फिक्र की, उसने लिखा है कि मेरे जीवन में फिर लड़ने का कोई मौका नहीं आया हैं। गालियां तो मुझे लोगों ने बहुत बार दी, लेकिन पहले मैंने उनसे कहा, कि मित्र रूको! मैं जरा घर जाऊं, सोच-समझ कर आऊं। और फिर मैं आकर तुम्हें बताऊं, जब मैं घर गया और मैंने सोचा-समझा, तो मैंने पाया कि कोई गाली इतनी बुरी नहीं हो सकती, जितना बुरा मैं हूं। मैंने जाकर धन्यवाद दिया और कहा कि मित्र बहुत-बहुत धन्यवाद। और सदा स्मरण रखना, और जब भी जरूरत पड़े और तुम्हारे मन में कोई गाली आ जाए, तो छिपाना मत, मुझे दे देना। जैसे-जैसे व्यक्ति का आत्म-निरीक्षण गहरा होगा, वह कुछ और ही दिशा में अपने विवेक को जगता हुआ पाएगा।

लेकिन आत्म-निरीक्षण है बिल्कुल सोया हुआ हमारा। हम कभी देखते नहीं है कि हम क्या कर रहे हैं, क्या हो रहे हैं, क्या चल रहा है। अगर कोई हमको बताए भी, तो हम लड़ने को खड़े हो जाते हैं। स्मरण रखना, अगर किसी गाली पर आप लड़ने को खड़े हो गए तो पक्का समझ लेना कि आप उस गाली के योग्य थे। नहीं तो आप लड़ने को तैयार नहीं होते, आप लड़ने को तैयार नहीं होते, आपको यह फिक्र पड़ गई फौरन की मैं सिद्ध कर दूं कि यह गाली गलत है इसलिए कि आप बहुत भीतर जानते हैं कि यह गाली सही है। और अगर मैंने सिद्ध न किया कि गलत है तो दुनिया को पता चल जाएगा। तो जब भी आप यह सिद्ध करने की कोशिश में लगे हैं,

फलां दोष मुझमें नहीं है, तो बहुत शांति से समझ लेना, वह दोष जरूर आपमें होगा। नहीं तो आप उसे गलत सिद्ध करने की फिक्र न करते। कोई फिक्र आपमें पैदा न होती।

भिक्षु भीखण राजथान के एक गांव में थे, वहां कोई चार माह रुकें, चतुर्मास होगा। रोज ही आसुजी नाम का एक आदमी उनको सुनने आता था। लेकिन रोज ही दिन-भर की दुकान के बाद लौटता था, सांझ को उनको सुनता था तो सो जाता था। बहुत कम लोग है जो सुनते वक्त जागते रहते हो, बहुत कठिन है आंख खुली रखना एक बात है, जागना बिल्कुल दूसरी बात है, लेकिन वह आदमी आंखें भी बंद कर लेता था, सीधा-सादा आदमी होगा। आंखें खुली रखकर धोखा नहीं देता था, कि हम सुन ही रहे हैं। बहुत दिन भीखण ने देखा कि यह तो सोता है निरंतर, सामने ही बैठता था और गांव का सबसे बड़ा धनपति था, इसलिए पीछे तो बैठ ही नहीं सकता था। सबसे ज्यादा धन उसी के पास था, इसलिए बैठता आगे ही था। पीछे तो कौन बैठता? आगे ही बैठता था, सामने ही सोता था। और भी साधु आए थे गांव में, लेकिन धनपति सोता है यह साधु कैसे कहें। इसलिए साधु बर्दाश्त करते थे, भीखण कुछ गड़बड़ रहे होंगे। इन्होंने टोका, और भी साधु आते थे, उनको भी सुनने जाता था, क्योंकि जो साधुओं को सुनने जाते हैं वे किसी भी साधु को सुनने जाते हैं। वह वैसे ही है, जैसे जो फिल्म देखने जाते हैं, वे किसी भी फिल्म को देखने जाते हैं। वे कोई बहुत भेद नहीं करते, वहां तीन घंटा गुजरता है, वापिस लौट आते हैं। मैं तो अपने गांव में एक ऐसे आदमी को भी जानता था, क्योंकि मेरा गांव बहुत छोटा, उसमें मुश्किल से एक ही नाम कहे जाने को टाकीज। वह एक ही फिल्म को रोज ही देखते थे, उसी फिल्म को। उनका तीन घंटा गुजर जाता था, ऐसे ही लोग मंदिरों में जाते हैं, ऐसे ही लोग मस्जिदों में जाते हैं। पुराने जमानों में मंदिरों-मस्जिदों में जाते थे, वही अब सिनेमाओं में जाने लगे हैं, उनमें कोई बहुत फर्क नहीं है। वह भी बेचारा उनके सामने बैठा-बैठा सोता था। ऐसे फिल्म में सो जाओ तो कोई टोकने वाला नहीं होता, न तो मैनेजर आकर कहता है कि क्यों सो रहे हों? लेकिन इस साधु थोड़े गड़बड़ होते हैं, ये टोक देते हैं।

भीखण ने उसको कहा, आसुजी सोते हो, उसने जल्दी से आंख खोली। उसने कहा कि नहीं, कौन मानता है कि मैं सोता हूं। फिर थोड़ी देर बात चली, फिर वह सो गया, क्योंकि सोने वाला आदमी जबरदस्ती कितनी देर जगा रहेगा। फिर भीखण बीच में कहा, आसुजी सो गए। उसने आंख खोली, उसने कहा कि नहीं, आप यह क्या बार-बार बीच-बीच में लगाते हैं कि सो गए। उसे गुस्सा आना स्वाभाविक था। क्योंकि कोई आदमी सोता हो और कोई उसको बार-बार बताए कि आप सो गए, तो गुस्सा आना बिल्कुल स्वाभाविक है। लेकिन फिर थोड़ी देर में सो गया, फिर भीखण ने कहा, लेकिन अबकी बार दूसरी बात कही, भीखण ने कहा आसुजी जीते हो, आसुजी तो नींद में थे उन्होंने समझा ये फिर पूछ रहे हैं आसुजी सोते हो। उसने कहा कि नहीं, कौन कहता है। भीखण ने कहा अब तो पकड़ गए कि निश्चित सोते थे। क्योंकि मैंने पूछा, आसुजी जीते हो और तुम कहते हो, कौन कहता है? बिल्कुल नहीं।

हम मानने को राजी नहीं होते, दूसरा बताए तब तो बहुत कठिन हो जाता है मानना। लेकिन जो आत्मनिरीक्षण करेगा, जो निरंतर अपने पर विचार करेगा, वह अनुगृहीत होएगा, उसका जो बता दे कि तुम सोए हो, वह धन्यवाद करेगा, उसका कि जरूर मैं सोया था। और तुम्हारी कृपा कि तुमने जगाया अन्यथा कौन किसको जगाता है, किसको क्या प्रयोजन है। और न केवल वह दूसरों के द्वारा दोष पी जाने पर, दिखाए जाने पर उनको पहचानेगा, बल्कि खुद निरंतर उनकी खोज करेगा। खुद निरंतर खोजेगा। स्मरण रखिए जो दोष हम छिपा लेते हैं। वे दोष धीरे-धीरे बड़ा होने लगता है। जैसे बीज को हम जमीन में दबा देते हैं, तो फिर बड़ा होता है, अंकुर आते हैं और पौधा निकलता है और एक बीज से पौधा निकलकर फिर वह पौधा हजारों बीजों को पैदा

कर देता है। ऐसे ही चित्त की भूमिजन्य दोषों को हम छिपा लेते हैं, वह बीज की तरह भीतर बढ़ने लगते हैं, बड़े होने लगते हैं। फिर उनमें अंकुर निकलने लगते हैं और हम उनकी रक्षा करते हैं अगर कोई बताए कि देखो तुम्हारे भीतर फलां-फलां बीज अंकुरित हो रहा है, हम कहते हैं क्या झूठ बात कह रहे हो, हम उसकी रक्षा करते हैं, बाबुड़ लगाते हैं, व्यवस्था करते हैं। सब तरफ से दीवाले उठाते हैं, सुरक्षा करते हैं फिर वह बड़ा होता है। एक बीज के हजार बीज हो जाते हैं, जीवन से जिस चीज को नष्ट करना हो, उसे छिपाना सबसे खतरनाक बात है। उसे खोल देना सरलता से सहजता से, उसे अपने सामने तो खोल ही लेना जरूरी है, आत्मनिरीक्षण का अर्थ है, जैसा मैं हूं, वैसा ही स्वयं को जानने की सतत चेष्टा।

आत्ममूर्च्छा का अर्थ है जैसा मैं नहीं हूं, वैसा स्वयं को बताने की चेष्टा। आत्मनिरिक्षण का अर्थ है, जैसा मैं हूं, वैसा ही स्वयं को जानने की सतत चेष्टा। हममें से कोई भी हम अपने आप को वैसा ही जानना नहीं चाहता है। हम कुछ और के भांति अपने को दिखाना चाहते हैं, और भांति बताना चाहते हैं, जैसे हम नहीं है। और हम ससंकृति और सभ्यता के इस धोखे के लिए खूब पोषण दिया है, बहुत पोषण दिया है।

लंदन में एक फोटोग्राफर अपनी दुकान पर एक तख्ती लगा रखी थी और लिख रखा था उसमें कि यहां तीन तरह के चित्र उतारे जाते हैं। एक तो जैसे आप है, लेकिन उसके पांच ही रुपये लगते हैं, दूसरे जैसे आप सोचते हैं कि आप है उसके दस रुपये लगते हैं, तीसरा जैसा आप सोचते हैं कि भगवान को आपको बनाना चाहिए था उसके पंद्रह रुपये लगते हैं। एक गांव का आदमी पहली दफा पहुंचा, वह भी फोटो उतरवाना चाहता था और गांव के आदमियों के सिवाय, गवारों के सिवाय कोई फोटो उतरवाना चाहता है। वह भी उतरवाना चाहता था, गया उस फोटाग्राफर की दुकान पर गया, उसने जाकर देखा कि वहां तीन तरह के फोटा उतरते हैं, वह बहुत हैरान हुआ, हम तो सोचते थे, फोटो एक ही तरह का होता है, क्या हम तो एक ही तरह के है, तीन तरह के फोटा कैसे हो सकते हैं। उस गांव के सीधे-साधे आदमी ने उस फोटोग्राफर से पूछा कि मित्र क्या पहले फोटो के अलावा दूसरे फोटा उतरवाने वाले भी यहां आते हैं। उसने कहा तुम पहले आदमी हो जो पहली फोटो को उतरवाने का विचार कर रहा है, अब तक तो यहां जो भी आता है, वह दूसरा उतरवाता है या तीसरा, दूसरा मजबूरी में उतरवाता है पैसे कम हो तो। ऐसे तो तीसरा ही उतरवाता है, पहला फोटो तो कोई कहता ही नहीं कि उतारोगे, जैसे मैं हूं वैसा ही उतार दो, ऐसा तो कोई उतरवाना ही नहीं चाहता और कभी किसी का भूल-चूक से उतर जाए तो वह नाराज होता है कि यह तो बिल्कुल मेरे जैसा नहीं मालूम होता है, यह फोटो तो बिल्कुल गड़बड़ है, यह क्या आप बताए? यह फोटो तो मेरे जैसा है ही नहीं बिल्कुल तो उसने कहा कि अगर कोई उतरवाना भी चाहता है तो भी हम पांच रुपये में ही दूसरा वाला फोटो उतार देता है, तभी वह खुश होता है। तो उस आदमी ने कहा, लेकिन मैं तो अपनी फोटा उतरवाने आया हूं, किसी और का नहीं, मुझे तो वही फोटा चाहिए जैसा मैं हूं, बुरा या भला, जैसा मैं हूं वही मेरा चित्र है।

आत्मनिरिक्षण का अर्थ है, पहले तरह के चित्र को उतरवाने की सतत चेष्टा। हम जैसे है, वैसा हमको स्वयं को जानना चाहिए क्यों? इसलिए कि जीवन जीवन के विज्ञान का यह अत्यंत रहयमय सूत्र है, कि जो व्यक्ति जैसा है, अगर वैसा ही अपने को जानने लगे तो उसके वैसे हो जाने में बहुत देर नहीं रह जाती, जैसा वह होना चाहता है। नहीं रह जाती देर, क्योंकि जब हमें दोस्त दिखाई पड़ने शुरू होते हैं, तब हम उनसे मुक्त होने लगते हैं और जब बीमारियां हमारे आंखों में आती है, तब हम स्वस्थ होने की चेष्टा करने लगते हैं और जब अंधकार खंड हम अपने चित्त में मालूम होने लगते हैं, तो हम वहां दिए जलाने लगते हैं, लेकिन कोई भी क्रांति के लिए, कोई भी विवेक जागरण के लिए अत्यंत अनिवार्य और जरूरी है कि मैं जैसा हूं, वैसा अपने को जानने में लग

जाऊं, इसलिए मैंने कहा आत्मनिरीक्षण। आत्मनिरीक्षण दूसरा सूत्र है, तो ही विवेक जगेगा, नहीं तो नहीं जगेगा।

और तीसरा सूत्र है, मूर्च्छा परित्याग। बहुत कुछ हम छोड़ते हैं जिंदगी में, लोग कहते हैं त्याग करें, धन छोड़ें, कोई कहता है लोभ छोड़े, कोई कहता है क्रोध छोड़े। मैं कहता हूं छोड़ ही नहीं सकेंगे, कितना ही छोड़ें। धन छोड़ दें कितना ही छोड़ नहीं सकेंगे। एक संन्यासी के पास में था, वह मुझसे कहे कि मैंने लाखों रुपयों पर लात मारी। मैंने उनसे पूछा यह लात कब मारी, उन्होंने कहा कोई बीस साल हुए। मैंने कहा, लात ठीक से लग नहीं पाई, नहीं तो बीस साल तक मृति कैसे बनी रहती। लात थोड़ी दूर पड़ी, धन वहीं की वहीं रखा हुआ है। जब उनपर लाखों रुपये थे, तो वे अकड़ कर चलते रहे होंगे कि मेरे पास लाखों रुपये हैं, अब भी अकड़ कर चल रहे हैं कि मैंने लाखों पर लात मार दी। वह रुपये से जो भ्रम पैदा होता था, वह मौजूद है। कोई रुपया नहीं छोड़ सकता। मूर्च्छित चित्त धन छोड़ देगा तो धन के छोड़ने को पकड़ लेगा, भोग छोड़ देगा तो त्याग को पकड़ लेगा, गृहस्थी छोड़ देगा तो संन्यास को पकड़ लेगा, लेकिन पकड़ जारी रहेगी। क्योंकि मूर्च्छित चित्त मूर्च्छित है, उसके छोड़ने से कोई फर्क नहीं पड़ता है। मूर्च्छित चित्त लोभ नहीं छोड़ सकता।

एक गांव में गया एक संन्यासी, वहां बोलते थे। उन्होंने लोगों को समझाया कि जब तक तुम लोभ न छोड़ोगे, तब तुमको मोक्ष नहीं मिल सकता। मैंने उनसे पूछा कि अगर इन्होंने इस आशा से लोभ छोड़ भी दिया कि मोक्ष पाना है तो यह लोभ का विस्तार हुआ या लोभ का अंत हुआ, इस आशा से लोभ छोड़ देना कि लोभ छोड़ने से मोक्ष मिल जाएगा, यह तो लोभ का विस्तार हुआ, यह लोभ का छोड़ना नहीं हुआ, मोक्ष पाने को, ईश्वर पाने को या स्वर्ग पाने को अगर कोई लोभ छोड़ता है तो यह तो लोभ का विस्तार है। यह तो लोभ के लिए ही लोभ छोड़ता है, इससे लोभ मिटता नहीं। हमारा चित्त जो है वह अगर मूर्च्छित है तो कुछ भी नहीं छोड़ सकता और अगर मूर्च्छित नहीं है तो कुछ भी पकड़ नहीं सकता। इसलिए बहुत केंद्रीय सूत्र कुछ और छोड़ने का नहीं, केंद्रीय सूत्र है मूर्च्छा परित्याग। चित्त से बेहोशी और मूर्च्छा छूटनी चाहिए, अमूर्च्छित जीवन व्यवहार होना चाहिए, जागा हुआ जीवन व्यवहार होना चाहिए। आप कहेंगे हम जागे हुए तो जीवन व्यवहार करते हैं, मैं कहूंगा नहीं। हम बिल्कुल मूर्च्छित जीवन व्यवहार करते हैं। अगर मैं जोर से आपको धक्का दे दूं, आप क्रोध से भर जाएंगे और मैं आपसे पूछूं कि यह क्रोध आप होशपूर्वक कर रहे हैं या बेहोशी में कर रहे हैं। क्योंकि क्रोध करने के घड़ी भर बाद पश्चाताप शुरू होता है, घड़ी भर बाद आपको लगता है कि यह मैंने कैसे किया, घड़ी भर बाद आपको लगता है कि यह तो मुझे नहीं करना था, घड़ी भर बाद आपको लगता है कि यह कैसी भूल मुझसे हो गई। तो आप घड़ी भर पहले कहां थे, जब भूल हुई थी, जब घड़ी भर बाद पछताते हैं, तो घड़ी भर पहले कहां थे, जरूर आप अनुपस्थित रहे होंगे, अपसैंट थे, आप मौजूद नहीं थे। जब क्रोध आपको पकड़ता है, आप अनुपस्थित होते हैं, आप मौजूद ही नहीं होते। मैं आपको निवेदन करता हूं, अगर आप मौजूद हो जाए तो क्रोध उसी क्षण विलीन हो जाएगा, दोनों चीजें एक साथ नहीं खड़ी हो सकती। आप और क्रोध दोनों साथ नहीं हो सकते। कभी नहीं हुआ, ऐसा न हो सकता है जैसे ही आप होश से भरेंगे आप पाएंगे क्रोध गया।

मेरे एक मित्र है उन्हें बड़ा क्रोध आता था, बड़े परेशान थे मुझसे पूछें इसके लिए क्या करूं। मैंने कहा, कुछ करे न। खींसे में एक कागज पर लिखकर रख लें कि अब मुझे क्रोध आ रहा है और जब भी क्रोध आए उसे फौरन निकालकर पढ़ लें और वापिस खींसे में रख दे और कुछ भी न करें। वे बोले इससे क्या होगा? मैंने कहा, मुझसे यह मत पूछें, दो तीन महीने बाद आए। वे दो-तीन महीने बाद आए, वे बोले बड़ी हैरानी की बात है। खींसे की तरफ हाथ ही जाता है कि क्रोध क्षीण होने लगता है। क्योंकि मुझे तत्क्षण ख्याल आ जाता है कि क्रोध आ रहा है।

जिस क्रोध के लिए मैं पछताया हूं बहुत बार, दुखी हुआ हूं, पीड़ित हुआ है, इस बात का होश आते ही कि मुझे आ रहा है वह क्षीण होने लगता है। अगर हम जीवन के प्रति सतत जागरूक हो जाए और जो भी रहा है उसके प्रति पूरे होश से भर जाए तो जीवन में जो भी बुरा है, वह असंभव हो जाए। क्योंकि बुरे के आगमन का द्वार मूर्च्छा है, बेहोशी है। बुरे को छोड़ा नहीं जा सकता, कोई छोड़ नहीं सकता बुरी बातों को, लेकिन अगर होश आ जाए तो बुरे को पकड़ा नहीं जा सकता, कोई पकड़ नहीं सकता बुरी बात को। इसलिए केंद्रीय जीवन की जो क्रांति है, वह मूर्च्छा के आसपास घूमती है, मूर्च्छा या अमूर्च्छा। दो ही तरह के लोग होते हैं, मूर्च्छित या अमूर्च्छित, सोये हुए या जागे हुए। तो जागने की कोशिश करें निरंतर, जीवन चौबीस घंटे मौका देता है, जब आप सोते हैं, उस वक्त जागे। आज से ही शुरू करें, क्योंकि कल के लिए जो छोड़ता है वह फिर सोने का एक काम कर रहा है। वह कहता है कल से शुरू करेंगे, वह फिर नींद की बातें कर रहा है, क्योंकि कल का कोई पक्का भरोसा नहीं है। वह नींद में है फिर, अगर वह मानता है कि कल भी होगा। अगर वह मानता है कि मैं कल भी रहूंगा, तो वह नींद है सपना देख रहा है। कल का कोई पक्का नहीं है, कि आप रहेंगे या नहीं रहेंगे। इसलिए जिसे जागरण शुरू करना है, उसे इसी क्षण करना पड़ेगा। छोटी-छोटी चीजों में जागरुक होकर देखें, होशपूर्वक करके देखें उन्हीं चीजों को, जरा कोशिश करे, कभी क्रोध को होशपूर्वक करके देखें। और अगर आप सफल हो जाएं तो आप बड़े अद्भुत आदमी है, अब तक दुनियां में कोई सफल नहीं हो सका है। होशपूर्वक क्रोध नहीं किया जा सकता, होशपूर्वक किसी को दुख नहीं पहुंचाया जा सकता, होशपूर्वक हिंसा नहीं की जा सकती। होशपूर्वक जिन-जिन चीजों को हम पाप कहते हैं, वह कोई भी नहीं किया जा सकता, इसलिए मैं तो पाप की ही यह परिभाषा करता हूं कि जो बेहोशी में किया जा सके, वह पाप है और जो बेहोशी में न किया जा सके, वह पुण्य है।

तीसरा सूत्र है अमूर्च्छित जीवन व्यवहार। यह क्या मामला है? अमूर्च्छित जीवन व्यवहार तीसरा सूत्र है। पहले दो सूत्र मैंने कहे, संदेह की भूमि, आत्मनिरीक्षण की खाद और अमूर्च्छित जीवन व्यवहार की वर्षा। अगर यह तीन बातें जीवन में हो, तो विवेक के बीज सबके भीतर मौजूद है, वे अंकुरित हो जाएंगे। और विवेक जागृत हो जाए, तो एक आत्मा अनुशासन पैदा होता है, एक डिस्पिलीन पैदा होती है, एक अनुशासन पैदा होता है जो स्वयं के भीतर से आता है, बाहर से नहीं। एक अनुशासन है जो बाहर से आता है वह झूठा है। एक अनुशासन है जो भीतर से जगता है, एक आचरण है जो भीतर से जगता है, वह अद्भुत है उसका सौंदर्य अद्भुत है, जो अनुशासन बाहर से आता है, वह कुरुप कर देता है व्यक्तित्व को, घपिल्ड कर देता है, पंगु कर देता है उससे ज्यादा अगलीनेस और कुछ भी नहीं है, उससे ज्यादा कुरूप स्थिति और कोई भी नहीं है। लेकिन जो अनुशासन भीतर से आता है। इन तीन सूत्रों के आधार पर जो विवेक जागता है और अनुशासन आता है, वह व्यक्तित्व को सुंदर कर जाता है, प्राणों को सौंदर्य से भर देता है, संगीत से भर देता है। और फिर जीवन में एक सहजचर्या उत्पन्न होती है, अत्यंत सहजचर्या उत्पन्न होती है। हम क्षण-क्षण जीए जाते हैं होशपूर्वक, विवेकपूर्वक और जो ठीक है वही हमसे होता है। जो ठीक नहीं है, वह होता ही नहीं। अशुभ को रोकना नहीं पड़ता, शुभ को लाना नहीं पड़ता। शुभ आता है, अशुभ आता ही नहीं। एक छोटी सी कहानी और फिर मैं चर्चा पूरी करूं और फिर हम ध्यान के लिए बैठें।

बुद्ध के पास एक राजकुमार दीक्षित हो गया, दीक्षा के दूसरे ही दिन, किसी श्राविका के घर उसे भीक्षा लेने बुद्ध ने भेज दिया। वह वहां गया, राते में दो तीन घटनाएं घटी। लौटते आते में, उनसे बहुत परेशान हो गया। राते में उसके मन में ख्याल आया कि मुझे जो भोजन प्रिय है, वह तो अब नहीं मिलेंगे। लेकिन श्राविका के

घर जाकर पाया कि वही भोजन थाली में जो उसे बहुत प्रितीकर है, वह बहुत हैरान हुआ। फिर सोचा संयोग होगा, कोइनसीडेंस है एक। मैंने जो मुझे पसंद है वही आज बना होगा। वह भोजन करता है तभी उसे ख्याल आया कि रोज तो भोजन के बाद में विश्राम करता था दो घड़ी आज तो फिर धूप में वापिस लौटना है। लेकिन तभी उस श्राविका ने कहा कि भिक्षु बड़ी अनुकंपा होगी अगर भोजन के बाद दो घड़ी विश्राम करो। बहुत हैरान हुआ, जब वह सोचता था यह तभी उसने यह कहा था, फिर भी सोचा संयोग कि ही बात होगी कि मेरे मन भी बात आई, और उसके मन में भी सहज बात आई कि भिक्षा के बाद, भोजन के बाद भिक्षु विश्राम कर लें। चटाई बिछा दी गई, वह लेट गया, लेटते ही उसे ख्याल आया कि आज न तो अपना कोई साया है, न कोई छप्पर है अपना, न अपना कोई बिछौना है, अब तो आकाश छप्पर है, जमीन बिछौना है। यह सोचता था वह श्राविका लौटती थी, उसने पीछे से कहा, भंते! ऐसा क्यों सोचते हैं? न तो किसी की शैया है, न किसी का साया है। अब संयोग मानना कठिन था, अब तो बात पष्ट थी। वह उठकर बैठ गया और उसने कहा मैं बड़ी हैरानी में हूं। क्या मेरे विचार तुम तक पहुंच जाते हैं, क्या मेरा अंतःकरण तुम पढ़ लेती है। उस श्राविका ने कहा, निश्चित ही। पहले तो सबसे पहले स्वयं के विचारों का निरिक्षण शुरू किया था, अब तो हालत उलटी हो गई। स्वयं के विचार तो निरीक्षण करते-करते क्षीण हो गए और विलीन हो गए। मन हो गया निर्विचार, अब तो जो निकट होता है, उसके विचार भी निरीक्षण में आ जाते हैं। वह भिक्षु घबराकर खड़ा हो गया और उसने कहा कि मुझे आज्ञा दे मैं जाऊं, उसके हाथ-पैर कंपने लगे। उस श्राविका ने कहा इतने घबड़ाते क्यों है, इसमें घबराने की क्या बात है। लेकिन भिक्षु फिर रुका नहीं, वह वापिस लौटा उसने बुद्ध से कहा, क्षमा करें! उस द्वार पर दूबारा भिक्षा मांगने मैं न जा सकूंगा।

बुद्ध ने कहा, कुछ गलती हुई, वहां कोई भूल हुई। उस भिक्षु ने कहा, न तो भूल हुई, न कोई गलती हुई, बहुत आदर-सम्मान और जो भोजन मुझे प्रिय था, लेकिन वह श्राविका, वह युवती दूसरे के मन के विचारों को पढ़ लेती है, यह तो बड़ी खतरनाक बात है। क्योंकि उस सुंदर युवती को देखकर मेरे मन में तो काम-वासना भी उठी, विकार भी उठा था। वह भी पढ़ लिया गया होगा। अब मैं कैसे वहां जाऊं, कैसे उसके सामने खड़ा होऊंगा, मैं नहीं जा सकूंगा, मुझे क्षमा करें। बुद्ध ने कहा, वही जाना पड़ेगा, अगर ऐसी क्षमा मांगनी थी तो भिक्षु नहीं होना था। जानकर वहां भेजा है, और जब तक मैं न रोकूंगा, तब तक वहीं जाना पड़ेगा, महीने दो महीने, वर्ष दो वर्ष, निरंतर यही तुम्हारी साधना होगी। लेकिन होशपूर्वक जाना, भीतर जागे हुए जाना और देखते हुए जाना, कि कौन से विचार उठते हैं, कौन सी वासनाएं उठती है और कुछ भी मत करना, लड़ना मत, जागे हुए जाना, देखते हुए जाना भीतर कि क्या उठता है, क्या नहीं उठता, वह दूसरे दिन भी वहीं गया। सोच लें उसकी जगह आप ही जा रहे हैं, और वह श्राविका आपका मन पढ़ लेती है और वह बहुत सुंदर है, बहुत आकर्षक है, बहुत सम्मोहक है, और वह मन पढ़ लेती है आपका। हां, मन न पढ़ ली होती, मन न पढ़ती होती यह आपको पता न होता, तो फिर मन में आप कुछ भी करते, आज क्या करेंगे? आज आप ही जा रहे हैं उसकी जगह भिक्षा मांगने। राते पर आप हैं, वह भिक्षु बहुत खतरे में हैं, अपने मन को देख रहा है, जागा हुआ है, आज पहली दफा जिंदगी में वह जागा हुआ चल रहा है सड़क पर, जैसे-जैसे उस श्राविका का घर करीब आने लगा, उसका होश बढ़ने लगा, भीतर जैसे एक दीया जलने लगा और चीजें साफ दिखाई पड़ने लगी और विचार घूमते हुए मालूम होने लगे। जैसे उसकी सीढ़ियां चढ़ा, एक सन्नाटा छा गया भीतर, होश परिपूर्ण जग गया। अपना पैर भी उठाता है तो उसे मालूम पड़ रहा है, श्वास भी आती-जाती है, तो उसके बोध में है। जरा सा भी कंपन विचार का भीतर होता है, लहर उठती है कोई वासना की, वह उसको दिखाई पड़ रही है। वह घर के भीतर प्रविष्ट हुआ, मन में

और भी गहरा शांत हो गया, वह बिल्कुल जागा हुआ है। जैसे किसी घर में दीया जल रहा हो और एक-एक चीज कोना-कोना प्रकाशित हो रहा हो। वह भोजन को बैठा, उसने भोजन किया, वह उठा, वह वापिस लौटा, वह उस दिन नाचता हुआ वापिस लौटा। बुद्ध के चरणों में गिर पड़ा और उसने कहा अद्‌भुत हुई बात। जैसे-जैसे मैं उसके निकट पहुंचा और जैसे-जैसे मैं जागा हुआ हो गया, वैसे-वैसे मैंने पाया कि विचार तो विलीन हो गए, कामनाए तो क्षीण हो गई और मैं जब उसके घर में गया तो मेरे भीतर पूर्ण सन्नाटा था, वहां कोई विचार नहीं था, कोई वासना नहीं थी। वहां कुछ भी नहीं था, मन बिल्कुल शांत और निर्मल दर्पण की भांति था। बुद्ध ने कहा, इसी बात के लिए वहां भेजा था, कल से वहां जाने की जरूरत नहीं।

अब जीवन में इसी भांति जीओ, जैसे तुम्हारे विचार सारे लोग पढ़ रहे हो, अब जीवन में इसी भांति चलो, जैसे जो भी तुम्हारे सामने है, वह जानता है, तुम्हारे भीतर देख रहा है, इस भांति भीतर चलो और भीतर जागे रहो। जैसे-जैसे जागरण बढ़ेगा, वैसे-वैसे विचार, वासनाएं क्षीण होती चली जाएंगी। जिस दिन जागरण पूर्ण होगा, उस दिन तुम्हारे जीवन में कोई कालिमा, कोई कलश रह जाने वाला नहीं। उस दिन एक आत्मक्रांति हो जाती है। इस स्थिति के जागने को, इस चैतन्य के जागने को मैं कह रहा हूं विवेक का जागरण।

तीन सूत्र मैंने कहेः उन पर विचार करें। संदेह को आने दे, संदेह से भयभीत न हो, सम्यक संदेह की भूमि बनने दे। आत्मनिरीक्षण करें, खुद के जीवन में आंखों को गड़ाएं, खुद के जीवन में खोजे। कुछ छिपाए न खुद के जीवन में सब उघाड़ लें, अपने सामने पूरी तरह नग्न हो जाएं। और तीसरी बात अमूर्च्छित जीवन व्यवहार की दिशा में कुछ प्रयोग करें, होश साधे और मूर्च्छा छोड़े, फिर जागेगा विवेक और जिस दिन विवेक जागेगा, उस दिन जानना कि जीवन के सबसे बड़े सौभाग्य का क्षण निकट आ गया। कल हम तीसरी बात करेंगे सुबह। दो बातें हमने की, श्रद्धा से मुक्ति और विवेक का जागरण और कल हम बात करेंगे, समाधि का अवतरण। समाधि कैसे उतर आए, उसकी चर्चा कल होगी।

ये दो बातें जो अभी हुई हैं, इन पर जो भी प्रश्न होंगे उनके हम रात चर्चा कर लेंगे, अब सुबह के ध्यान के लिए बैठेंगे। थोड़े-थोड़े फासले पर हो जाएं।